नेहरूजीकी वाणी

अर्थात्

[पं० जवाहरलाल नेहरूके अबतकके व्याख्यान
और लेखोंका महत्वपूर्ण संग्रह]

श्री गिरीशचन्द्र जोशी

प्रकाशक :—
आदर्श हिन्दी पुस्तकालय
४१६, अहियापुर,
इलाहाबाद ।

दूसरा संस्करण } फरवरी १९४८ { मूल्य २)

प्रकाशक :—
सुशीलकृष्ण शुक्ल
आदर्श हिन्दी पुस्तकालय
४१६, अहियापुर,
इलाहाबाद ।

मुद्रक—
संगमलाल जायसवाल, जायसवाल प्रेस,
कीटगंज, प्रयाग।

विषय-सूची

विषय		पृष्ठ संख्या

विषय		पृष्ठ संख्या

नेहरूजीकी वाणी

भारत और विश्व

मुझे और मेरे साथियोंको भारत सरकारमें ऊँचे पदोंपर बैठे हुए आज छः दिन हो गये हैं। उस दिन इस प्राचीन देशमें एक नई सरकारका जन्म हुआ, जिसे अन्त:कालीन या अस्थायी सरकार कहते हैं और जो पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करनेकी सीढ़ी है। संसारके सभी भागोंसे और हिन्दुस्तानके हर कोनेसे हमें शुभ कामनाके हजारों सन्देश मिले। फिर भी हमने इस ऐतिहासिक घटनाके मनाये जानेके लिये नहीं कहा बल्कि लोगोंके जोशको दबाया, क्योंकि हम चाहते थे कि वे यह महसूस करें कि हमें अभी और चलना है और हमारे उद्देश्यकी प्राप्ति अभी नहीं हुई। हमारे रास्ते में बहुत मुश्किल और रुकावटें हैं और हो सकता है मंजिल इतनी नजदीक न हो जितनी हम समझते हैं। अब किसी भी तरहकी कमजोरी या ढीलापन हमारे उद्देश्यके लिए घातक होगा।

कलकत्तेकी भयानक दुर्घटना और भाईसे भाईकी निरर्थक लड़ाईके कारण हमारे दिलोंपर बोझ भी था। जिस स्वतन्त्रताकी हमने कामना की थी और जिसके लिये हम पीढ़ियोंसे कष्ट और

मुसीबतें झेलते आये हैं, वह हिन्दुस्थानके सब लोगोंके लिये है, किसी एक गुट या वर्गके या किसी एक धर्मके लोगोंके लिये नहीं। हमारा लक्ष्य सहयोगिताके आधारपर एक व्यवस्था कायम करना है, जिसमें बराबरके साझेदारकी हैसियतसे सभीको जीवनकी जरूरी चीजोंमें हिस्सा मिले। फिर यह झगड़ा, यह आपसी संदेह और डर क्यों ?

आज मैं आपसे सरकारी नीति या भविष्य के कार्यक्रमके बारेमें नहीं—वह तो फिर कभी बताया जायगा—बल्कि उस प्रेम और स्नेहके लिये जो आपने हमें उदारतासे दिया है आपको धन्यवाद देनेके लिये बोल रहा हूँ। इस प्रेम और सहयोगकी भावनाकी हम कद्र करते हैं। किन्तु हमारे सामने जो कठिन दिन है उनमें हमें अधिक जरूरत पड़ेगी। एक मित्रने मुझे यह सन्देश भेजा है। "मेरी प्रार्थना है कि आप सब विपत्तियोंपर विजय पायें राष्ट्रके जहाजके प्रथम चालक! मेरी शुभ कामना आपके साथ है।" कितना अच्छा सन्देश है। पर हमारे आगे अनेक तूफान हैं और हमारा जहाज पुराना, घिसा हुआ और धीमे चलनेवाला है। इसलिये तेज रफ्तारके इस जमाने के वह लायक नहीं है। हमें इसे फेंककर दूसरा जहाज लेना होगा परन्तु जहाज कितना ही पुराना और चालक कैसा ही कमजोर क्यों न हो जब करोड़ों दिल और हाथ अपनी इच्छासे सहायता देनेको तैयार हैं, हम समुद्रके झकोरे सह सकते हैं और भविष्य का भरोसेके साथ मुकाबला कर सकते हैं।

उस भविष्यका आगे ही निर्माण हो रहा है और हमारा पुराना और प्यारा देश हिन्दुस्तान दुख दर्दके बीच एक बार फिर ऊपर उठ रहा है। उसमें आत्म विश्वास है और अपने लक्ष्यमें उसकी श्रद्धा है। वह फिरसे जवान हो गया है और उसकी

आँखोंमें चमक है। मुद्दतों वह एक तंग संसारमें रहा है और आत्म-चिन्तनमें खोया सा रहा है। पर अब उसने विशाल दुनियापर नजर डाली है और संसारकी दूसरी कौमोंकी तरफ दोस्तीका हाथ उठाया है, यद्यपि संसार अभी भी संघर्ष और लड़ाई के विचारोंमें उलझा है।

अन्तःकालीन सरकार बड़ी योजनाका एक भाग है। उस योजनामें विधान परिषद् शामिल है जो आजाद और स्वाधीन हिन्दुस्तानका विधान बनानेके लिये जल्दी ही बैठनवाली है। पूर्ण स्वराज्यके जल्द मिलनेकी आशाके कारण ही हमने यह सरकार बनायी है और हमारा इरादा है हम इस तरह काम करें कि आन्तरिक और विदेशी दोनों मामलोंमें हम व्यवहारमें क्रमशः आजादी हासिल कर सकें। हम अन्तर्राष्ट्रीय कॉन्फ्रेंसोंमें पूरा हिस्सा लेंगे, और यह काम हम किसी दूसरे राष्ट्रके पुछल्लेके रूप में नहीं बल्कि एक आजाद राष्ट्रकी हैसियतसे और अपनी ही नीतिसे करेंगे।

हमारा इरादा दूसरे राष्ट्रोंसे सीधे और गहरे मेल-मिलाप बढ़ाने और दुनियाकी शांति और आजादीके लिये उनसे सहयोग करनेका है। जहाँतक हो सके हम गुटोंकी शक्ति—राजनीतिमें जो एक दूसरेके खिलाफ होती है और जिसके कारण संसारको और भी बड़े संकटमें ढकेल सकती है दूर रहना चाहते हैं। हमारा विश्वास है कि शान्ति और आजादी अविभाज्य है। कहीं भी आजादीका अभाव किसी और जगह शांतिको खतरेमें डाल सकता है और लड़ाई तथा संघर्षके बीज बो सकता है। उपनिवेशों और पराधीन देशों और उनमें रहनेवालोंकी आ-जादीमें हमारी खास दिलचस्पी है। सिद्धान्त रूपसे और व्यवहारमें सब जातियोंको बराबर मौका मिले. इसमें भी हमारी

दिलचस्पी है। जातीयताके नाजी सिद्धान्तका हम तीव्र खंडन करते हैं चाहे वह कहीं भी और किसी भी रूपमें प्रचलित हो। हम किसी पर कब्जा जमाना नहीं चाहते और न दूसरी कौमोंके मुकाबिलेमें खास रियायतें ही चाहते हैं। मगर हम अपने लोगोंके लिये चाहे वे कहीं भी जायें सम्मानपूर्ण और बराबरीका बर्ताव जरूर चाहते हैं। हम उनके खिलाफ भेदभाव नहीं सह सकते।

आन्तरिक संघर्षों क्लेशों और प्रतिद्वन्द्वोंके बावजूद संसार अनिवार्य रूपसे निकटतर सहयोग और संसार व्यापी राष्ट्रमण्डल की स्थापनाकी ओर बढ़ रहा है। ऐसे राष्ट्रमण्डलकी स्थापनाके लिये आजाद हिन्दुस्तान कार्य करेगा—वह राष्ट्रमण्डल जिसमें स्वतन्त्रता, सहयोग और प्रेम हो जिसमें कोई वर्ग या गुट दूसरे गुटका शोषण न करे।

संघर्षोंसे भरे अपने पिछले इतिहासके बावजूद हमें आशा है कि हिन्दुस्तानके साथ इङ्गलैंड और ब्रिटिश राष्ट्रमण्डलके देशों-से मैत्रीपूर्ण और सहयोगपूर्ण सम्बन्ध होंगे। परन्तु राष्ट्रमण्डलके एक भागमें आज जो हो रहा है उसपर नजर डालना ठीक ही होगा। दक्षिणी अफ्रीकामें वहाँकी सरकारने जातीयताके सिद्धान्तको अपनाया है और वहाँ एक जातीय अल्पमतके अत्याचारके विरुद्ध हिन्दुस्तानी वीरतासे मोर्चा ले रहे हैं। अगर यह सिद्धान्त स्वीकार कर लिया गया तो यह दुनियाको व्यापक संघर्षों और सङ्कटोंकी ओर ले जायगा।

अमेरिकाके लोगोंको, जिन्हें विधिने अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंमें निर्णायक स्थान दिया है हम अपनी शुभ कामनाएँ भेजते हैं। हमारा विश्वास है कि यह महान दायित्व सब जगह मानवीय शान्ति और आजादीकी उन्नतिका आधार बनेगा। संसारके उस

महान राष्ट्र सोवियत यूनियनको भी जिसका दायित्व भी नव संसारके निर्माणमें कम नहीं है—हम शुभ कामनाएँ भेजते हैं। रूस और अमेरिका एशियामें हमारे पड़ोसी हैं और अनिवार्य रूप से हमें बहुतसे काम मिलकर करने हैं और एक दूसरेसे व्यवहार करना है।

हम एशियावासी हैं और एशियावाले औरोंकी अपेक्षा हमारे अधिक निकट हैं। भारतकी स्थिति ऐसी है कि वह पश्चिमी, दक्षिणी, पूर्वी एशियाकी धुरी है। बीते कालमें भारत-की सभ्यता का बहाव इन सब देशोंकी ओर रहा और उनका प्रभाव भी भारत पर कई तरहसे पड़ा। वह पुराना सम्बन्ध फिर कायम हो॰ रहा है और आगे भारत और दक्षिण-पूर्वी एशिया और भारत अफगानिस्तान, ईरान और अरब राष्ट्रोंसे फिर से नाता जोड़ने जा रहा है। इन आजाद देशोंके परस्पर सम्बन्धको हमें और बढ़ाना चढ़ाना चाहिये। इंडोनेशियाके स्वतन्त्रता-संग्राममें भारत की गहरी दिलचस्पी रही है और आज हम उस देशको अपनी शुभ कामनाएँ भेजते हैं।

हमारा पड़ोसी चीन, वह बड़ा देश, जिसका अतीत महान था, सदासे हमारा मित्र रहा है। अब यह दोस्ती और भी बढ़ेगी और निभेगी। हमारी यह दिली इच्छा है कि चीनमें वर्तमान झगड़े जल्दी ही खत्म हो जायें और शीघ्र ही उस देशमें एकता और लोकतन्त्र कायम हो ताकि चीन संसारमें शान्ति और प्रगति के कार्यमें हाथ बटा सके।

मैंने घरेलू नीतिके बारेमें कुछ नहीं कहा है और न इस समय कुछ कहनेकी मेरी इच्छा है, परन्तु हमारी घरेलू नीतिका आधार भी वे ही सिद्धान्त होंगे जिन्हें हमने सालोंसे अपनाया है।

हम बिसराये हुए जन साधारणका ख्याल करेंगे और उन्हें मदद देना व उनके जीवनके स्तरको ऊँचा करना हमारा काम होगा। छुआछूत और हर तरहकी जबरन लादी हुई असमानता के खिलाफ हमारी लड़ाई चलेगी और हम खासकर उनकी सहायता करनेकी कोशिश करेंगे जो आर्थिक या किसी दूसरी तरहसे पिछड़े हुए हैं। आज हमारे देशमें करोड़ों जन भूखे, नंगे और बेघरके हैं और बहुतसे भुखमरीके द्वारपर हैं, इस तात्कालिक आवश्यकताको मिटाना हमारा जरूरी और कठिन काम है और हमें आशा है कि दूसरे देश अनाज भेजकर हमारी सहायता करेंगे।

इतना ही जरूरी काम हमारे लिये उस कलहको मिटाना है जिसका आज हिन्दुस्तानमें बोलबाला है। आपसकी लड़ाईसे आजादीके उस भावनाका हम निर्माण न कर सकेंगे, जिसका हम देरसे सपना देखते रहे हैं। राजनीतिक मंचपर चाहे कुछ भी घटनाएँ घटती रहें, हम सबको यहीं रहना है और यहीं मिलकर गुजर करनी है। हिंसा और घृणासे यह आधारभूत बात बदली नहीं जा सकती और न इससे भारतमें होनेवाले परिवर्तन रुक सकते हैं।

विधान परिषदके दलों और गुटबन्दीके बारेमें बहुत गर्मा-गर्म बहस हुई है। हम उन दलोंमें बैठनेको बिल्कुल तैयार हैं—और हम इस बातको स्वीकार भी कर चुके हैं—जिसमें गुटबन्दी के प्रश्नपर विचार होगा। अपने साथियों और अपनी ओरसे मैं यह स्पष्ट कह देना चाहता हूँ कि विधान-परिषदको हम ऐसा अखाड़ा नहीं समझते जहाँ जबर्दस्ती किसीके ऊपर कोई मत लादा जाय। सङ्गठित और सन्तुष्ट भारतके निर्माणका यह मार्ग नहीं है। हमारी तलाश तो ऐसे सच्चे हल ढूढ़नेकी है जिनके

पीछे बहुमतकी सहमति और सद्भावना हो। विधान-परिषद्में हम इसी इरादेसे जायेंगे कि हम विवादग्रस्त मामलोंमें भी समान आधार ढूँढ़ सकें और इसी लिये जो कुछ हुआ है और जो कुछ कठोर शब्द कहे गये हैं, उनके बावजूद भी हमने सहयोग का द्वार खुला रखा है। हम उन्हें भी, जिन्हें हमसे मतभेद है दावत देते हैं कि वे हमारे बराबरके साथी बनकर विधान-परिषद् में आयें। वे किसी भी तरह अपनेको बंधा हुआ न समझें। हो सकता है जब हम मिल कर समान कार्यामें जुटें तो मौजूदा अड़चनें दूर हो जायें।

हिन्दुस्तान आज आगे बढ़ रहा है और पुराना ढाँचा बदल रहा है। बहुत देर तक हम दूसरोंकी कठपुतली बने जमानेकी रफ्तारको बेबस हुए देखते रहे। आज हमारी जनताके हाथमें ताकत आ गई है और हम अपना इतिहास अपनी इच्छाके अनुकूल बना सकेंगे। आइये हम सब मिलकर इस महान् कार्यमें जुटें और हिन्दुस्तानको अपने दिलका तारा बनायें—वह हिन्दुस्तान जो राष्ट्रोंमें महान् और शान्ति तथा प्रगतिके कामोंमें सबसे आगे होगा। द्वार खुला है और भविष्य हम सबको बुला रहा है। हार और जीतका तो सवाल ही नहीं उठता, क्योंकि हम सबको मिल कर साथियोंकी तरह आगे बढ़ना है। या तो सबकी साथही जीत होगी. नहीं तो सभी गड्ढेमें गिरेंगे। असफलताका क्या काम ? आइये हम सब मिलकर सफलताकी ओर, पूर्ण स्वराज्यकी ओर ४० करोड़ जनताके कल्याण और आजादी की ओर बढ़ें। जयहिन्द !

साम्राज्यवाद को चुनौती

पिछले ४४ वर्षोंसे राष्ट्रीय कांग्रेस भारतकी स्वाधीनताके लिये संग्राम करती आ रही है। इस कालमें कुछ स्थिरता किन्तु दृढ़ता पूर्वक इसने राष्ट्रीय आत्म-चेतना जाग्रत की है और राष्ट्रीय आन्दोलन गठित किया है। आज हम संक्रान्तिकालमें एकत्र हुए हैं, हम अपनी ताकत और दुर्बलतासे परिचित हैं आशा तथा आशंका से भविष्यकी ओर देख रहे हैं। ऐसे अवसर पर यह स्वाभाविक है कि हम उनकी याद करें जिन्होंने बिना किसी पुरस्कारकी आशा के अपने प्राणोंकी बलि दे दी ताकि जो उनके पथ पर चलें वे सफलताका आनन्द उठा सकें। बहुतसे पुराने स्वाधीनताके योद्धा आज हमारे साथ नहीं हैं, और हम उनकी महान सृष्टिके सम्मुख खड़े हैं। संसारका यही काम रहा है किन्तु स्वतन्त्र भारतकी नीव डालनेका उन्होंने जो महान कार्य किया है, उसे हममेंसे कोई नहीं भूल सकता और न हममें से कोई भी उन्हे भूल सकते हैं, जिन स्वाधीनता-प्रेमी स्त्री-पुरुषोंने बिना परिणामकी चिन्ता किये अपने नव-जीवनोंकी बलि चढ़ा दी या विदेशी आधिपत्यके विरोध स्वरूप अपनी आशाभरी जवानियों को होम दिया। बहुतसे शहीदोंके नाम तकभी हम नहीं जानते। उन शहीदोंने बिना जन-प्रशंसा की उम्मीदके देशका काम किया और यातनाएँ भोगी और उन्होंने अपने हृदयके रक्तसे भारतकी स्वतंत्रताके नवजात पौधेको सींचा। हममें से बहुत भावापन्न हो गये और समझौतेके चक्करमें पड़ गये, पर वे हिमालयको तरह अड़े खड़े रहे और भारतकी जनताकी स्वाधीनताकी शंख-

ध्वनि करते रहे, उन्होंने संसारमें घोषित कर दिया कि बुरे दिनोंमें भी भारतमें जीवन-ज्योति बाकी है, क्योंकि भारतने दमन और दासता अस्वीकार कर दी है। हमारे राष्ट्रीय आन्दोलनकी इमारत, एकके बाद एक ईंट रखकर बनायी गयी है और बाज-बाज वक्त भारतको अपने नौनिहाल शहीदोंकी लाशों पर बढ़ना पड़ा है। वे हमारे साथ भले ही न हों, मगर उनका अपूर्व साहस हमारे साथ है। और भारत अभी भी यतीन्द्रनाथ और विजाया जैसे शहीद उत्पन्न कर सकता है।

इसी महिमामय पीढ़ीके हम उत्तराधिकारी हैं, और आप मुझे उसीका इन्चार्ज बना रहे है। मैं जानता हूँ मैं इस सम्मान पूर्ण पदपर संयोगवश पहुँच गया हूँ। आप उनको इस आसन पर बैठाना चाहते थे जो आजकी दुनियामें सर्वोपरि हैं, और उनसे बढ़कर उत्तम चुनाव नहीं हो सकता था। लेकिन मेरा भाग्य और वे महापुरुष एक साथ मिल गये और आपकी तथा मेरी इच्छाके खिलाफ महान् उत्तरदायित्व पूर्ण पद पर मुझे बिठा दिया। क्या इस स्थितिमें पहुँचानेके लिये मैं कृतज्ञता प्रगट करूँ? आप बहुतसे महत्वपूर्ण राष्ट्रीय विषयों पर विचार विमर्श करेंगे जो इस समय आपके सामने उपस्थित हैं, और आपके निर्णय भारतीय इतिहास की धारा बदल दे सकते हैं, लेकिन स्मरण रखिये, आप ही अकेले नहीं है जिनके सामने समस्याएँ उपस्थित है, तमाम दुनिया ही आज एक महान् प्रश्न बना हुआ है, हर देश और हर देशवासीके सामने समस्याएँ हैं। विश्वासका युग जिसमें आराम और स्थायित्व रहता है—बीत चुका और हर विषयमें सवाल पैदा हो गया है, हमारे पुरुषोंका वह चाहे जितना सनातन और पवित्र लगता रहा हो। हर जगह सन्देह और बेचैनी है और राज्य तथा समाजकी जड़ें हिल

गयीं हैं। स्वाधीनता, न्याय, सम्पत्ति तथा परिवार सम्बन्धी पूर्व प्रतिष्ठित विचारोंपर आक्रमण हो रहा है और परिणाम अधरमें लटक रहा है। हम प्राचीन इतिहासके अन्तःकालमें हैं जब कि सारा संसार ही संक्रान्तिकालमें जो कि एक नये आर्डर को जन्म देना है।

यह कोई नहीं कह सकता कि भविष्यमें क्या होगा,' लेकिन हम विश्वास पूर्वक कह सकते हैं कि एशिया और भारत भी संसार की भावानीतिमें निर्णायक पार्ट अदा करेगा। युरोपियन आधिपत्यके दिनका अवसान हो रहा है। अब युरोप संसारकी गतिविधि और दिलचस्पीका केन्द्र नहीं रह गया। भविष्य एशिया और अमेरिकाके हाथमें है। झूठे और अपूर्ण इतिहासके कारण बहुतसे सोचने लगे कि युरोपने हमेशा ही बाकी संसारपर आधिपत्य रखा, हम भूल गये कि भारत ही है जिसने महान् सिकन्दरकी सैनिक शक्ति छिन्न-भिन्न की थी। विचारोंमें एशिया—खास कर भारत हमेशा महिमामय रहा है। विचारोंकी तरह कामोंमें भी एशियाका इतिहास उत्तम रहा है। लेकिन हममें से कोई नहीं चाहता कि एशिया या यूरोप संसारके देशोंको फिर रौंदे।

भारत आज विश्वान्दोलन का भाग है। सिर्फ चीन, टर्की फारस और मिस्र ही नहीं, पश्चिमके देश भी इस आन्दोलन में भाग ले रहे हैं, भारत इस आन्दोलनसे अपनेको अलग नहीं रख सकता। हमारी अपनी सख्त और उलझी हुई समस्याएँ हैं। और हम उन्हें छोड़कर संसार पर असर डालनेवाली समस्याओंका आश्रय नहीं ले सकते। लेकिन अगर हम संसार की उपेक्षा करें तो यह मुमकिन नहीं है। आजकी सभ्यता किसी देश या जाति की सृष्टि नहीं है और न उस पर किसी एकका

एकाधिकार है। इसमें सभी देशोंका दान है और इसे विभिन्न देशोंने अपनी आवश्यकता के अनुसार अपनाया है। अगर भारतको संसारको कुछ सन्देश देना है, जैसा कि मैं मानता हूँ कि देना है तो उसे, अन्य जातियोंसे भी बहुत कुछ लेना और सीखना होगा।

जब कि सब कुछ बदल रहा है, भारतीय इतिहासकी धारा का स्मरण रखना उत्तम होगा। हजारों वर्षोंके परिवर्तन, सङ्घर्ष और अनेक विदेशी प्रभावका मुकाबिला करता हुआ भारतका सामाजिक ढाँचा जिस स्थिरतासे खड़ा रहा वह जितना आश्चर्य जनक है, उससे भी आश्चर्य जनक बहुत सी बातें इतिहासमें हैं। समाज इसलिये बना रहा है कि वह बराबर या तो विदेशी प्रभावको हजम करता गया या उसे सहता गया। उसका उद्देश्य विभिन्न संस्कृतियोंका विनाश नहीं, सामञ्जस्य था। आर्य और अनार्य एक दूसरेकी संस्कृति अधिकाधिक स्वीकार कर एक जगह बस गये और पारसियों जैसे बाहरसे आनेवाले लोगों का भी स्वागत हुआ और उन्हें भी स्थान मिल गया। मुसल-मानोंके आगमनसे उस सामञ्जस्यमें बाधा पहुँची किन्तु भारत ने सामञ्जस्य स्थापित करनेकी चेष्टाकी और बहुत हद तक सफलता प्राप्त की। दुर्भाग्यवश पूर्ण सामञ्जस्य स्थापित होनेके पहले ही राजनैतिक ढाँचा टूट गया अँग्रेज आ गये और हम हार गये।

स्थायी समाज निर्माणमें भारतकी सफलता महान् थी किन्तु एक महत्वपूर्ण विषयमें वह सफल न हो सका और इसीलिये वह हार गया और विजित पड़ा रहा। सामानताकी समस्याका कोई हल नहीं निकाला गया। भारतने समानताकी जान बूझ कर उपेक्षा की और असमानता पर अपने समाजकी इमारत

बनायी, इस नीतिके परिणाम स्वरूप कल तक करोड़ों जनता दबी पड़ी थी जिसे विकाशका नाममात्र का अवसर प्राप्त था।

जिस समय युरोपमें धर्मके नामपर युद्ध हो रहे थे और ईसाई ईसाके नामपर एक दूसरेका गला काट रहे थे, भारत सहिष्णु था गोकि आज सहिष्णुता बहुत कम है। कुछ धार्मिक स्वाधीनता पानेके बाद, युरोपने राजनैतिक स्वाधीनता व राजनैतिक तथा कानूनी समानता प्राप्त की। इसके बाद युरोपने अनुभव किया कि आर्थिक स्वाधीनता और समानताके बिना यह सब नगण्य है। इसलिए, आजकल राजनीतिका विशेष महत्व नहीं है, सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न सामाजिक और आर्थिक समानताका है।

भारतको भी इस समस्याका समाधान करना है, जब तक भारत इस समस्याका समाधान नहीं कर लेता, तब तक भारतकी राजनैतिक और सामाजिक इमारत स्थायी नहीं हो सकती। इस समाधानके लिये दूसरे देशका अनुकरण करना आवश्यक नहीं है। यह समाधान भारतके विचार और संस्कृतिके अनुकूल होना चाहिये। जब समस्याका समाधान हो जायगा तो विभिन्न जातियोंके मतभेद जो हमें परेशान करते हैं और हमारी स्वाधीनताको पीछे रखते हैं, अपने आप अदृश्य हो जायंगे।

यद्यपि वास्तविक मतभेद मिट चुके हैं, फिर भी पारस्परिक भय अविश्वास सन्देह बना हुआ है जो अनैक्य (Discard) के बीज बोता है। हमारे सामने फर्कोंको हटानेकी समस्या नहीं है। वे रह सकते हैं और बहुमुखी संस्कृतिको समृद्ध कर सकते हैं। समस्या यह है कि भय और सन्देह कैसे मिटाया जाय? पिछले साल सर्व दल सम्मेलन द्वारा प्रयत्न किया गया था और बहुत कुछ सफलता भी मिली थी लेकिन हमें मानना पड़ेगा कि पूर्ण

सफलता नहीं मिली। बहुतसे सिख और मुस्लिम बन्धुओंने समाधानोंका विरोध किया और आँकड़ों तथा प्रतिशतोंपर भावुकता प्रगट की गयी। भय और अविश्वास भगानेमें तर्क और कारण, कमजोर हथियार हैं। विश्वास और उदारतासे ही भय और अविश्वास भगाया जा सकता है। मैं आशा करता हूँ कि विभिन्न जातियों के नेताओंमें विश्वास और उदारता काफी होगी। हम अपने सम्प्रदायके लिये क्या पा सकते हैं, जबतक कि हम गुलाम देशमें गुलाम बने हुए हैं। और अगर हम एक बार गुलामीकी जंजीरें हटाकर स्वतंत्र वातावरणमें साँस ले सकें तो क्या खो बैठेंगे? क्या हम अपने थोड़ेसे अधिकारों और सुविधाओंकी रक्षाके लिये बाहिरीको चाहते हैं, जो हमारा नहीं है और जिसने हमें बंधन में रखा है। जो हमारे स्वाधीनताके हकको अस्वीकार कर रहे हैं? कोई बहुमत दृढ़ अल्पमतको नहीं दबा सकता और व्यवस्थापिका सभाओंमें सोटें बढ़ा देनेसे ही किसी अल्पमतकी अच्छी तरह रक्षा नहीं हो सकती है। हमें याद रखना चाहिये कि आजकल प्राय हर जगह अल्पमतके पास समृद्धि और शक्ति है और बहुमत पर आधिपत्य जमाये हुए है।

धार्मिक अन्ध भक्ति या सम्प्रदायवाद मैं किसी रूपमें पसन्द नहीं करता। मैं नहीं समझ सकता कि राजनैतिक और आर्थिक अधिकार, धर्म या जातिपर आश्रित क्यों हो? धार्मिक और सांस्कृतिक स्वतंत्रताका हक मैं मान सकता हूँ, जब कि भारतने हमेशा धार्मिक और सांस्कृतिक स्वतन्त्रता स्वीकार की है तब उसका जारी रखना कुछ मुश्किल नहीं है। हमे सिर्फ भय और अविश्वासको भगानेका रास्ता पाना है, जो हमारे क्षितिज पर छाया हुआ है। गुलाम देशकी राजनीति भय और घृणाके

आधार पर खड़ी रहती है, हम बहुत समय तक गुलाम रहे हैं, इसलिये आसानीसे उससे छुटकारा नहीं पा सकते।

मैं हिन्दू पैदा हुआ हूँ लेकिन कह नहीं सकता कि कहाँतक मैं अपनेको हिन्दू कह सकता हूँ और हिन्दुओंकी तरफसे बोल सकता हूँ लेकिन भारतमें अभी भी जन्मका महत्व है और जन्मके अधिकारसे मैं हिन्दू नेताओंसे कहता हूँ कि वे उदारतामें आगे बढ़ें। उदारता, सिर्फ नैतिक गुण ही नहीं, बल्कि यह अच्छी राजनीति भी है। फिर मैं यह अनुमान भी नहीं कर सकता कि स्वतन्त्र भारतमें हिन्दू शक्ति हीन होंगे। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं अपने मुस्लिम और सिख मित्रोंसे प्रसन्नतासे कह सकता हूँ वे जो चाहे ले सकते हैं। मैं जानता हूँ, वह समय आनेवाला है जब ये केवल नगण्य अर्थ रखेंगे और हमारे संग्राम आर्थिक आधार पर होंगे। इस बीचमें हमारे आपसी बन्दोबस्त मामूली बात हैं, बशर्ते कि वे हम ऐसे बन्धन में न बंधे जो हमारी भावी प्रगतिमें रुकावट डालें।

वह समय आ गया है कि सर्वदल सम्मेलनकी रिपोर्ट अलग रखकर हमें अपने लक्ष्यकी ओर बढ़ना है। सर्वदल सम्मेलन की योजना स्वीकार करनेके लिये एक सालका समय दिया गया था जो प्राय समाप्त हो चला। अब कांग्रेसके सामने स्वाधीनता की घोषणा करने और उसे प्राप्त करनेके साधनोंकी घोषणाका सवाल है।

पिछले साल न डोमीनियन स्टेटस आया न सर्वदली विधान बना। बल्कि राष्ट्रीय और मजदूर आन्दोलनोंको दमन और यातनाओंका शिकार होना पड़ा, कितने ही हमारे साथी विदेशी शक्ति द्वारा हमसे जबरन अलग कर दिये गये हैं। कितने ही मातृ भूमिसे बाहर कर दिये गये हैं और उन्हें जन्मभूमि

लौटनेकी सुविधाएँ नहीं दी जाती हैं। विदेशी सेना अपने फौलादी शिकंजे में देशको कसे हुए है और शासकका कोड़ा, सर उठानेवालेकी खाल खींचनेके लिये तना हुआ है। कलकत्ता प्रस्तावका जवाब साफ और निश्चित है।

हालमें ही शान्तका प्रस्ताव सामने आया है। ब्रिटिश सरकारकी तरफसे वायसरायने कहा है भारतके भावी विधानके सम्बन्धमें भारतीय नेता बुलाये जायँगे। वायसरायका मतलब अच्छा है, उनकी भाषा भी शान्तिकी भाषा है। मगर वायसरायकी सदिच्छा तथा नम्रतापूर्ण वाक्यावलि भी जो कठोर तथ्य हमारे सामने हैं उन्हें नहीं हटा सकती। ब्रिटेनकी कूटनीतिपूर्ण चालोंसे सावधान रहनेके लिये हमने पर्याप्त अनुभव हासिल कर लिया है। ब्रिटिश सरकारने जो आफर दिया है वह अस्पष्ट है, उसमें किसी कार्यवाही की घोषणा नहीं है। विभिन्न राजनैतिक दलोंके नेताओंने जमा होकर इसपर विचार किया और इसकी उत्तमोत्तम व्याख्याकी, क्योंकि वे शान्ति चाहते हैं और आधे रास्ते तक चलकर समझौता करना चाहते हैं। नम्रतापूर्ण शब्दोंमें उन्होंने अपनी मुख्य शर्तें भी रख दीं। इसमें बहुतसे जो स्वाधीनता चाहते हैं और जिन्हें विश्वास है कि यह आफर हमारे अन्दर बिभिन्नता पैदा करनेके लिये है। क्या शान्तिका बहुत मामूली अवसर रहते हुए भयानक राष्ट्रीय संग्राममें भाग लेनेमें हम ठीक थे, जिसका परिणाम भीषण यातनाएँ हैं। अपने हृदयोंको अच्छी तरह टटोलनेके बाद हमने दस्तखत किये थे, मैं आज भी नहीं जानता, हमने ठीक किया या गलत। इसके बाद ब्रिटिश पार्लीमेंट में तथा अन्यत्र जो कुछ कहा गया, उससे सन्देह दूर हो गया कि आफरका वास्तविक अर्थ क्या है। तिसपर भी आपकी कार्य कारिणीने समझौतेका

द्वार खुला रखा और निर्णय करनेका भार कांग्रेसपर छोड़ दिया।

पिछले दिनों हाउस आफ कामन्समें इस विषयमें फिर बहस हुई, और भारत मन्त्रीने कहा, सिर्फ शब्दों द्वारा ही नहीं, बल्कि कामों द्वारा, भारतके सम्बन्धमें अपनी सच्चाईका सबूत विभिन्न ब्रिटिश सरकारोंने बराबर दिया है। हमें बेजबुड बेनकी भारत के लिये कुछ करनेकी इच्छाको मानना चाहिये, लेकिन पार्लामेण्टमें उनका व्याख्यान तथा औरोंके भाषण हमें आगे नहीं ले जाते। "कार्यरूपमें औपनिवेशिक स्वराज्य" जिसके प्रति हमारा ध्यान खींचा गया हमारे लिए एक Snare रहा है। और जो निश्चय ही भारतका शोषण कम नहीं करता। इसरूपमें औपनिवेशिक स्वराज्य और १० वर्ष पुराने वैधानिक सुधारोंके कारण भारतीय जनताका बोझ और भी बढ़ गया है। हमारी माँग, लन्दनमें हाई कमिश्नर, लीग आफ नेशसन्समें भारतीय प्रतिनिधि, स्टोर्सकी खरीददारी, भारतीय गवर्नर या ऊँचे अफसरान नहीं है। हम भारतके शोपणका अन्त चाहते हैं और शक्तिकी वास्तविकता चाहते हैं, आफिसोंकी नौकरी नहीं चाहते।

मिस्टर वेजउड बेनने पिछली पीढ़ीकी सफलताओंका वर्णन किया है, वे इसके साथ पंजाबका मार्शलला, जालियाँवाला बागका गोलीकाण्ड, कार्यरूपमें औपनिवेशिक स्वराज्यके दमन और शोषणको भी जोड़ सकते थे। उन्होंने हमें दिखलाया कि औपनिवेशिक स्वराज्यका हमारे लिये और क्या अर्थ होगा। इसका अर्थ होगा, मुठ्ठी भर भारतीयोंके अधिकारकी छाया साथही अधिक दमन और शोषण।

अब यह कांग्रेस क्या करेगी? सन्धिकी शर्तें वैसी ही पड़ी हैं। क्या हम सहयोग कर सकते हैं, जब तक कि वास्तविक

स्वाधीनताकी गारण्टी न मिले ? क्या हम सहयोग कर सकते हैं जब कि हमारे साथी जेलोंमें हैं। दमन चक्र चल रहा है। क्या हम सहयोग कर सकते हैं, जबतक हम यह न समझ लें कि दर असल वास्तविक शान्ति स्थापित हो रही है, सिर्फ सुविधा नहीं ली जा रही है। बायोनेटकी नोकसे शान्ति स्थापित नहीं हो सकती। अगर हमारे ऊपर विदेशियोंका आधिपत्य जारी रहता है तो हमें कमसे कम उसकी स्वीकृति नहीं देना चाहिये।

अगर कलकत्ता प्रस्तावका मूल्य है तो आज हमारे सामने एक लक्ष्य है—स्वाधीनता ! आजकी दुनियामें स्वाधीनता कोई सुखद शब्द नहीं है, वर्तमान सभ्यता संकीर्ण राष्ट्रीयताका मजा चख चुकी, और वह विस्तृत सहयोग पारस्परिक सहयोगकी तरफ बढ़ रही है और हम स्वाधीनता शब्द का व्यवहार इस अर्थमें नहीं करते कि वह वृहत आदर्शके प्रति आक्रमणशील हो। हमारे लिये स्वाधीनताका अर्थ है—ब्रिटिश साम्राज्यवाद और ब्रिटिश आधिपत्यसे पूर्ण मुक्ति। मेरा विश्वास है कि स्वाधीनता प्राप्त करने पर भारत, विश्व सहयोग और संघका स्वागत करेगा और अपनी स्वाधीनताका एक भाग भी वृहत्तर संघको दे देगा जिसका वह बराबरीका सदस्य होगा।

ब्रिटिश साम्राज्य, आज इस तरहका ग्रूप नहीं है, और तबतक नहीं हो सकता जबतक उसका करोड़ोंपर आधिपत्य और वह मूल निवासियोंकी इच्छाके विरुद्ध पृथ्वीके बहुत बड़े भू-भाग पर अधिकार जमाये हुए है। वह कभी भी सच्चा कामनवेल्थ नहीं हो सकता जब तक कि उसका आधार साम्राज्यवाद है और दूसरोंका शोषण उसका सहारा है। आज ब्रिटिश साम्राज्यका राजनैतिक विनाश हो रहा है। साउथ अफ्रीका, कुटुम्बका प्रसन्न सदस्य नहीं है और न आयर्लैंड सदस्य रहना चाहता है, मिश्र

अलग जा रहा है और-भारत बराबरका सदस्य नहीं हो सकता जबतक कि साम्राज्यवादका बिलकुल परित्याग नहीं कर दिया जाता। जबतक ऐसा नहीं होता, साम्राज्यान्तर्गत भारतकी स्थिति अधीन-सी होगी और उसका शोषण जारी रहेगा। ब्रिटिश साम्राज्यका आलिंगन खतरनाक है। यह मृत्युका आलिंगन है।

विश्वशान्ति और शान्तिके लिये राष्ट्रोंमें सन्धियोंकी चर्चा है, फिर अस्त्र-शस्त्र बन रहे हैं, शान्तिकी देवीको सिर्फ मीठे शब्दों से प्रसन्न किया जा रहा है। लेकिन शान्ति तभी आ सकती है जब युद्धके कारण मिटा दिये जाँय। जब तक एक देशपर दूसरे का आधिपत्य है, एक श्रेणी दूसरी श्रेणीका शोषण करती है। तब तक वर्तमान शासन भंग किया जायगा और शान्ति स्थापित नहीं होगी। साम्राज्यवाद और पूँजीवादसे शान्ति कभी स्थापित नहीं हो सकती और चूंकि ब्रिटिश साम्राज्यवाद इन दोनोंका हिमायती है और शोषण पर आश्रित है अतः हमारे लिये इच्छापूर्वक साम्राज्यान्तर्गत कोई स्थान नहीं हो सकता। जब तक जनताका बोझ हल्का न किया जाय हमारे लिये कोई लाभ किसी कामका नहीं है। साम्राज्यवादका बोझ बहुत भारी है और जनता उसे ढोना नहीं चाहती। उसकी पीठ टूट और टेढ़ी हो गयी है और उसकी हिम्मत खतम हो चुकी है। जब तक शोषणका भार बना हुआ है, कामनवेल्थका पार्टनर कैसे बना जा सकता है? बहुत-सी समस्यायें जो हमारे सामने हैं, वह ब्रिटिश सरकार द्वारा पैदा की गयीं या बढ़ायी गयी हैं। देशी रियासतोंके शासकोंके स्वार्थ, ब्रिटिश अफसरों, भारतीय और ब्रिटिश पूँजीके स्वार्थ; बड़ी-बड़ी जागीरदारियाँ हमारे ऊपर लाद दी गयी हैं और वे अब अपनी रक्षा चाहते हैं लेकिन जिन

करोड़ों देशवासियोंको जिन्हें दर असल रक्षाकी जरूरत है, वे वाक्यहीन हैं और उनके हिमायती भी कम हैं। जब तक कि ब्रिटिश साम्राज्य भारतमें है, वह इन स्वार्थोंकी रक्षा करेगा और औरोंको जन्म देगा और हर एक हमारे रास्तेमें रुकावट होगा। सरकारकी आवश्यकता सिर्फ दमनके लिये है और इसके निशान सिक्रेट सर्विस, एजेन्ट, उत्तेजना देने वाले लोग, इन्फारमर और अप्रूवर हैं।

स्वाधीनता और औपनिवेशिक स्वराज्यपर काफी बहस हो चुकी है, शब्दोंपर काफी झगड़ चुके हैं। असली चीज शक्ति प्राप्त करना है, आप उसे चाहे जिस नामसे पुकारें। मैं नहीं समझता कि औपनिवेशिक स्वराज्य किसी भी रूपमें भारतको असली क्षमता देगा। इसकी कसौटी विदेशी सेनाका पूर्णरूपसे भारतसे हटाया जाना और आर्थिक कण्ट्रालकी समाप्ति है। हमें इसीपर ध्यान देना चाहिये, बाकी सब अपने आप आ जायगा।

हम आज भारतकी पूर्ण स्वाधीनताकी माँग करते हैं। यह कांग्रेस न मानती है और न मान सकती है कि ब्रिटिश पार्लामेंट किसी भी तरह डिक्टेट करानेका हक रखती है। हम उससे कोई अपील नहीं करते। हम विश्व पार्लामेंट और उसकी आत्मासे अपील करते हैं और उसके सामने हम घोषित करते हैं, भारत अब और किसी विदेशी आधिपत्यको स्वीकार नहीं करता। आज या कल हम इतने मजबूत भले ही न हों कि अपनी इच्छा कार्यरूपमें परिणत कर सकें। हम अपनी कमजोरी अच्छी तरह जानते हैं और अपनी ताकतकी डींग नहीं हांकना चाहते। लेकिन इङ्गलैण्ड या कोई भी हमारे संकल्पका अर्थ और उसकी दृढ़ता समझनेमें भूल न करे। परिणामोंकी पूर्ण जानकारीके साथ हम तहेदिलसे यह संकल्प ग्रहण करेंगे और उससे पीछे नहीं

हटेंगे। एक महान राष्ट्रका अग्रगमन नहीं रोका जा सकता जब कि एक बार उसका दिमाग साफ हो गया और उसने कोई संकल्प कर लिया; अगर आज हम असफल हुए तो कल सफलता भले ही न मिले पर परसों सफलता आयगी ही।

हम भूल और कष्टसे छुटकारा पाकर शान्ति और सुविधा चाहते हैं ताकि देशके लिये रचनात्मक कार्य कर सकें। क्या हम अपने घरोंका तोड़ा जाना या अपने जवानोंका जेल जाना पसन्द करते हैं? क्या मजदूर हड़तालकर भूखों मरना चाहते हैं? वह मजबूर होकर ही ऐसा करता है, जब और कोई रास्ता नहीं रह जाता। हम राष्ट्रीय संग्रामके पथपर अग्रसर होते हैं इसीलिये कि शान्तिका कोई सम्मान जनक रास्ता बाकी बच नहीं रहा है। लेकिन हम शान्ति चाहते हैं और हमारा हाथ हमेशा उनकी ओर बढ़ा रहेगा, जो उसे ग्रहण करना चाहेंगे, लेकिन इस हाथके पीछे वह शरीर रहेगा जो अन्यायके सामने भुकेगा और ऐसा मस्तिष्क रहेगा जो किसी महत्वपूर्ण सिद्धान्त का समर्पण न करेगा।

संग्राम हमारे सामने है, भावी विधान निश्चय करनेका समय नहीं है। पिछले दो ढाई वर्षोंमें हमने अनेक विधान बनाये। सर्वदल सम्मेलनने जो विधान बनाया, उसे कांग्रेसने एक सालके लिये स्वीकार कर लिया। इस योजना बनानेमें जो श्रम लगा वह बरबाद नहीं हुआ, भारतको उससे लाभ हुआ। लेकिन साल भर बीत गया, हमें नयी परिस्थितियोंका सामना करना पड़ा है जो कार्य चाहती है विधान निर्माण नहीं।

मुझे स्पष्ट स्वीकार करना चाहिये कि मैं समाजवादी और लोकतंत्रवादी हूँ। मैं बादशाहों, राजाओं या उद्योगपतियोंमें विश्वास नहीं करता, जिनका प्रभाव पुराने राजाओंसे अधिक

है और जिनके तरीके मध्यकालीन आभिजात्योंसे अधिक विस्तृत और प्रभावशाली हैं। मैं मानता हूँ—राष्ट्रीय कांग्रेस जैसी है, उसके लिये चाहे यह सम्भव न हो सके कि देशकी वर्तमान स्थितिमें वह पूर्णरूपसे सोशलिष्ट कार्यक्रम अपना सके। हमें यह समझ लेना चाहिये कि समाजवादका दर्शन संसारके सामाजिक ढाचेमें प्रवेश कर गया है। सवाल सिर्फ गति और तौर तरीकेका रह गया है। भारतको भी उस रास्तेसे ही जाना पड़ेगा, अगर उसे अपनी गरीबी और असमानता मिटानी है, चाहे वह तरीका अपने आदर्श और अपनी जातिकी योग्यताके अनुसार अपना ले।

हमारे सामने तीन मुख्य समस्याएँ हैं—(१) अल्प मत, भारतीय रियासतें, (३) मजदूर और किसान। मैंने अल्पमतके सम्बन्धमें अपना मत व्यक्त कर दिया है। मैं फिर दोहराता हूँ कि हमे अपने शब्दों और कामोंसे पूर्ण आश्वासन देना चाहिये कि उनकी संस्कृति और परम्परा सुरक्षित रहेगी।

भारतीय रियासतें—भारतके लिये ये बीते युगकी निशानियाँ हैं। बहुतसे नरेश अभी भी राजाके दैवी अधिकारमें विश्वास करते हैं—चाहे वह कठपुतले ही हों—अपनी रियासत और उसके सब कुछको अपनी सम्पत्ति समझते हैं। कुछमें उत्तर दायित्वका ज्ञान है और अपनी जनताकी सेवा करना चाहते हैं पर बहुतोंके सामने भविष्य नहीं है। इसके लिये उन्हें दोष देना अनुपयुक्त है क्योंकि वह प्रणाली ही दूषित है और वह प्रणाली ही नष्ट हो जानी चाहिये। एक नरेशने साफ कहा है—भारत और इंगलैण्डके युद्धमें वे इंगलैण्डका पक्ष ग्रहण करेंगे और अपनी मातृ-भूमिके विरुद्ध लड़ेंगे। यही उनकी देशभक्ति है। ऐसी अवस्थामें आश्चर्य क्या है कि ये किसी भी कांफ्रेसमें अपनी

प्रजा का खुद प्रतिनिधित्व करते हैं और ब्रिटिश सरकार उनके दावेको स्वीकार करती है, वे कहते हैं उनकी प्रजा कुछ भी नहीं बोल सकती। भारतीय रियासतें भारतसे अलग होकर नहीं रह सकतीं और रियासतोंके शासक अगर वे अपनी सीमाओंको स्वीकार नहीं करते तो उन्हें उसी रास्ते जाना होगा, जिस रास्ते इसी प्रकार सोचनेवाले गये। रियासतोंके भविष्य-निर्णयका अधिकार प्रजा और राजाको है। कांग्रेस आत्मनिर्णयके अधिकारको मानती है और वह रियासती प्रजाके अधिकारको अस्वीकार नहीं कर सकती। कांग्रेस ऐसे शासकोंके साथ बातचीत करनेके लिये पूरी तरह तैयार है जो ऐसा करना चाहते हैं और ऐसे तरीके निकालना चाहते हैं कि संक्रान्ति काल आकस्मिक न हो। लेकिन किसी भी हालतमें रियासती प्रजाकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

हमारी तीसरी समस्या सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि भारतके माने हैं किसान मजदूर जहाँ तक हम उन्हें ऊँचा उठा सकेंगे और उनकी माँगें पूरी कर सकेंगे, हम अपने उद्देश्यमें सफल होंगे। हमारे राष्ट्रीय आन्दोलनकी शक्ति उनके सहयोग पर आश्रित है, जितना ही अधिक उनका सहयोग मिलेगा, उतना ही अधिक हमारा आन्दोलन शक्तिशाली होगा। हम उन्हें अपने साथ तभी ले सकते हैं जब हम उनके कार्यका अपना कार्य बना लें, जो दर असल देशका काम है। कहा गया है, कांग्रेसको पूँजी और श्रम, जमींदार और किसानके बीचका पलड़ा बराबर रखना चाहिये। किन्तु पलड़ा एक तरफ बहुत भारी हो गया और इस अवस्थाको बनाये रखना, अन्याय और शोषणको बनाये रखना है। इस अन्यायको दूर करनेका एकमात्र रास्ता है, किसी श्रेणीका आधिपत्य न रहे। बम्बईमें कुछ मास पूर्व अ०

भा० कांग्रेसने इस आदर्शको स्वीकार कर लिया है। आशा है, कांग्रेस इसपर स्वीकृतिकी मोहर लगा देगी और ऐसी योजना बनाएगी जो शीघ्र ही काममें लायी जाय।

इस कार्यक्रममें सम्पूर्ण कांग्रेस शायद बहुत आगे न जा सके। लेकिन उसे अन्तिम लक्ष्य सामने रखना चाहिये और उसके लिये कार्य करना चाहिये। मजदूरी बढ़ाने या सहायताका सवाल नहीं है। व्यवसाय या जमींदारीमें अभिभावकत्व धर्मादेके सिवा कुछ नहीं है और वह अपनी तमाम बुराइयोंको लिये आता है तथा वास्तविक बुराइयोंको दूर करनेमें पूर्ण असफल होता है। ट्रस्टीशिपका विचार—जिसकी वकालत कुछ लोग करते हैं, इसी प्रकार निरर्थक है। क्योंकि ट्रस्टीशिपका अर्थ है कि अच्छे या बुरेकी ताकत स्वयम् निर्वाचित ट्रस्टीमें रहे, और ट्रस्टी अपनी इच्छाके अनुसार इसका उपयोग करे। एकमात्र राष्ट्रकी ट्रस्टीशिप ही उचित हो सकती है, व्यक्तिगत या दलगत ट्रस्टीशिप नहीं। बहुतसे अँग्रेज ईमानदारीसे अपने आपको भारतका ट्रस्टी समझते हैं, फिर भी उन्होंने भारतको किस शोचनीय अवस्था तक पहुँचा दिया है।

हमें यह निश्चय करना है कि उद्योग-धन्धे किसके लाभके लिये चलाये जाँय और देशके धन-धान्यसे किनका हित हो! आज जो प्रचुर धन धान्य उत्पन्न होता है वह किसान या खेतमें काम करने वालेके लिये नहीं है और उद्योग-धन्धों का लक्ष्य करोड़पति पैदा करना समझा जाता है। फसल चाहे जितनी अधिक हो और उद्योग-धन्धोंके डिवीडेन्ड कितने ही अधिक क्यों न हों, फिर भी मट्टीकी झोपड़ियाँ, भूखे नंगे जन समुदाय, हमारी सामाजिक प्रणाली और ब्रिटिश साम्राज्यकी कीर्ति पताका फहरा रहे हैं!

इसलिये हमारा आर्थिक कार्यक्रम मानवीय दृष्टिकोणके आधार पर आधारित होना चाहिये और धनके लिये मानव-बलिदान नहीं होना चाहिये। अगर हमारा उद्योग काम करने वालोंको भूखों मारे बिना न चल सके तो उस उद्योगको बन्द कर देना चाहिये। अगर खेतमें काम करने वालेको भर पेट अनाज नहीं मिलता तो, किसानके भागसे उसे बंचित करनेवाले मध्यस्थ को शेष होना चाहिये। कारखाने और खेतमें काम करने वालेको कमसे कम इतना मिलना चाहिये कि वह साधारणतया आरामसे जीवन निर्वाह कर सके और कामके घण्टे उतने हों कि उनकी शारीरिक ताकत और मानसिक बल क्षीण न हो। सर्व दल सम्मेलनने यह सिद्धान्त मान लिया है और उसे अपनी सिफारिशोंमें शामिल कर लिया है। मुझे आशा है, कांग्रेस भी यही करेगी। और साथ ही उसके स्वाभाविक परिणामोंको भी स्वीकार करेगी। इसके अलावा वह उत्तम जीवनके लिये श्रमिक श्रेणीकी प्रसिद्ध माँगोंको स्वीकार करेगी, और उस दिनके लिये तैयार होगी जिस दिन वह कोआपरेटिव आधार पर देशके उद्योगधन्धोंका नियंत्रण कर सकेगी।

लेकिन हमें यह भूलना न चाहिये कि उद्योग-धन्धोंके श्रमिक भारतका एक छोटा भाग है, जोकि यह तेजीसे ऐसी ताकतका रूप धारण कर रहा है जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती, मगर वे किसान ही हैं जो सहायताके लिये करुण पुकार कर रहे हैं। हमारा कार्यक्रम ऐसा होना चाहिये जो किसानोंकी दुरवस्था सुधारे। जमीन सम्बन्धी कानूनोंमें महान् परिवर्तनों द्वारा ही उनकी वास्तविक सहायता की जा सकती है, जमीनके स्वत्व सम्बन्धी नियमों में हमें परिवर्तन करना ही होगा। हमारी कांग्रेसमें बहुतसे जमीन्दार भी है और हम उनका स्वागत करते

हैं, लेकिन उन्हें अनुभव करना चाहिये कि विस्तृत भूभाग पर व्यक्तिगत आधिपत्यकी प्रणाली, जो मध्यकालीन युरोपीय प्रणालीसे मिलती-जुलती है, सारे संसारसे तेजीसे मिटती जा रही है। जो देश पूर्जीवादके किले समझे जाते हैं उन देशोंमें भी जमीदारियां टुकड़े टुकड़े कर किसानोंमें बाँटी जा रही हैं, जो किसान वहाँ काम कर रहे हैं। भारतमें भी बहुतसे भू-भागों पर किसानोंका स्वामित्व है, हमें सारे देशमें इसे बढ़ाना है। हमें आशा है कि इस कार्य में कमसे कम बड़े जमीन्दारोंका सहयोग मिलेगा।

कांग्रेसके इस वार्षिक अधिवेशनमें संभव नही है कि विस्तृत आर्थिक कायक्रमकी रूप रेखा बनायी जाय। कांग्रेस सिर्फ मुख्य सिद्धान्तोंको पेशकर, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीसे कह सकती है कि वह ट्रेड यूनियन काग्रेस तथा इस विषयमें घनिष्ट सम्बन्ध रखनेवाले सङ्घोंके प्रतिनिधियोंके सहयोगसे विस्तृत कार्यक्रम बनाये। मुझे आशा है, कांग्रेस और ट्रेड यूनियन कांग्रेसमें सहयोग बढ़ेगा और भावी संग्राममें ये दोनों संस्थाएँ अगल बगल होकर संग्राम करेंगी।

मैं जानता हूँ जबतक हम वास्तविक शक्ति नहीं पा लेते तब तक ये बातें सिर्फ आशा ही हैं, इसलिये हमारे सामने वास्तविक समस्या—शक्ति प्राप्त करनेकी है। हम शक्ति बहस मुबाहिसे के द्वारा नहीं पा सकते। राष्ट्रकी इच्छाके दबाव द्वारा ही हम शक्ति पा सकते हैं।

पिछले साल हमने अपने सङ्गठनको फिरसे सङ्गठित और दृढ़ बनानेका हर प्रकारसे प्रयत्न किया है। जिसका परिणाम अच्छा निकला, आज हमारा सङ्गठन असहयोग आन्दोलनकी प्रतिक्रियाके बादके कालमें जिस अवस्थामें था उससे कहीं बढ़कर

उत्तम स्थिति में है। लेकिन हमारे अन्दर कमजोरियाँ भी बहुत हैं, कांग्रेस कमेटियोंमें पारस्परिक सङ्घर्ष और चुनाव चख-चख हमारी ताकत और क्रियाशक्तिका अपचय करती है। हम महान संग्राम कैसे चला सकते हैं यदि हम पुरानी कमजोरी छोड़ नहीं देते और छोटी-मोटी बातोंसे ऊपर नहीं उठते? मैं आशा करता हूँ कि देश के सामने मजबूत क्रियात्मक कार्यक्रम रहनेकी हालत में हमारा संकल्प दृढ़ होगा और हम कमजोर करनेवाले निरर्थक झगड़ोंको और बर्दाश्त नहीं करेंगे।

हमारा कार्यक्रम क्या होगा? हमारा निर्णय—सीमित है, वह कांग्रेसके अपने विधानके कारण नहीं, जिसे हम जब चाहें अपनी इच्छासे बदल सकते हैं, बल्कि तथ्यों और परिस्थितियों की वजहसे है। हमारे विधानकी पहली धारा कहती है कि हमारे सब तरीके शान्तिपूर्ण और वैधानिक होने चाहिये। मुझे आशा है वे सदा ही वैधानिक होंगे! मैं चाहता हूँ वे शान्तिपूर्ण हों, क्योंकि शान्तिपूर्ण तरीके अधिक वाँछनीय और हिंसात्मक तरीकों से अधिक कारगर होते हैं। हिंसा प्रायः प्रतिक्रिया और नैतिक कमजोरी लाती है। हमारे जैसे देशमें हिंसा disruption ला सकती है। यह बिलकुल सच है कि आज सङ्गठित हिंसा संसार पर शासन करती है और यह भी सम्भव है कि उसके व्यवहारसे हम कुछ लाभ उठा सकें। लेकिन सङ्गठित हिंसाके लिये हमारे पास शस्त्र और शिक्षा नहीं है और व्यक्तिगत तथा छिटपुट हिंसा निराशाकी स्वीकारोक्ति है। मैं मानता हूँ कि हमारा बहुमत नैतिकताके आधार पर किसी विषयका निर्णय नहीं करता बल्कि विषयके वास्तविक आधारपर करता है, और इसलिये अगर हम हिंसाका रास्ता अस्वीकार करते हैं तो वह इसलिये कि हिंसात्मक तरीकेसे विशेष

फलकी आशा नहीं है। लेकिन अगर यह कांग्रेस या देश भविष्यमें कभी इस नतीजेपर पहुँचे कि हिंसात्मक तरीकेसे हमारी गुलामीकी जंजीरें टूट जायँगी तो मुझे विश्वास है कि वह उन्हें ग्रहण करेगी। हिंसा खराब है, मगर गुलामी उससे भी बदतर है हमें यह याद रखना चाहिये कि अहिंसाके अवतार ने हमें बतलाया है कि कायरता वश युद्ध न करनेकी अपेक्षा युद्ध अच्छा है।

आज देशकी मुक्तिका कोई भी आन्दोलन आवश्यक रूपसे जन आन्दोलन होना चाहिये, और सङ्गठित विद्रोह कालके सिवा, जन आन्दोलनको शान्तिपूर्ण होना चाहिये। चाहे हम असहयोगको लें या सार्वजनिक हड़तालको अपनाएँ, उसका आधार शान्तिपूर्ण सङ्गठन और शान्तिपूर्ण कार्य होना चाहिये। और अगर प्रधान आन्दोलन शान्तिपूर्ण हैं तो छिटपुट हिंसात्मक कार्य हमरा ध्यान बटावेंगे और आन्दोलनको कमजोर करेंगे। एक साथ एक समय दोनों प्रकारके आन्दोलन चलाना सम्भव नहीं है। हमें दोनोमेंसे एकको चुनना है और अपने चुनावपर दृढ़तासे जमना है। कांग्रेसकी पसन्द क्या होगी, इस विषयमें मुझे सन्देह नहीं है, वह सिर्फ शान्तिपूर्ण जन-आन्दोलन ही चुन सकती है।

क्या हमें असहयोग आंदोलनका कार्यक्रम और कौशल फिर अपनाना चाहिये? मेरा कहना है कि आधार वही रहे मगर उसका रूप यही हो यह जरूरी नहीं है। हमारा नया कार्यक्रम वर्तमान स्थितियोंके अनुकूल होना चाहिए। मगर यह न आसान है और न वांछनीय है कि यह कांग्रेस कार्यक्रमके विवरण का निश्चय करे। यह अ० भारतीय कांग्रेस कमेटीका काम होना चाहिये। लेकिन हमें सिद्धान्त निश्चित कर लेने चाहिये।

पुराना कार्यक्रम, कौन्सिलों, अदालतों, सरकारी शिक्षण संस्थाओंके बायकाट तथा सेनामें भर्ती न होने और टैक्स न देने का था। जिस वक्त हमारा राष्ट्रीय संग्राम उग्ररूप में हो तब यह कैसे सम्भव हो सकता है कि राष्ट्रीय संग्रामका सैनिक स्कूल और अदालतोंके लिये अपना वक्त दे सके? लेकिन वर्तमान अवस्था में मैं स्कूलों और अदालतोंका बहिष्कार अबुद्धिमत्ता-पूर्ण समझता हूँ। धारा सभाओंके बहिष्कार पर काफी वाद-विवाद हुआ है। हमें पुराने वाद-विवादकी पुनरावृत्ति नहीं करनी है, क्योंकि इस समय अवस्था बदल गयी है। मेरा ख्याल है, कुछ साल पहले कांग्रेसने धारा सभाओंमें प्रवेश करने की अनुमति देनेका जो निर्णय किया था, वह अनिवार्य था। और मैं यह कहनेको तैयार नहीं हूँ कि उससे कुछ अच्छा परि- णाम नहीं निकला। लेकिन हमने उस अच्छाईको भी निःशेष कर दिया और अब बहिष्कार तथा पूर्ण सहयोगके बीचका मार्ग खुला नहीं रह गया है। हम जानते है—धारा सभाओंके सदस्योंने किस प्रकारको अनैतिकता फैला दी। हमारे कार्यक्रम सीमित हैं और हम तब तक जन-आन्दोलन नहीं चला सकते, जब तक कि हमारे कार्यकर्ता ऐसेम्बली भवनोंसे पीठ फेरकर अपना ध्यान इधर न लगायें। और अगर हम स्वतन्त्रताकी घोषणा करते हैं तो फिर कौसिलोंमें कैसे जा सकते हैं और कैसे वहाँकी निरर्थक बेफायदेकी कार्यवाहियोंमें भाग ले सकते हैं। कोई कार्यक्रम या नीति हमेशाके लिये निश्चित नहीं की जा सकती और न कांग्रेस अपने आपको या देशको अनिश्चित काल तक एक तरहके कार्यक्रमकी नीतिसे बाँध सकती है। लेकिन आज मैं, सम्मान सहित कांग्रेससे कहता हूँ कि कौंसिलों सम्बन्धी कांग्रेसकी नीति उनका पूर्ण

बहिष्कार है और उस सिफारिशको कार्यरूप देनेका अवसर आ गया है।

इसलिये हमारा कार्यक्रम—राजनैतिक और आर्थिक बायकाटका होना चाहिये। जब तक हम दर असल पूर्ण स्वतन्त्र न हों, हमारे लिये यह मुमकिन नहीं है कि हम दूसरे देशका पूर्ण बहिष्कार कर सकें। या उससे सब तरहका सम्बन्ध विच्छेद कर सकें। लेकिन हमारा प्रयत्न ब्रिटिश सरकारसे सब तरहका सम्बन्ध विच्छेदका होना चाहिये और हमें अपने पैरोंपर खड़े होना चाहिये। हमें यह भी स्पष्ट कर देना चाहिये कि भारत पर इङ्गलैण्डने जो कर्ज लादा है भारतीय उसकी जिम्मेदारी नहीं लेते। गया कांग्रेसने इसे अस्वीकार किया था और हमें इसे फिर दोहराना चाहिये। जो धन भारतकी जनताकी भलाईके लिये खर्च किया गया हो, हम उसे मानने और अदा करनेको तैयार हैं। लेकिन भारतको अधीन बनाये रख के लिये उसके सरपर कर्जका जो बोझ लादा गया है, उस कर्जको चुकानेसे हम इन्कार करते हैं। इङ्गलैण्डने अपना आधिपत्य बढ़ाने और भारत में अपनी स्थिति दृढ़ करनेके लिये जो युद्ध लड़े हैं, उनके खर्चोंका बोझ भारतकी गरीब जनता उठानेको राजी नहीं है। बिना उचित हर्जानेके विदेशी शोषकोंको जो सुविधाएँ दी गयी हैं, भारतकी जनता उन्हें नहीं मानती।

यह बायकाट, देशकी ताकतके श्रोत खोल देगा और वास्तविक संग्रामकी ओर उसका ध्यान आकर्षित करेगा। इसे कर न देने और जहाँ संभव हो, मजदूरोंके सहयोगसे जनरल हड़तालका रूप ग्रहण करना होगा। लेकिन खास-खास क्षेत्रोंमें कर-बन्दी आन्दोलन संगठित होना चाहिये। इस कार्यके लिये कांग्रेसको

अ० भार० कांग्रेसको अधिकार देना चाहिये कि वह जब जहाँ जो कार्य करना आवश्यक समझे करे।

अभी तक मैंने कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमका उल्लेख नहीं किया। रचनात्मक कार्यक्रम अवश्य जारी रहना चाहिये, लेकिन पिछले वर्षोंके अनुभवोंने बतलाया है कि यह हमें तेजीसे आगे नहीं बढ़ाता। यह भावी कार्यके लिये जमीन तैयार करता है। आशा है, हम विदेशी वस्तु और विदेशी कपड़ेका बहिष्कार जारी रखेंगे।

विदेश स्थित भारतीयोंके सम्बन्धमें मैंने कुछ नहीं कहा; मैं इस सम्बन्धमें विशेष कुछ नहीं कहना चाहता। इसकी वजह यह नहीं है कि पूर्व अफ्रीका, दक्षिण अफ्रीका, फीजी आदिमें बहादुरीके साथ संग्राम करनेवाले अपने भाइयोंके प्रति हमारे हृदयोंमें भी वैसी ही भावना नहीं है। लेकिन मैं समझता हूँ— उनके भाग्यका फैसला भी भारतके मैदानमें होगा और जो संग्राम हम छेड़ने जा रहे हैं, यह जितना हमारे लिये है उतना ही उनके लिये भी महत्वपूर्ण है।

इस संग्रामके लिये हमें निर्दोष उत्तम मैशीनरी चाहिये। हमारा कांग्रेस विधान और संगठन दिखावटी और मंथर है, जो संक्रान्ति कालके पूर्ण उपयुक्त नहीं है। हम अब शान्त और अप्रतिरुद्धनीय कार्य चाहते हैं यह पूर्ण अनुशासन द्वारा ही हो सकता है। हमारे प्रस्ताव इसलिये पास होने चाहिये कि वे कार्यरूपमें लाये जांय। अगर कांग्रेस अनुशासन पूर्ण ढगसे कार्य करे तो उसके मेम्बरोंकी संख्या चाहे जितनी कम हो जाय, उसकी ताकत बढ़ेगी। छोटे दृढ़ प्रतिज्ञ अल्पमतोंने राष्ट्रोंके भाग्य पलट दिये हैं, झुण्ड या भीड़ शायद ही कुछ कर सकती हो।

अनुशासन और नियंत्रणमें स्वतन्त्रता सन्निहित है। हममेंसे हरएकको बृहत्तर अच्छाईकी अधीनता माननी होगी।

कांग्रेसमें देशके अल्पमतोंका कम प्रतिनिधित्व नहीं हैं, चाहे वे कांग्रेसमें शामिल होने और उसका कार्य करनेमें अक्षम हों, मगर वे आशापूर्ण दृष्टिसे कांग्रेसको देखते हैं और उसे अपना मुक्तिदाता मानते हैं

कलकत्ता कांग्रेसके प्रस्तावके बादसे देश आजके दिनकी आतुरतापूर्वक प्रतीक्षा कर रहा था। कोई नहीं कह सकता—हम क्या और कब प्राप्त कर सकेंगे। हमारी सफलतापर नेतृत्व नहीं है। लेकिन अक्सर सफलता उन्हें ही मिलती है, जो साहस रखते हैं और कार्यक्षेत्रमें कूद पड़ते हैं, परिणामोंकी चिन्ता करने वालोंको सफलता शायद ही मिलती हो। हमारा लक्ष्य महान् है—और अगर हम महान् सफलताएं चाहते हैं तो हमें महान् खतरोंसे गुजरना होगा। सफलता हमें देरसे मिले या जल्दीसे हमें आगे बढ़नेसे और अपने देशके दीर्घ, उत्तम इतिहासका सुनहरा पृष्ठ लिखनेसे हमारे सिवा कोई नहीं रोक सकता।

हमारे देशके विभिन्न स्थानोंमें षड़यन्त्रके मामले चल रहे हैं। वे हमेशा ही साथ लगे रहे हैं। लेकिन गुप्त षड़यन्त्रों का जमाना लद चुका। विदेशी शासनसे देशको स्वतन्त्र करनेके लिये हमें प्रगट षड़यन्त्र करना है। और दोस्तों! आपको और देशके सभी भाई बहनोंको इस प्रगट षड़यन्त्रमें भाग लेनेका निमन्त्रण दिया जाता है। लेकिन इसका पुरस्कार यातना जेल और मौत तक है। फिर भी आपको सन्तोष होना चाहिये कि आपने प्यारे देशके लिये कुछ न कुछ किया, और प्राचीन मगर सदा युवा देशकी मानवताके बन्धन छिन्न-भिन्न करनेमें यथा साध्य सहायता की।

कांग्रेस, लीग और महायुद्ध

[वायसरायने भारतको युद्धमें ढकेल दिया, लीगने सहयोग किया, कांग्रेसने असहयोग। पण्डितजीने यह व्याख्यान कांग्रेस के निर्णयके समर्थन में दिया था।]

१४ सितम्बरका कांग्रेस वर्किङ्ग कमेटीका वक्तव्य सम्पूर्ण स्थिति साफ कर देता है और राष्ट्रीय मतको प्रतिबिम्बित करता है और उसे साफ तौरसे प्रगट करता है। इस वक्तव्यने शीघ्र ही भारतमें महत्वपूर्ण प्रतिक्रिया की। असंख्य जनता जो कुछ अपने दिलो दिमागमें अस्पष्टतया सोच समझ रही थी, वह साफ-साफ सीधी भाषा में कह दिया गया। सन्देह दूर हो गया, परेशानी जाती रही, ऐसा लगता है मानों कांग्रेसके वक्तव्य द्वारा भारतीय जनताने वाणी पायी और संसारको बता दिया कि अगर वर्तमान समस्या सुलझाना है तो किस पथका अनुसरण करना होगा, और संसारने उसकी बात सुनी।

प्रगतिशील इङ्गलैंडने इसका स्वागत किया, प्रजातन्त्री अमेरिका में इसका काफी प्रचार हुआ, यही नहीं बल्कि युद्ध ग्रसित युरोपसे भी इसका प्रत्युत्तर मिला। दलित और गुलाम देशोंकी जनताने इसमें दलितोंका चार्टर देखा। यह कालप्रवाहके गुञ्जनके अनुकूल था।

कांग्रेस कार्यकारिणी द्वारा युद्धोद्देश्योंके स्पष्टीकरणकी माँगके बाद जो कुछ हुआ, वह कांग्रेसकी माँगके कारणयुक्त परिणति थी। ए० आई० सी० सी० के बाद भारत मंत्रीका भाषण, वायसरायका वक्तव्य, प्रान्तीय एसेम्बलियोंमें मुस्लिम लीगके

प्रस्ताव, काँग्रेस मन्त्रिमण्डलोंका पद-त्याग, एकके बाद एक आता गया और भारतीय दृश्यपर रोशनीकी धारा फेंकता गया।

यह रोशनी क्या दिखलाती है ? सबसे पहले काँग्रेसकी उच्च राजनीतिज्ञता और बुद्धिमता, जो संसार और भारतके सम्मुख पूर्ण रूपसे युक्ति युक्त सिद्ध है। अपने आदर्शों और पूर्व घोषणाओंको कायम रखते हुए काँग्रेसने उन्हें परिवर्तित, सङ्गीन परिस्थितियोंमें प्रयुक्त किया और साबित कर दिया कि काँग्रेस एक साथ ही आदर्शवादी और व्यवहारवादी हो सकती है। भारतकी स्वतन्त्रता, जिसका दावा कांग्रेस करती है और संसारकी स्वतन्त्रता, युद्ध और शान्तिके उद्देश्योंमें सन्निहित है और काँग्रेसने इसके स्पष्टीकरणको संसारकी बुराइयोंकी व्यावहारिक औषधि बतलाया है।

दूसरी बात यह हुई कि काँग्रेसने युद्धकी प्रकृत अवस्था प्रत्यक्ष कर दी। ब्रिटिश सरकारका कांग्रेसको दिया गया जवाब बिना किसी सन्देहके साबित करता है कि वे पहलेकी तरह इस बार भी अपने साम्राज्यवादी स्वार्थों की रक्षाके लिये आगे बढ़े हैं। यह प्रजातन्त्रकी लड़ाई नहीं है जिसमें कि नाजीवादके खिलाफ सब प्रजातन्त्रीय जातियाँ एक साथ उठ खड़ी हुई हों। यह सच है कि मित्र शक्तियोंकी तरफ कुछ प्रजातन्त्रीय शक्तियाँ भी हैं, लेकिन वे सरकारें जिनके हाथमें इङ्गलैण्ड और फ्रांसके राज हैं, पुरानी और बदनाम सरकारें हैं जो युरोपकी वर्तमान दुखद अवस्था के लिये जिम्मेदार हैं।

हम म्युनिक और स्पेनको नहीं भूल सकते। फ्रेंच सरकार प्रतिक्रिया वादियोंका किला (Citadel) है और ब्रिटिश सरकार के प्रधानमन्त्री अभी भी (१९३९ में) श्री चेम्बर लेन हैं। हम

यह सब जानते हैं, फिर भी हम चाहते थे, जनता के दिमागसे सब तरहका सन्देह दूर कर दिया जाय, और युद्धके कुहरेसे वास्तविकता सामने आ जाय।

वास्तविकता सामने आ गई और वह इतनी सुन्दर नहीं है कि उसकी तरफ देखा जाय, सर सेमुअल होरके लच्छेदार शब्द उसे सुन्दर नहीं बना सकते। साम्राज्यवादका ढाँचा, आज लड़खड़ा रहा है और वह वर्तमान अवस्थाके सर्वथा अनुपयुक्त है। लेकिन ब्रिटिश शासक समुदाय साम्राज्यवादके ढङ्गसे ही सोचते हैं और उसकी रक्षा करना चाहते हैं। वे भारतकी स्वाधीनताके सम्बन्ध में स्पष्ट घोषणा करनेसे भी डरते हैं। यह साम्राज्यवाद, अल्पमत या नरेशोंके प्रेमके कारण नहीं है, इसका मुख्य सम्बन्ध भारतमें स्थित अंग्रेजोंके आर्थिक स्वार्थोंसे है। यह भारतीय राजनीतिका axiom है कि साम्राज्यवाद या राष्ट्रवाद तथा स्वतन्त्रतामें कभी समझौता नहीं हो सकता। कांग्रेस का आफर था कि साम्राज्यवादका खात्मा होना चाहिये, भारतकी स्वाधीनता मान ली जाय, और दीर्घकालव्यापी आक्रमणवृत्तिका स्थान मित्रता और सहयोग ले। आफर अस्वीकार कर दिया गया और अब हम अपने रास्तेपर चलनेको स्वतन्त्र हैं जब तक कि भाग्य या परिस्थितियाँ फिर न मिला दें।

तीसरी बात यह हुई कि बिना किसी गलत फहमीकी सम्भवनाके मुस्लिम लीगकी स्थिति साफ हो गई। तीन साल पहले जब लीगने अपना लक्ष्य स्वाधीनता घोषित किया था और अपने मेम्बरोंका आधार विस्तृत किया था, हमने उनका स्वागत किया था। लेकिन हमें जल्दी ही महसूस करना पड़ा कि पुराना प्रतिक्रियाशील दृष्टिकोण ही अभी तक मौजूद है; प्रचारकी ओटमें, मुस्लिम जनताको वास्तविक स्थिति महसूस करनेसे

सुरक्षित रक्खा गया। हम लीगकी साम्प्रदायिक मांगोंपर विचार नहीं कर रहे हैं वे चाहे सही हों या गलत। यह सम्भव है कि एक आदमी सम्प्रदायवादी हो साथ ही देशकी स्वाधीनताका पक्का पक्षपाती हो गोकि किसी वक्त इन दोनों में संघर्ष हो सकता है। कांग्रेस ने कभी-कभी मामूली राजनैतिक भूलें की हैं, लेकिन जब कभी महत्वपूर्ण सवाल उठा है उसने निर्मूल कदम उठाया है। दूसरी ओर लीगने महत्वपूर्ण विषयोंपर गलती करनेका रेकार्ड कर दिया है, चाहे वह मामूली मामलोंमें ठीक रही हो।

यह बड़ी दुखद बात है कि ऐसे राष्ट्रीय सङ्कट कालमें लीगने प्रतिक्रियावादियोंका साथ दिया। हम विश्वास नहीं करते कि इस रुखका लीगके बहुतसे सदस्य समर्थन करते होंगे। हमें निश्चय है कि मुस्लिम जनता आजादीकी दीवानी है। कुछ साम्प्रदायिक मामलोंमें लीग भले ही उनका प्रतिनिधित्व करती हो, लेकिन राजनैतिक मामलोंमें नहीं।

किसी भी देशकी युद्ध विषयक नीति सबसे पहले देशकी रक्षाका विचार करती है। भारतको यह अनुभव करना चाहिये कि वह अपनी रक्षामें भाग ले रहा है तथा अपनी स्वाधीनताकी रक्षा कर रहा है साथ ही अन्यत्र होनेवाले स्वतन्त्रता संग्राममें सहायक हो रहा है। सेना, राष्ट्रीय सेना समझी जानी चाहिये। ऐसी सेना न हो जो सिर्फ पैसोंके लिये काम करती हो और किसी गैरके प्रति वफादार हो। इसी राष्ट्रीय आधारपर सेना भर्ती की जानी चाहिये ताकि हमारे सिपाही सिर्फ तोपोंमें बारूद भरनेवाले ही न हों बल्कि अपने देश और अपनी स्वाधीनताके योद्धा हों।

इसके अलावा सैनिक आधारपर सिविल डिफेंसका संगठन होना चाहिये। यह सब जनप्रिय सरकार द्वारा ही हो सकता है।

इससे अधिक महत्वपूर्ण उद्योग-धन्धोंका विकास है ताकि वे युद्ध तथा अन्य आवश्यकताओंके लिये सप्लाई कर सकें। युद्ध-काल में भारतमें उद्योग धन्धोंका बहुत बड़े पैमाने पर विकास होना चाहिये उनके विकासका पूर्ण आयोजन होना चाहिये, जिसका आधार राष्ट्रीय हो और जो श्रमिकोंकी रक्षा करे। इस कार्यमें राष्ट्रीय योजना समिति महत्वपूर्ण सहायता दे सकती है।

जैसे-जैसे युद्ध बढ़ता जायगा और वह अधिकाधिक वस्तुएँ व्यवहारमें लायगा, सारे संसारमें आयोजित उत्पादन और वितरण होगा और फलतः विश्वमें आयोजित इकोनोमी प्रकट होगी। पूँजीवादी प्रणाली अन्तर्ध्यान हो जायगी और मुमकिन है, उद्योग धन्धोंपर अन्तर राष्ट्रीय कन्ट्रोल स्थापित हो जाय। महत्वपूर्ण उत्पादक देशकी हैसियतसे भारतका इस नियन्त्रणमें हाथ रहना चाहिये।

अन्तिम बात यह है कि शान्ति सम्मेलनमें भारत स्वतन्त्र राष्ट्रीकी हैसियतसे बोल सके। हमने यह बतानेकी कोशिश की है कि जो प्रजातंत्रके हिमायती बनते हैं उनके युद्ध और शांतिके क्या उद्देश्य होने चाहिये। युद्धके बाद विश्व संगठनके सम्बन्धमें हमने कुछ नहीं कहा, गोकि हम सोचते हैं कि ऐसा संगठन आवश्यक और अनिवार्य है।

क्या संसारके राजनीतिज्ञ और जनता खासकर युद्धरत देशों की, बुद्धिमान तथा दूरदर्शी होगी कि वह हमने जिस पथका,

निर्देश किया है, उसपर चले ? हम नहीं जानते। लेकिन यहाँ भारतमें अपने देशमें हमें दक्षिण और वामपंथीका भेद भुला देना चाहिये और उन समस्याओं पर विचार करना चाहिये जो हमारे सामने हैं। संसार संभावनाओंसे भरा हुआ है। कमजोर, निकम्मे, छिन्न-भिन्न लोगोंपर कभी उसने दृष्टिपात भी नहीं किया। आज जबकि राष्ट्र अपने अस्तित्वके लिये जी जान लड़ाये हुए हैं, जो दूरदर्शी, अनुशासन युक्त, और एक हैं, वे ही उस इतिहासमें भाग ले सकते हैं, जिस इतिहासका निर्माण होना आरम्भ हुआ है।
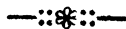
राष्ट्रवाद साम्राज्यवाद

[सन् १९४०, ३ नवम्बरको गोरखपुर जेलमें नेहरूजी पर अ मुकदमा चला, उसमें पण्डितजीने बतलाया कि क्यों ब्रिटिश। सरकारको बिना भारतके प्रतिनिधियोंसे सलाह किये बिना, भारतको युद्धरत घोषित करनेका अधिकार नहीं था।]

मेरे व्याख्यानोंकी रिपोर्टोंमें जो गलतियां और भूलें हैं उनका विवरण देनेका मेरा इरादा नहीं है, क्योंकि इसका मतलब रिपोर्टें फिरसे लिखना होगा और जनाब ! यह आपका और मेरा वक्त बरबाद करना होगा, साथ ही नतीजा कुछ न होगा। मैं यहाँ अपने बचावके लिये नहीं खड़ा हुआ हूँ और शायद जो कुछ मैं अपने वक्तव्यमें कहूँगा वह अब आपके कामको आसान कर देगा। अभी तक मैं नहीं जानता मेरे खिलाफ क्या अभियोग है। मुझे पता चला है कि उसका डी० आई० रूलसे कुछ सम्बन्ध है, और वे युद्धके सम्बन्धमें है जिसमें कहा गया है कि—जनता को युद्धमें जबरन न डाला जाय। अगर यह अभियोग है तो मैं खुशीसे इसे स्वीकार करता हूँ। यह जाननेके लिये ऊटपटाँग रिपोर्ट ढूँढ़नेकी जरूरत नहीं है कि मैंने या किसी अन्य कांग्रेसीने भारत या युद्धके विषयमें क्या कहा। कांग्रेसके वक्तव्य और प्रस्ताव बहुत साफ हैं मैं उन प्रस्तावों और वक्तव्योंको मानता हूँ और अपना कर्तव्य समझता हूँ कि कांग्रेसका सन्देश देशकी जनताके पास ले जाऊँ।

अगर मैं या श्री विनोवा भावे इस कार्यके लिये चुने गये तो अपना व्यक्तिगत मत प्रगट करनेके लिये नहीं। हम उनके प्रतीक हैं जो भारतके नाम पर बोलते हैं। व्यक्तिगत तौरसे हम चाहे मामूली गिने जाँय मगर ऐसे प्रतीक और जनताके प्रतिनिधिकी हैसियतसे हम बहुत कुछ हैं। उन्हीं लोगोंके नामपर हमने उनके स्वाधीनताके अधिकारपर जोर दिया और कहा कि उन्हें हक है कि वे निर्णय करें कि उन्हें क्या करना है क्या नहीं। हमने अन्य किसी भी सत्ताको चुनौती दी है कि वह उनकी स्वाधीनतासे उन्हें वंचित कर सके और अपनी इच्छा उन पर लाद सके। कोई व्यक्ति या व्यक्तियोंका दल जिसे भारतीय जनतासे अधिकार नहीं मिला है और जो किसी तरफ जनताके प्रति उत्तरदायी नहीं है, वह किसी प्रकार अपनी इच्छा जनतापर लाद नहीं सकता। यह मजेदार बात है कि ऐसा कार्य आत्म-निर्णय और प्रजातन्त्रके नाम पर किया जा रहा है।

हम अपने अन्तिम निर्णय पर धीरे-धीरे आ रहे थे, हम झिझके, हमने बातचीत करनी चाही, हमने सब दलोंके लिये सम्मानपूर्ण समझौता चाहा। हम असफल हुए और अनिवार्य निर्णय हमें करना पड़ा। जहाँ तक ब्रिटिश सरकार और उनके प्रतिनिधियोंका सम्बन्ध है, हम अभी तक बन्धनमें हैं उनके साम्राज्यवादी शोषणमें सहायक हों जिसे हम कभी स्वीकार नहीं कर सकते, चाहे उसका नतीजा जो भी हो।

भारतमें बहुतसे आदमी हैं, चाहे वे भारतीय हों या अँग्रेज, जिन्होंने पिछले वर्षोंमें फासिज्म और नाजिज्मके विरुद्ध लगातार आवाज बुलन्द की है, जैसी कि मैंने की। मेरा सम्पूर्ण स्वभाव उनके विरुद्ध विद्रोह करता है और मैंने अनेक बार ब्रिटिश सर-

कार की फासिस्टप्रिय तथा चाटुकारितापूर्ण नीतिकी कटु आलोचना की है। मंचूरियाके आक्रमणसे लेकर अबसीनिया, मध्य युरप, स्पेन और चीनमें मैंने देखा, किस तरह एकके बाद दूसरे देशके साथ नाजियोंके प्रसन्न करनेके नामपर विश्वासघात किया जा रहा है और किस तरह स्वाधीनताकी मशाल बुझाई जा रही है। मैंने अनुभव किया साम्राज्यवाद और उसकी जड़ें कमजोर पड़ गयीं। उसे प्रजातन्त्रीय स्वतन्त्रताके पक्षमें अपना खात्मा करना होगा। बीचका कोई रास्ता नहीं है।

जब तक नाजियोंको प्रसन्न करनेकी नीतिका मंचुरिया, अबसीनिया, जेकोस्लोवाकिया, स्पेन, अलबेनियाके साथ सम्बन्ध था, तब तक प्रधान मन्त्री उसका अनुसरण करते रहे, लेकिन जब यह उनके नजदीक आ पहुँची और ब्रिटिश साम्राज्यके लिये खतरनाक हो गयी तो सङ्घर्ष हो गया और युद्ध छिड़ गया।

अब फिर ब्रिटिश साम्राज्यवाद और युद्धरत देशोंके सामने दो मार्ग हैं, या तो पुराने साम्राज्यवादी रास्ते पर चलें या उसका नाश कर, स्वतन्त्रता और विश्व क्रान्तिके नेता बने। उन्होंने पहला रास्ता चुना गोकि वे अभी भी स्वतन्त्रताकी बात करते हैं और यह शब्द भी युरोप तक ही सीमित है। इसका मतलब यह है कि पुराने तरीके पर उनके साम्राज्यकी स्वतन्त्रता बनी रहे। भारतमें हमने युद्धकालीन सरकारका एक साल देखा, धारा सभाएँ स्थगित कर दी गयीं, दुनियामें सबसे बदतर एक हल्की शासन-प्रणाली यहाँ चल रही है। प्रेसकी स्वाधीनता पर कुठाराघात कर दिया गया है अगर यही प्रस्तावित स्वाधीनताकी भूमिका है तो हम अनुमान कर

सकते हैं, उसका वक्त क्या होगा जब इङ्गलैण्ड पूर्ण फासिस्टराज हो जायगा।

युद्धने सर्वनाश आरम्भ कर दिया है, जिन्हें कष्ट उठाना पड़ा है, उनके साथ हमारी सच्चे दिलसे सहानुभूति है, लेकिन जब तक युद्धका उद्देश्य वर्तमान प्रणालीका अन्त न हो और नयी व्यवस्थाका आधार स्वाधीनता और सहयोग न हो युद्धके बाद युद्ध होता रहेगा और अधिकाधिक सर्वनाश होता रहेगा।

इसलिये हमें युद्धसे अलग रहना चाहिये और इसीलिये अपने देशवासियोंसे कहना चाहिये कि वे युद्धसे अलग रहें और धन जनसे किसी तरहकी मदद न दें। यह हमारा कर्तव्य है, लेकिन बावजूद इसके ब्रिटिश सरकारने भारतीय जनताके साथ जो व्यवहार किया है, प्रतिक्रियाशील वृत्तियोंको उकसाने का जो प्रयत्न किया है और युद्धके लिये जिस प्रकार जबरन जनतासे धन लिया गया है उसे न कभी हम भूल सकते हैं और न उसकी उपेक्षा कर सकते हैं। कोई भी आत्म-सम्मान रखने वाला व्यक्ति इस तरह की जबर्दस्ती नहीं सह सकता और भारतीय जनता इसे कभी नहीं बर्दाश्त कर सकती। मैं आपके सामने राजके विरुद्ध कुछ ओफेंस करनेके कारण व्यक्तिगत रूपसे खड़ा हूँ। आप उस राजके प्रतीक हैं। लेकिन मैं एक व्यक्तिके अलावा कुछ अधिक हूँ, मैं भी इस समय एक प्रतीक हूँ, उस भारतीय राष्ट्रवादका प्रतीक हूँ, जिसने ब्रिटिश साम्राज्य-वादसे पृथक् होने और भारतकी स्वाधीनता प्राप्त करनेका संकल्प किया है। मुझे नहीं आप लाखों करोड़ों भारतीयोंको देखें। मैं आपके सामने अपने ट्रायलके लिये खड़ा हूँ मगर ब्रिटिश

साम्राज्यवाद खुद ही विश्वकी अदालतके सामने ट्रायल पर है। अदालतके कानूनोंसे बढ़कर आज संसार में शक्तियाँ हैं। भावी इतिहास शायद कहे कि सुप्रीम ट्रायलके समय ब्रिटिश साम्राज्य और ब्रिटिश जनता हार गयी, क्योंकि वह बदलती दुनियाके अनुकूल न हो सकी। इतिहास चाहे साम्राज्यके भाग पर हँसे जो कि अपनी कमजोरीके कारण हमेशा गिरे हैं। कुछ खास कारण कुछ खास नतीजे निकालते हैं। हम कारण जानते हैं और नतीजा सामने आने ही वाला है।

पाकिस्तान

पण्डित जवाहरलाल नेहरूने पाकिस्तानके सम्बन्धमें अपना दृढ़ मत व्यक्त किया। लाहौरमें पंडित नेहरूने कहा ;—

पृथक् निर्वाचनका खात्मा होना चाहिये क्योंकि पृथक् निर्वाचनके कारण ही तमाम साम्प्रदायिक गड़बड़ी है।" पंडितजीने कहा; कांग्रेस और लीगका झगड़ा, वायसरायकी कार्यकारिणीके पदों पर नहीं है। वस्तुतः इसमें कांग्रेसके आधारभूत सिद्धान्तोंका सवाल है। कांग्रेस राष्ट्रीय आधार पर समृद्ध हुई है, कांग्रेसके लिये यह मुमकिन नहीं है कि अपने आधारभूत सिद्धान्तोंको छोड़ दे, जिसका अर्थ है कांग्रेसके अस्तित्वका नाश।

नेहरूजीने कहा, वे भारतके विभाजनके विरुद्ध हैं, इसका कारण संयुक्त भारतके सम्बन्धमें कोई भावुकतापूर्ण पक्षपात नहीं है। प्रगतिशील आधुनिक विचारोंके कारण वे अखण्ड भारतके समर्थक हैं। आपने कहा है "विभाजित भारत कमजोर राज होगा, जैसे कि ईराक और ईरान है जो कि पूर्ण स्वाधीन राज नहीं हैं और बड़े राष्ट्रोंकी दयापर आश्रित हैं। पाकिस्तान, साम्प्रदायिक समस्याका हल नहीं है। दोनों ही में अल्पमत रहेगा। इसके सिवा देशका विभाजन धर्मके आधार पर नहीं हो सकता। कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट एक ही राष्ट्रकी भाँति एक साथ रहते हैं। इस पर एकको गम्भीरता पूर्वक ध्यान देना चाहिये। लीग सिर्फ उन क्षेत्रोंके विभाजनकी माँग पेश कर सकती है जिन क्षेत्रोंमें मुस्लिम बहुमत बहुत अधिक है। यह

याद रखना चाहिये कि इसका अर्थ पञ्जाब और बंगालका विभाजन है जहाँ पञ्जाब और बङ्गालमें गैर मुस्लिम बहुमत है, उसे आप पाकिस्तानके साथ चलनेको मजबूर नहीं कर सकते। क्या बङ्गाली या पञ्जाबी चाहे वे मुसलमान हों या हिन्दू, यह पसन्द करेंगे कि उनके प्रान्त जो भाषाकी दृष्टिसे एक हैं, विभाजित किये जायँ ? हमें इन समस्याओंका सामना करना पड़ेगा। अगर मुसलमान विभाजन चाहते हैं तो कोई ताकत उन्हें नहीं रोक सकती। लेकिन मैं यह समझनेकी भरपूर कोशिश करूँगा कि विभाजनसे किसीका हित न होगा, मुसलमानोंका भी नहीं।"

"यह कहना कठिन है कि वर्तमान स्थितिमें संसार कब तक रहेगा। संसारकी वर्तमान स्थितिमें भारतमें पाकिस्तान जैसा सवाल उठाना बेकार और अर्थहीन है। आज युरोपके देशोंकी स्थिति भारतीय रियासतोंसे भी गयी बीती है। समयका तकाजा है कि पाकिस्तानका आवाज उठानेकी अपेक्षा छोटे प्रदेशोंको अपना सर्वनाश बचानेके लिये सङ्घ में शामिल होना चाहिये। भारत एक विस्तृत महान देश है, और पाकिस्तान, जैसी मामूली समस्या न उठाकर उन्हें देशोन्नतिकी भावी योजना बनाने, देशके उत्पादक स्रोतोंके बढ़ाने और बेकारी दूर करनेपर विचार करना चाहिये। मेरा और कॉंग्रेसका विचार स्वतन्त्र भारतके साथ अन्य देशोंका फेडरेशन स्थापित करनेका है लेकिन पाकिस्तान जैसे गौण प्रश्न मुख्य प्रश्नोंसे ध्यान बटाते हैं। अफसोस है कि देशके सार्वजनिक साम्प्रदायिक सङ्गठन स्वतन्त्रताकी माँगको शर्तोंके अधीन करते हैं। इसका कारण आपसका भय और अविश्वास है। सिख और मुसलमान बहादुर जातियाँ हैं उन्हें हिन्दुओंसे डरनेका कोई कारण नहीं है। कांग्रेसने घोषित किया

है कि पाकिस्तान जो माँगते हैं उनके लिये और सम्पूर्ण भारतके लिये हानिकर है। फिर भी अगर मुसलमान पाकिस्तानकी जिद करें तो वे भले ही ले लें पर पाकिस्तान मुझे एक अव्यावहारिक समस्या लगती है। कांग्रेसने मुसलमानोंको आत्म निर्णयका अधिकार दिया है, लेकिन सवाल यह है कि पाकिस्तान हो कैसे? मुसलमानोंको इस पर ठंडे दिलसे विचार करना चाहिये। यह एक महान् उलझनदार समस्या है। यही कारण है कि मुस्लिम लीगने अभी तक इसका खुलासा नहीं किया। अगर पाकिस्तान दिया गया तो पञ्जाब और बङ्गालके जिन क्षेत्रोंमें हिन्दुओंका बाहुल्य है, वे हिन्दुस्तानमें शामिल होंगे, फलतः पञ्जाब और बङ्गालके टुकड़े करने होंगे। मैं कल्पना नहीं कर सकता कि कोई समझदार पञ्जाबी या बङ्गाली, पञ्जाबके या बङ्गालके दो टुकड़े किये जाना पसन्द करेगा जब कि पञ्जाब और बङ्गाल प्रान्तकी संस्कृति और भाषा एक है।

'पाकिस्तान' एक भावुकतापूर्ण नारा है, और जब तक इसकी रूप रेखा प्रत्यक्ष नहीं होती तब तक कौन इसे देगा, और कौन लेगा?

अगर पञ्जाब दो भागोंमें बाँटा गया तो हिन्दू सिख प्रधान समृद्ध भाग हिन्दुस्तानमें मिल जायगा और पञ्जाबी पाकिस्तान की आर्थिक स्थिति दृढ़ नहीं होगी।

इन समस्याओंका समाधान कांग्रेस, ब्रिटिश सरकार या अन्य किसी द्वारा नहीं बल्कि संसारकी स्थितिके अनुसार अपने आप होगा। मुझे यकीन है भारतका विभाजन भी हुआ तो वह अस्थायी होगा।

सन् १९४५ को घटनाओंका जिक्र करते हुए पण्डितजीने कहा, भारतके लिये स्वाधीनता संग्रामके झण्डे या उस झण्डेको

लेकर चलने वालोंकी बेइज्जती सहना असम्भव था। जिन्होंने भारतकी सम्मान रक्षामें प्राणोंकी बलि चढ़ा दी वे शहीद हैं, और मैं उनके बलिदानोंकी सराहना करता हूँ।

पण्डितजीने कहा भारत ही नहीं सारी दुनिया, सङ्कटकालमें गुजर रही है, सिर्फ भारतके सामने महत्वपूर्ण समस्या नहीं है, बल्कि अन्य देशोंमें भी ऐसी ही समस्याएं मौजूद हैं। तेजीसे बदलने वाली दुनियामें इन समस्याओंके कारण हमें निरुत्साह नहीं होना चाहिये, बल्कि शक्तिपूर्वक इन समस्याओंके समाधानके लिये तैयार रहना चाहिये। जब कि भारत आजादीकी ओर बढ़ रहा है, ऐसी समस्याएँ सामने आवेंगी ही।

कांग्रेसकी यह दृढ़ सम्मति है कि भारत 'युनिटों' में विभाजित नहीं होना चाहिये। देशकी आर्थिक और रक्षा विषयक दृष्टिसे समयका तकाजा है कि भारत एक देश रहे। आनेवाली दुनियामें छोटे राष्ट्रोंका भाग्य शून्य है। छोटे राष्ट्रोंकी स्थिति ईराक और ईरान जैसी होगी। बड़े बड़े राष्ट्र-सङ्घ और राष्ट्र-सङ्घ बनाने की सोच रहे हैं, ऐसी अवस्थामें अगर भारतका विभाजन होगा तो उसका खात्मा हो जायगा। मैं भारत ईराक, ईरान, अफगानिस्तान, बर्माका, दक्षिण एशिया-सङ्घ बनानेका पक्षपाती हूँ।

मुख्य सवाल भारतकी स्वाधीनताका है, स्वाधीनता पा लेने पर सब प्रश्न हल कर लिये जायेंगे। कांग्रेसने विभिन्न जातियों को स्वभाग्य निर्णयका अधिकार दे दिया है। मैं किसीको बृहत्तर भारतमें रहनेके लिये मजबूर करना नही चाहता किन्तु यह स्मरण रहना चाहिये कि अगर कोई 'युनिट' शेष भारतसे अलग रहना चाहे तो उसे फिर वही अधिकार दूसरेको भी देना होगा। पंडितजीने कहा, वे गुटोंके आत्मनिर्णयके अधिकारको भी मानते हैं।

एटम बमके युगमें जब दुनिया तेजीसे बदल रही है, पाकि

स्तान जैसे प्रश्नका कोई महत्व और उपयोग नहीं है। बहुतसे देशोंके सामने असली समस्या विभाजनकी नहीं है बल्कि नाशसे बचनेके लिये एक सङ्घमें शामिल होनेकी है।

पण्डितजीने कहा, भारत प्राचीन कालमें एक महान् देश था, उसने एशियाके अन्य देशोंपर शासन किया था और उसकी सभ्यता और संस्कृतिका विस्तार बहुत दूर तक हुआ था लेकिन आज भारतकी यह हालत क्यों है ? आज भारत गुलाम क्यों है ? इसके कारण है, हमारी कल्पनाकी कमजोरी, धर्मका दुरुपयोग। अफसोस है कि जब संसारमें क्रान्ति हो रही है, भारतीय पुरानी चीजोंमें चिपके हुए हैं। अविश्वास, भेदभाव और साम्प्रदायिक वैमस्य भारतमें फैला हुआ है।

एटम बमोंने जापानके दो शहरोंके पाँच लाख मनुष्योंका संहारकर डाला और जापानको आत्मसमर्पण करना पड़ा, लेकिन युद्धमें विजयी होनेपर भी युद्धके कारण ही ब्रिटेन आज दूसरी कोटिकी शक्ति हो गया। रूस और अमेरिका प्रथम श्रेणी की शक्तियाँ हैं। संसारमें क्रान्तियाँ हो रही हैं। देश इस विचारमें पड़े हुए हैं कि सर्वनाशसे अपनी रक्षा कैसे करें ? लेकिन भारतीय अभी भी झगड़ रहे हैं, सिर्फ सरकारी पदोंके लिये ही नहीं बल्कि राजनैतिक दलोंमें स्थिति और अधिकार पानेके लिये। काँग्रेस ही भारतकी स्वाधीनताका संग्राम चलानेवाली संस्था है, उसीने जनतामें जागृति पैदा की है। आज मुस्लिम लीग, हिन्दू महासभा आदि साम्प्रदायिक संस्थाएँ काँग्रेसका विरोध कर रही हैं लेकिन काँग्रेस उनकी मां है, इन संस्थाओंने अभी तक प्रस्ताव पास करने में काँग्रेसकी नकल की है और ये धमकी दिखाकर सफलता प्राप्त करना चाहती हैं। जैसा कि काँग्रेस करती है, ये

संस्थाएँ कसौटीपर अपनेको नहीं कसना चाहती और न खतरा उठाना चाहती हैं।

अगर सीमाप्रांत, पञ्जाब और बङ्गाल स्वभाग्य निर्णयका अधिकार चाहें तो काँग्रेस राजी है, लेकिन पञ्जाब और बङ्गाल के हिन्दू, मुसलमान, सिखोंको प्रान्तके विभाजनकी माँग करनेके पहले अच्छी तरह सब बातें सोच लेना चाहिये। उन्हें यह स्मरण रखना चाहिये कि गो कि उनका धर्म विभिन्न है, लेकिन उनकी सभ्यता, संस्कृति, भाषा एक है। बङ्गालके अकालमें ही देखिये, लाखों हिन्दू, मुसलमान एक साथ मर गये। असली सवाल भोजन और वस्त्र का है, और यह सवाल राष्ट्रीय सरकार द्वारा ही हल हो सकता है। एक मात्र कांग्रेस ही सबसे बड़ा राजनैतिक संस्था है, कोई साम्प्रदायिक संस्था सम्पूर्ण भारतके नामपर नहीं बोल सकती। दमनके बावजूद भी कांग्रेस आज पहलेसे दुगुनी शक्तिशाली है, जनताको काँग्रेसको मजबूत बनाना चाहिये, जो भारतकी स्वाधीनताके लिये ब्रिटिश सरकार से युद्ध कर रही है और जब तक भारत स्वाधीन न हो तब तक युद्ध करती रहेगी।

आत्मनिर्णयके सम्बन्धमें काँग्रेसका रुख बिलकुल साफ है। वह चाहती है, भारत एक राष्ट्रीय एकाईके रूपमें रहे, फिर भी वह प्रान्तोंको अपने शासनमें काफी स्वाधीनता देती है, फिर भी अगर किसी युनिटकी जनता राष्ट्रीय एकाईमें नहीं रहना चाहे तो काँग्रेस उसे शामिल रहनेके लिये मजबूर नहीं करती। इस प्रकार कांग्रेस स्वभाग्य निर्णय या विभाजनका हक नहीं मानती है। लेकिन मैं भारतके टुकड़े किये जाने और गुटोंके स्वतन्त्र राज बनानेको, भारतके लिये हानिकारक मानता हूँ।

फिर भी अगर कुछ युनिट अलग रहना चाहें तो भले ही

रहें मगर वे अपने साथ उन्हें नहीं ले जा सकते जो जाना नहीं चाहते। मेरा ख्याल है कि एक दफा अलग होनेका अधिकार मान लेनेसे अलग होनेकी इच्छा तृप्त हो जायगी। इस प्रश्नपर निष्पक्ष होकर विचार करना चाहिये। मेरी इस प्रश्न पर विभिन्न राय है। यह कोई बात नहीं है कि भारत एक राष्ट्र है या एकसे अधिक राष्ट्रोंका समूह है। राष्ट्रकी सन्तोषजनक व्याख्या अभी तक नहीं हो सकी है। इसपर ऐतिहासिक, हजारों दृष्टियोंसे बहस हो सकती है। अगर सौ देश भी एक साथ रहना चाहे तो वे एक देश हैं। लेकिन अगर कोई गुट या जाति एक साथ नहीं रहना चाहे तो फिर यह सवाल ही नहीं उठता कि वह एक राष्ट्र है या दो राष्ट्र। दर अस्ल यह भावना विदेशी है, इसे हम अपनेमें मिलाकर हजम नहीं कर सकते। हमें दोनों दलोंके सन्तोष लायक रास्ता खोजना होगा। दो राष्ट्रोंके सिद्धान्तपर गौर कीजिये। इसका आधार धर्म माना गया है। आजकी दुनियामें यह आधार मेरी समझमें नहीं आता। भारतके दो राष्ट्रोंका आधार धर्म है, और ये दोनों हर एक गाँवमें एक दूसरेसे मिले हुए हैं। एक धर्म मानने वाली जनताको, उसके स्थानसे हटाकर, उसी धर्मवालोंमें पहुँचा देना बहुत ही कठिन कार्य होगा। मान लीजिये दो राष्ट्रोंके सिद्धान्त पर भारतका विभाजन हो रहा है, हो सकता है देशके एक भागमें लाखों व्यक्ति ऐसे हो सकते हैं, जिनका धार्मिक सम्बन्ध एक ऐसे दूसरे भागसे है जहाँ वे आबादीका दसवाँ भाग हैं, इस सिद्धान्तके अनुसार मुस्लिम भागमें हिन्दू विदेशी और हिन्दू भागमें मुस्लिम विदेशी होंगे। अगर आप यह सिद्धान्त मान लेते हैं तो हर तरहकी कठिनाइयाँ पैदा होंगी। विदेशी, राज में पूरी तरह नहीं मिलाये जा सकते और लड़ाईके समय तो ये बहुत ही खतरनाक हो सकते हैं।

जीवनके सिद्धान्त

सात वर्ष पहले एक अमेरिकन प्रकाशकने मुझसे अपने जीवन के सिद्धान्त पर एक निबन्ध लिखने के लिये कहा था। तब मुझे स्वयं अपने जीवनके सिद्धान्त या उसके दर्शन-शास्त्रका ज्ञान न था। मूल सिद्धान्तोंकी अनभिज्ञतासे मेरे कार्यमें बाधा पड़ती हो, यह बात न थी। जैसे एक वाण किसी बातका ध्यान न रखते हुए अपने लक्ष्यकी ओर दौड़ता है, वैसे ही परिस्थितियोंके अनुसार अपने लक्ष्यके सामने मुझे और कुछ न सूझता था। परन्तु अब वह बात नहीं रही। संसारमें सर्वत्र दुष्टता-ही दुष्टता दिखलाई देती है। इसलिये सन्देह होने लगता है, कि मनुष्य क्या स्वभावतः ही दुष्ट है। क्या बिना युगों तक कष्ट झेले हुए उसके लिये सुधारका कोई मार्ग ही नहीं है? साध्य-साधनमें क्या सम्बन्ध है? यदि दोनोंका एक दूसरेपर प्रभाव पड़ता है तो दुष्ट साधनों से साध्य भी विकृत हो सकता है। पर श्रेष्ठ साधन सबकी सामर्थ्यमें नहीं हैं। ऐसी दशामें मनुष्य क्या करे? इन प्रश्नोंसे प्रेरित होकर मुझे जीवनके सिद्धान्त पर विचार करना पड़ रहा है।

जीवनके प्रति मेरा दृष्टिकोण वैज्ञानिक रहा है। जिस तरह हिन्दू, इस्लाम, बौद्ध, ईसाई आदि धर्मोंका पालन होता है, उसे देखते हुए मुझे इनमेंसे किसीमें भी श्रद्धा न रही। इन सबमें मुझे अन्धविश्वास, दम्भ, पाखण्ड, टोना-टामर ही देख पड़ा। जीवनके प्रति इन धर्मोंका दृष्टिकोण कदापि वैज्ञानिक नहीं कहा जा सकता। पर साथ ही यह मानना पड़ेगा कि धर्मसे मनुष्य

स्वभावकी कई भीतरी आवश्यकताओंकी पूर्ति हुई है। आज भी संसारके अधिकांश लोग बिना किसी धर्मका सहारा लिये नहीं रह सकते। धर्मने यदि कुछ स्त्री-पुरुषोंको भला बनाया है, तो दूसरोंको उसने संकीर्ण हृदय, कठोर तथा अत्याचारी भी बनाया है। व्यापक दृष्टिसे धर्मका सम्बन्ध मानव अनुभवके अदृश्य प्रदेशसे है। यह तो स्पष्ट है कि हमारे चारों ओर एक अदृश्य जगत है, जिसमें विज्ञान अभी तक नहीं घुस पाया, क्योंकि उसके पास इसके साधन ही नहीं हैं। दृश्य जगतमें देश-कालानुसार परिवर्तन होता रहता है। किन्तु रहस्यमय अदृश्य जगतके साथ उसका सम्पर्क बना रहता है। कोई विचारशील व्यक्ति इस अदृश्य जगतकी ओरसे आँखें नहीं मूँद सकता। जीवनका उद्देश्य क्या है, विज्ञान इसे नहीं बतलाता। पर साथ ही विज्ञानका कार्य क्षेत्र विस्तृत होता जाता है और बहुत सम्भव है कि किसी दिन अदृश्य जगतपर भी उसका आक्रमण हो जाय, तब हमें व्यापक रूपमें जीवनका उद्देश्य समझनेमें सहायता मिलेगी या कम-से-कम मानव अस्तित्वको प्रकाशित करनेवाली किरणोंकी एक झलक तो अवश्य दिखलाई देगी। धर्मका समावेश दर्शनमें हो जाता है। आधुनिक मनुष्य बाह्य संसारमें फँसा हुआ है, परन्तु विपित्तियों का बोझ टूट पड़नेपर प्रायः उसका ध्यान दर्शन और अध्यात्मवादकी ओर जाता है। अध्यात्मवादकी ओर मेरा आकर्षण कभी नहीं होता। पर तब भी कभी-कभी इसके तर्कोंकी ओर मेरा ध्यान जाता है। लेकिन अधिक समय तक उनमें मेरा मन नहीं लगता और उनसे भाग खड़े होनेमें ही चैन आता है।

मेरी रुचि इस जगत तथा इस जीवनमें है, न कि किसी दूसरे जगत या भावी जीवनमें। आत्मा जैसी कोई वस्तु है या

मृत्युके ब द भी कोई जीवन है, यह मैं नहीं जानता। यद्यपि ये महत्वपूर्ण प्रश्न हैं, तथापि इनसे मुझे किंचित भी परेशानी नहीं होती। जिन परिस्थितियोंमें मैं पला हूँ, उनमें आत्मा, पुनर्जीवन, कर्मफल आदिपर सहज ही विश्वास कर लिया जाता है। मैं भी इनसे थोड़ा बहुत प्रभावित हुआ हूँ और उनको माननेमें मैं कोई हानि नहीं समझता। शरीरका अन्त होनेपर कोई आ मा जीवित रह सकती है? कर्मफलका सिद्धान्त कार्य-कारणकी दृष्टिसे समझमें आता है। यद्यपि मूल कारण पर विचार करनेसे इसमें बाधा पड़ती है। आत्मा मान लेनेपर पुनर्जन्म भी सिद्ध हो जाता है। परन्तु इनमेंसे किसीको भी धार्मिक श्रद्धा मान कर उनमें मेरा विश्वास नहीं है। अदृश्य जगतके सम्बन्धमें ये अनुमान मात्र हैं। मेरे जीवनपर उनका कोई प्रभाव नहीं, बादमें वे चाहे ठीक सिद्ध हों या गलत, मेरे लिये कोई भेद न होगा। संसारपर एक दृष्टि डालनेसे उसकी अज्ञात गहराईमें एक विचित्र रहस्यका अनुभव होता है। यह क्या है, इसको तो मैं नहीं बतला सकता, पर मैं उसे कदापि ईश्वर नहीं कह सकता, क्योंकि आजकल ईश्वरका जो अर्थ है उसमें मुझे विश्वास नहीं। वह कोई देवता या दैवी-शक्ति है, मुझे आश्चर्य है कि इसमें लोग विश्वास कैसे करते हैं? साकार ईश्वरकी बात तो सर्वथा विचित्र जान पड़ती है। वेदान्तके अद्वैतवादकी ओर मेरा कुछ झुकाव होता है मैंने उसका पूर्णरूपसे अध्ययन नहीं किया, पर मै यह अवश्य अनुभव करता हूँ कि केवल बौद्धिक कल्पनाओंसे मनुष्य अधिक आगे नहीं बढ़ सकता। साथ ही वेदान्त या अन्य ऐसे ही सिद्धन्तोंसे, जो अनन्ततामें गोता लगाते हैं, मुझे भय-सा लगता है। प्रकृतिकी भिन्नता और पूर्णतासे मैं चकित हो उठता हूँ और अन्ततः मेरे हृदयमें भीतरी साम्य आता है।

अगस्त १९४२

८ अगस्त १९४२ का ऐतिहासिक दिन था। 'भारत छोड़ो' प्रस्तावको पास करनेवाले कांग्रेस अधिवेशनमें अधिक रात बीते हमें विश्रामका अवसर मिला। दिनके श्रमसे श्रान्त बिस्तरपर पड़ते ही मैं काठ हो गया। निद्रादेवीकी गोदसे मैं अभी मुक्त भी नहीं हुआ था कि अतिथि-घण्टी बज उठी। द्वारपर किसीके खटखटानेको आवाज आई। अभी सबेरा होनेमें अधिक विलम्ब था। इतने तड़के किसीके आनेकी आशा भी न थी। द्वार खोला गया। देखा कृष्ण-मन्दिरका निमन्त्रण लिये पुलिस द्वार पर खड़ी थी। मैं चटपट तैयार हो गया और मुझे ले पुलिसकी कार अज्ञात स्थानको रवाना हो गयी

९ अगस्तको प्रातःकाल होते-होते समस्त भारतमें गिरफ्तारियोंको धूम मच गयी। इसके पश्चात् जो कुछ हुआ उसकी सत्यता सेंसरकी ओटमें अभी भी रहस्य बना हुआ है। कई सप्ताह बाद हमलोगोंके पास जो समाचार पहुँचे वे सघन वृक्षोंसे छन कर आती सूर्य किरणोंकी भाँति नगण्य थे और उससे वास्तविकताका परिचय प्रायः बिलकुल असम्भव था। जनताके सभी नेता उससे सहसा छीन लिये गये और उन्हें अज्ञात स्थानोंमे नजरबन्द कर दिया गया। जनता नेतृत्वहीन कर दी गयी। परिणाम जो होना था वही हुआ, यद्यपि किसीकी समझमें नहीं आता था कि क्या करना चाहिये किन्तु सरकारकी इस अनुचित निन्दनीय तथा आकस्मिक कार्यवाहीका विरोध तो उसे करना ही था। फिर क्या था, प्रदर्शन आरम्भ हो गये।

सरकारको नागरिकोंके शान्तिपूर्ण उपाय भी सहन न हुये। वह पाशविकता पर आ गयी प्रदर्शन भंग किये जाने लगे, अश्रु गैस बमोंका प्रयोग किया जाने लगा और सार्वजनिक भावोंको प्रकट करनेके सभी साधनोंको रोक दिया। परिणाम और भयंकर हुआ। जनताके अन्तरमें धधकती अग्नि ज्वालामुखीकी भांति विस्फोट कर उठी। नगरों तथा देहातोंमें भीड़ इकट्ठी होने लगी, पुलिस तथा फौजें दमनपर तुली हुई थीं। भीड़से उनका सङ्घर्ष हो गया, उसने आक्रमण किया विशेषतः उनपर जिन्हें वह ब्रिटिश शासनका प्रतीक समझती थी—पुलिस स्टेशन, डाकघर तथा रेलवे स्टेशन। उन्होंने टेलीफोन तथा टेलीग्राफके तारोंको काट डाला। इन निरस्त्र, नेतृत्व विहीन नागरिकोंने पुलिस तथा फौजकी गोलीका सामना किया, उन्हें सीनेपर लिया, कुछ सदाके लिये भारतमाता की गोदमें सो गये; कुछ निकटवर्ती अस्पतालोंमें अपनी मरहम-पट्टी कराने लगे। पुलिस अधिकारियों के कथनानुसार ५३८ अवसरोंपर जनतापर गोलियाँ चलायी गयीं, कहीं-कहीं तो निकटसे उड़ते विमानों द्वारा उनपर मशीनगनका भी प्रयोग किया गया। दो-तीन मास तक देशके विभिन्न भागोंमें घटनाओंका यही क्रम रहा। सामुहिक घटनाओंका स्थान छिटपुट घटनाओंने लिया। एक दिन कामन सभामें ब्रिटेन के तत्कालिन प्रधान मन्त्री श्रीचर्चिलने कहा—सरकारने अपनी पूर्ण शक्तिसे उपद्रव दबा दिया है। और सैन्य सहायता पहुँच गयी है। श्वेत सेना भी बढ़ा दी गयी है। उन्होंने भारतकी पुलिस तथा अधिकारी वर्गकी प्रशंसा की।

सरकारके इस घोर दमन तथा अत्याचारको देशमें प्रबल प्रतिक्रिया हुई। नगर तथा देहात एक हो गये। सरकारी प्रतिबन्धोंके होते हुए भी प्रदर्शन होने लगे, हड़ताल हुई, सर्वत्र

दूकानें, बाजार तथा कारबार बन्द होने लगे। हड़ताल लगातार कई दिनों तक होती रही, कहीं-कहीं कारबार सप्ताहों बन्द रहे तो कहीं महीने बीत गये। मजदूर हड़तालने भी जोर पकड़ा। राष्ट्रीय नेताओंको जेलमें ठूँस देनेकी सरकारकी निरंकुश कार्यवाहीके विरोधमें उन्होंने यत्र-तत्र सर्वत्र हड़ताल घोषित कर दी। अहमदाबाद और जमशेदपुर इसके जीवित उदाहरण हैं। जमशेदपुरके टाटा वर्क्सके मजदूरोंने कामपर जाना बन्द कर दिया और तबतक कामपर नहीं गये जब तक प्रबन्ध विभागने यह आश्वासन नहीं दे दिया कि वे कांग्रेसके नेताओंको छुड़ानेका यथाशक्ति प्रयत्न करेंगे। अहमदाबादमें तो लगभग तीन महीने तक शान्तिपूर्ण हड़ताल जारी रही। यह कठिन था। काम न करनेपर मजदूरोंको मजदूरी न मिलती थी और पैसे देनेपर भी सामान नहीं मिलते थे। फिर भी मजदूरोंने अपनी हानि उठा कर खाली पेट रहकर हड़ताल जारी रखी।

प्रान्तोंमें उत्तर-पश्चिमी सीमान्त प्रदेशकी स्थिति विचित्र थी। वहाँकी बहुसंख्यक जनता मुस्लिम है। अन्य प्रान्तोंकी भांति वहाँ सामुहिक गिरफ्तारियाँ अथवा अन्य कोई उत्तेजनात्मक कार्यवाही नहीं हुई। ऐसा सम्भवतः कुछ तो इसलिये हुआ कि सीमाप्रान्तके निवासियोंको शीघ्रतासे उत्तेजित होनेवाला नहीं समझा गया और कुछ यह दिखानेके लिये कि राष्ट्रीय आन्दोलन से मुस्लिम पृथक हैं, किन्तु जब भारतके शेष भागकी अशान्तिकी चिनगारी वहाँ पहुँची वहाँके देशभक्त मुस्लिमोंका भी खून खौल उठा। उन्होंने भी ब्रिटेनको चुनौती दी। भावने प्रदर्शनका रूप ग्रहण किया। सरकारका दमन चक्र आरम्भ हुआ। गोलियोंकी धड़ाधड़ने अग्निमें घी डालनेका काम किया। वातावरण और भी विशाक्त हो गया। हजारों व्यक्ति गिरफ्तार कर लिये गये यहाँ

तक कि महान पठान नेता बादशाह खान (अब्दुल गफ्फार खाँ) को भी पुलिसने घूँसोंसे बुरी तरह घायल कर दिया। निरंकुशता की सीमा यहाँ पार कर गयी। अपने साधु नेताकी इस अवस्था से जनता उबल पड़ा। किन्तु बादशाह खानने अपनी अलौकिक अनुशासन शक्तिसे उन्हें आगे बढ़नेसे रोक दिया।

आकस्मिक तथा असङ्गठित प्रदर्शन तथा जनताके आक्रमणात्मक एवं विनाशकारी उपद्रवों तथा पुलिस और शक्तिशाली सशस्त्र सेनाओंके विरोधसे ब्रिटेनके विरुद्ध जनताकेम नोभावका पता चलता है। यह बात नहीं थी कि ऐसी भावना पहलेसे विद्यमान नहीं थी। यह पहलेसे ही मौजूद थी किन्तु गिरफ्तारियों तथा गोलियोंकी धड़ाधड़ने इसे साकार रूप दे दिया। कुछ समय तक तो जनताको यह ज्ञान ही नहीं हो सका कि क्या करना चाहिये। कोई निर्देश नहीं था, कोई कार्य-क्रम नहीं था। उनका मार्ग प्रदर्शन करनेके लिये कोई प्रसिद्ध नेता नहीं रह गया था फिर भी वह आवश्यकतासे अधिक उत्तेजित और क्रुद्ध हो गयी थी जैसा कि ऐसी परिस्थितियोंमें प्रायः हुआ करता है। स्थानीय नेता आगे बढ़े और जनताने उनका अनुसरण किया। किन्तु उन्होंने जो नेतृत्व किया वह भी साधारण था। वास्तवमें यह सामुहिक अशांति थी। समस्त भारतमें अल्प वयस्कों विशेष कर छात्रोंने हिसात्मक तथा शांतिपूर्ण कार्यवाहियोंमें प्रमुख भाग लिया। बहुतसे विश्वविद्यालय बन्द कर दिये गये। कुछ नेताओंने ऐसी स्थितिमें भी शान्तपूर्ण उपायोंसे काम लेना चाहा किन्तु उस समयके उत्तेजनापूर्ण वातावरणमें यह सम्भव नहीं था। जनता कुछ समयके लिये २० वर्षोंसे पढ़े अहिंसाके मन्त्र को भूल गयी फिर भी कार्य तथा कल्पनासे वह किसी प्रकारकी हिंसात्मक कार्यवाहीके लिये तैयार नहीं थी। स्थिति ऐसी थी

कि जनताके मनमें अहिंसाके उपदेश ही सन्देह उत्पन्न करने लगे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि यदि कांग्रेसने अपने सिद्धान्तको त्याग कर हिंसात्मक कार्यवाहियोंके लिये कोई संकेत दिया होता तो हिंसा सौ गुने हजार गुने वेगसे आगे बढ़ गयी होती।

किन्तु इस प्रकारका कोई संकेत नहीं दिया गया था। इसके विपरीत वास्तवमें कांग्रेसके अन्तिम सन्देशमें कार्यरूपमें अहिंसा के सिद्धान्तकी पुनः पुष्टि की गयी थी।

यद्यपि अहिन्साकी नीति कुछ समयके लिये विलीन हो गयी तथापि वर्षोंसे जनताको उसकी जो ट्रेनिंग दी गयी थी उसका उसके मस्तिष्कपर अमिट प्रभाव था। यद्यपि उत्तेजना अधिक फैल गयी थी किन्तु प्राण लेनेकी भावना उसमें तनिक भी विद्यमान न थी। सरकारी सम्पत्तियोंकी अत्यधिक क्षति हुई, यातायात विच्छिन्न कर दिये गये फिर भी विरोधियोंके जीवन हरण की बहुत कम घटनाएँ घटीं। जहाँ तक मुझे ज्ञात हो सका है समस्त भारतमें लगभग १०० व्यक्ति भीड़ द्वारा मार डाले गये, जो अशान्त क्षेत्र तथा पुलिससे हुए सङ्घर्षकी तुलनामें बिलकुल नगण्य है। इसमें सन्देह नहीं कि बिहारके किसी स्थानपर दो कनाडियन चालकोंकी हत्याकर निर्दयतापूर्ण कार्य किया गया। सरकारी अनुमानके अनुसार पुलिस तथा फौजकी गोलीसे १०२८ व्यक्ति मरे तथा ३२०० घायल हुए। ५३८ स्थानोंपर गोलियाँ चलीं। चलती फिरती लारियोंसे जो गोलियाँ छोड़ी गयीं उनकी इसमें गणना नहीं है। लोगोंका अनुमान है कुल २५००० व्यक्ति मौतके घाट उतार दिये गये। जो कुछ भी हो वास्तविकता अभी भी एक रहस्य है। यह असाधारण बात थी कि बहुतसे स्थानोंमें ब्रिटिश शासनका अस्तित्व ही मिट गया था। सरकारको उनपर पुनः अधिकार करनेमें कई सप्ताह लग गये। ऐसी घटनाएँ बिहार,

बङ्गालके मिदनापुर जिले तथा संयुक्त प्रान्तके दक्षिण-पूर्वी जिलों में हुई। संयुक्तप्रान्तके बलिया स्थानमें जिसे जीतनेमें सरकारको काफी विलम्ब हुआ था व्यक्तिगत आक्रमण तथा आघात पहुँचानेकी बहुत कम घटनाएँ हुई। वहाँ पुलिस स्थितिका सामना करनेमें असफल हो गयी। पुलिसके सहायतार्थ स्पेशल आर्म्ड कांस्टेबुलरीका गठन किया गया, ब्रिटिश सैनिकों तथा गुरखोंका प्रयोग किया गया, भारतीय सैनिकोंको अनजान स्थानोंमें भेजा गया जहाँ की भाषा ही वे नहीं समझ सकते थे। भारतीय सेना के कुछ विशेष वर्गों के अतिरिक्त अन्यका बहुत कम प्रयोग किया गया। यह सब हुआ किन्तु यदि सरकारने जनताके मनोभावको पहलेसे समझनेका चेष्टा का होती तो भारतीय समस्या समाधान के निकट पहुंच गयी होती, किन्तु ऐसा होता ही क्यों, उसने तो दमन की पहलेसे ही तैयारी कर ली थी। वायसरायकी आज्ञासे कानूनों-का क्षणभरमें बनना खिलवाड़ हो गया था। धमकियां बढ़ने लगीं। दमन सफल हो गया। विद्रोह दब गया। फिर क्या था अवसरवादी सरकार की ओर हो गये और सरकारको चुनौती देनेवालोंको बुरा भला कहने लगे। सरकारकी गुप्त संस्थाएं दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ने लगीं। अत्याचार तथा घूसखोरीका बाजार गर्म हो गया। स्कूलों तथा कालेजोंके छात्रोंको सजाएं दी गयीं, हजारों व्यक्तियोंको कोड़े लगाये गये। सार्वजनिक कार्य-वाहियां रोक दी गयीं।

किन्तु सबसे अधिक क्षति सरल हृदय निर्धन ग्रामीणोंकी हुई उनका कष्ट पीढ़ियोंके लिये स्थायी बन गया। भारत माताके प्रति अपना भक्तिका उन्होंने परिचय दे दिया। वे प्रयत्नमें असफल रहे और असफलताका भार उनके निर्बल कंधों पर पड़ा। ऐसी भी घटनाएं घटी हैं जिनमें ग्रामके ग्रामकी समस्त जनताको

कोड़े लगाये गये हैं और उन्हें तबतक कोड़े लगाये गये जब तक वे मर नहीं गये। बङ्गाल सरकारकी ओरसे बताया गया है कि १९४२ के तूफानके पूर्व तथा पश्चात् तमलुक तथा कंटाई सब डिवीजनके १६३ कांग्रेस कैम्पों तथा घरोंका जला डाला गया। तूफानने विनाशका भयंकर दृश्य उपस्थित कर दिया था किन्तु इससे सरकारका भीषण दमन नीतिमें कोई परिवर्तन न हुआ।

ग्रामोंसे बहुत बड़ी राशि सामुहिक जुरमानेके रूपमें वसूल की गयी! कामनसभामें मि० एमरीके वक्तव्यके अनुसार ९० लाख का सामुहिक अर्थ दण्ड किया गया था। जिनमें ७८५०००० वसूल हुआ। भूखे नंगे दीन असहाय ग्रामीणोंसे सामुहिक जुर्मानोंके साथ बलपूर्वक जिस प्रकार अतिरिक्त धन-राशि एकत्रितकी गयी उसकी कल्पना ही हृदय कपाये देती है।

फिर भी १९४२ में जो हुआ उसके लिये मुझे बहुत गौरव है, मुझे अफसोस होता अगर जनता चुपचाप राष्ट्रीय अपमान सह लेती।

—:*::—

भारतका युद्धास्त्र

यू० पी० कान्फ्रेंस बनारस में १२ अक्टूबर १९२३ को दिया भाषण।

हमारा मामला नाभामें चल रहा था, और हम अनेक दिनों तक दुनियासे अलग कर दिये गये थे। एक मित्रको अदालतमें प्रवेश करनेकी अनुमति मिली और उन्होंने मेरे कानमें धीरेसे कह दिया कि मैं इस कान्फ्रेंसका सभापति चुना गया हूँ। बिलकुल आदमी होने के कारण इस विश्वास और सम्मान सूचनासे मुझे आनन्द हुआ लेकिन शीघ्र ही मुझे भूतपूर्व सभापतियोंकी बुद्धिमत्ता और साहसका स्मरण और इस महान उत्तरदायित्व पूर्ण पदकी जिम्मेदारीका ख्याल आया, और कुछ संकुचित सा हो गया और फिर आदमी होनेकी वजहसे जेलमें होनेके कारण उत्तरदायित्वसे बरी रह सकनेकी सम्भावना पर प्रसन्न हुआ किन्तु नाभाके शासकोंने कुछ और ही किया। मुझे अफसोस है कि वहांसे छूटनेके बादके दिन बीमारीमें बीते।

ऐसे मौकोंपर सोच विचार कर पहलेसे लिखे, छपे भाषणोंके पढ़ने और बटवानेका रिवाज है। मुझे यह सब करनेका मौका नहीं मिला लेकिन अगर मुझे मौका मिलता भी तो शक है कि मैं रेकार्ड करने लायक कुछ लिख पाता। आपने राष्ट्रीय इतिहास के अद्भुत और कठिन समय में जिम्मेदारी उठानेके लिये मुझे चुना है, जब कि एक दल दूसरेसे लड़ रहा है और हमारे महान् आन्दोलनकी नींव हिल गयी है। ऐसे मौके पर हमें सर्वोत्तम और बुद्धिमत्तापूर्ण निर्देशकी जरूरत है! मैं कैसे मान लूं कि मैं वह काम कर सकूंगा!

लगभग महीने भर पहले कांग्रेसकी बैठक हुई और उसने महत्वपूर्ण निर्णय किया। कांग्रेसके अधीन हमारा संगठन होनेके कारण हम उसके निर्णयके खिलाफ कैसे जा सकते हैं? लेकिन हमारा लक्ष्य क्या है और किस तरह हम वहां तक पहुंचेंगे इस मामलेमें हमारा दिल-दिमाग बिलकुल साफ रहना चाहिये। तीन साल पहले हमारे अन्दर कोई सन्देह नहीं था। १९२ और १९२१ में हमारे अन्दर पूरी आस्था और विश्वास था, हम बहस और तर्क नहीं करते थे। हम जानते थे, हम ठीक हैं और विजय के बाद विजय हासिल करते जा रहे हैं। हमने सच्चाईका अनुभव किया और उचित उद्देश्यके लिये अनुपम और गौरवपूर्ण ढंगसे युद्ध करनेके लिये हमने गौरव अनुभव किया। वे दिन हमारी धरोहर हैं। इसके बाद हमारे नेताओंने हमें छोड़ दिया, कमजोर होकर हम सन्देह करने लगे और हमारा उत्साह घटने लगा। पुरातनके प्रति जो श्रद्धा थी, वह चली गया और उसके साथ आत्मविश्वास भी चला गया। इसके बाद कई साल आपसी झगड़ोंमें गया। जब हम अपना दिमाग तक ठीक न रख सके तब हम ठीक निर्णयपर कैसे पहुंच सकते थे? फलतः अहिंसात्मक असहयोग कमजोर होने लगा। लोग कहते है, दिल्ली कांग्रेसका प्रस्ताव असयोगका अन्त करता है। मै कहता हूँ अहिंसात्मक असहयोग मर नहीं सह सकता, यह हमारे देशकी सीमा पारकर संसारकी सम्पत्ति बन गया है।

हां, तो अब सवाल यह है कि हमारा लक्ष्य क्या है? और उनके पानेके तरीके क्या होने चाहिये? हमारा ध्येय लघु और सीधा है लेकिन इसकी व्याख्याएं बहुत-सी हैं। हमने यह स्पष्ट कर दिया है कि हमे प्रान्तीय-सरकारके विभागोंको हस्तान्तरित किये जानेमे कोई मतलब नहीं रखना चाहते। पूर्ण आन्तरिक

स्वाधीनता का अर्थ है—अर्थ, सेना और पुलिस पर हमारा पूरा अधिकार होना चाहिये। जब तक इनपर हमारा पूर्ण अधिकार न हो भारत में स्वाधीनता नहीं हो सकता। यह कमसे कम है लेकिन सवाल यह है कि क्या हम अपने स्वराज्यके ध्येयकी परिभाषा स्वाधीनता करें? व्यक्तिगत तौरसे मैं उस दिनका स्वागत करूँगा जिस दिन कांग्रेस अपना ध्येय स्वाधीनता घोषित करेगी। मेरा विश्वास है कि भारतका एकमात्र उचित लक्ष्य स्वाधीनता है। पर मैं इस अवसर पर कांग्रेसके ध्येयको बदलना नहीं चाहता क्योंकि इससे अनावश्यक तर्क होगा और मुमकिन है कांग्रेस संकुचित हो जाय और कुछको अलग हो जाना पड़े। हमें कांग्रेसका द्वार सबके लिये खुला रहने देना चाहिये। जब जनता स्वाधीनताको भलीभांति समझ लेगी तब अपने आप परिवर्तन हो जायगा।

मैंने कहा है, महात्माजी द्वारा प्रारम्भ किये गये असहयोग आन्दोलनमें मेरा विश्वास है। मैं विश्वास करता हूँ कि अहिंसात्मक असहयोग द्वारा भारत और विश्वकी मुक्ति होगी। संसारमें काफी दिन हिंसा का बोलबाला रहा। किसी भी समस्या के सुलझानेमें हिंसाकी अयोग्यता यूरोपकी अवस्थासे सिद्ध है। मेरा यकीन है कि यूरोपमें हिंसा बढ़ती चली जायगी, और यह हिंसा अपनी लगायी हुई आगमें जलकर राखका ढेर हो जायगी। बहुतसे लोग हँसते हैं कि अहिंसा क्या कभी मानव और राष्ट्रके जीवनमें निर्देशका रूप ग्रहण कर सकेगी? वे मानव-प्रकृति और संसारमें व्याप्त क्रोध, घृणा और हिंसाकी तरफ इशारा करते हैं। हममेंसे बिरले ही इनसे रहित होंगे! मुझे खुद अपने बारेमें ही अफसोस है कि मेरे अन्दर गर्म विचार रहते हैं और बड़ी मुश्किलसे मैं इस सीधे संकुचित रास्तेपर लौट पाता

हूँ। मगर जो हँसते हैं और मजाक उड़ाते हैं वे ऐसा न कर इसकी अन्दरूनी शक्तिको महसूस करते और इस विषयका अध्ययन करते तो उत्तम होता। संसारके बड़े-बड़े विचारवान् अहिंसाके सम्बन्धमें सोचने लगे हैं और भारतीय जनतापर इसका आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ा है।

हमारे आन्दोलनकी दो विशेषतायें हैं—असहयोग और अहिंसा। असहयोग मामूली आदमी भी समझ सकता है लेकिन बहुत कमने इसे महसूस किया है, महात्माजीने ही इसकी शक्ति से जनताको परिचित कराया। बुराई इसलिये फूलती फलती है कि हम उसे बर्दाश्त करते हैं और उसकी सहायता करते हैं। निर्दय सतानेवाली सरकार चलती रहती है, सिर्फ इसलिये कि शासित जनता अत्याचार सहती है। इङ्गलैंड भारतको गुलाम बनाये हुए है इसलिये कि भारतीय अँग्रेजोंके साथ सहयोग करते हैं और इस प्रकार ब्रिटिश शासन दृढ़ करते हैं। सरकारसे अपना सहयोग हटा लीजिये और देखिये कि सरकारका ढाँचा लड़खड़ा कर गिर जाता है। यह अपने आप ही होता है इसके लिये प्रमाणकी जरूरत नहीं है।

लेकिन तर्क और परिणामसे स्वयं सिद्ध होनेपर भी हममेंसे बहुतसे इस साधनको नहीं अपनाते। ब्रिटिश शासनने हमें कायर बना दिया है इसीलिये हमारे अन्दर साहस नहीं रहा, हम जोखिम नहीं उठा सकते। भारतकी स्वतन्त्रता जैसे अनुपम उपहारके लिये भी कुछ करनेसे हम डरते हैं। असहयोगका विचार भारतीय जनताके हृदयमें जम गया है, लेकिन हृदयमें जो विचार है उसे प्रगट करनेमें साहसका अभाव कारण बन जाता है। बहुतोंके लिये यह आर्थिक सवाल है। लेकिन उन्हें क्या कहा जाय जो अँग्रेज अफसरोंके सम्मानमें अपना समय

शक्ति और धन खर्च करते है ! हम इतने गिर गये हैं कि पढ़े लिखे भी अपनी बेइज्जतीमें खुद सहायक बनते नहीं शर्माते। मैं अँग्रेज अफसरोंकी शिकायत नहीं करता, वे बहादुर हैं और अपनी ताकत भर अपने देशकी सेवा करते हैं। मैं चाहता हूँ हमारे देशवासी भी वैसे ही बहादुर हों और अपने देशके गौरव और सम्मानका ख्याल रखें।

अहिंसाकी कार्यकारितामें मेरा दृढ़ विश्वास है। लेकिन अहिंसाका कमजोरी या कायरतासे कोई सम्बन्ध नहीं है। महात्माजीने बार-बार कहा है कि कायरतासे तो हिंसा बेहतर है। भय और कायरता सबसे बड़े पाप हैं और हमारे देशमें ये पाप काफी फैले हुए हैं, अगर हम भय और कायरतासे छुटकारा पालें तो घृणा नहीं रह जायगी, इसलिये हमें कायरताको अपने हृदयसे निकाल फेंकना चाहिये और कभी आश्रय नहीं देना चाहिये। हमें उस कमजोरीको अपने हृदयसे निकाल फेंकना है जिसकी वजहसे हम पाप करनेकी इच्छा करते हुए और पापका विचार करते हुए भी पाप नहीं कर पाते। यह अवस्था बहुत बुरी है। पाप करनेकी इच्छा रख, पापमें रहकर, पाप न करनेमें कोई बहादुरी नहीं है, इससे तो जान बूझकर अपनी ताकतसे पाप करना बेहतर है क्योंकि पाप करनेका साहस करनेवाला, जब सुधर जायगा तब अच्छे कार्य भी कर सकेगा।

मैं अहिंसापर जोर दे रहा हूँ, क्योंकि इस सम्बन्धमें हमारी धारणा साफ रहना चाहिये। कुछ कालके बाद बङ्गालमें हिंसात्मक क्रान्तिकारी आन्दोलन चल पड़ा। उसमें भारतकी स्वाधीनताके लिये जो व्यग्रता और भावना है और जिसकी वजहसे बहुतसे युवकोंने हिंसाको अपनाया है, उस व्यग्रता और भावनाकी सराहना कर सकता हूँ। मैं उस बेपरवाह साहसकी तारीफ कर

सकता हूँ जो किसीके मतकी परवाह नहीं करता, लेकिन मैं नहीं समझ पाता छिटपुट हिंसा स्वाधीनता नजदीक कैसे लाती है? स्वाधीनता हमारा हक है और पुराने रिवाज तथा देशके साधारण कानूनके अनुसार हम स्वाधीनता पानेके लिये हिंसा अपना सकते हैं। लेकिन स्वाधीनता भी सन्देहात्मक वस्तु हो जायगी अगर हम उसे पानेके लिये झूठे तरीके इस्तेमाल करें। किसी खास परिस्थितिमें हिंसा युक्तियुक्त हो सकती है, लेकिन वह हिंसा प्रत्यक्ष, साफ-साफ होनी चाहिये। किसी भी हालतमें गुप्त हत्याका समर्थन नहीं किया जा सकता, इन तरीकोंसे आज तक किसी देशको लाभ नहीं पहुँचा। इससे हमारे महान् लक्ष्यको हानि पहुँचती है और दुनियाकी हमदर्दी हमारे साथ नहीं रहती इसलिये हम किसी भी हालतमें बम या छुरा नहीं अपना सकते। जो बिना सोचे इन तरीकोंको अपनाते हैं वे दिलसे जो प्राप्त करना चाहते हैं, अपने कामसे उसीको नुकसान पहुँचाते हैं। हम प्रत्यक्ष और सङ्गठित हिंसाकी बात भी नहीं सोच सकते। इस विषयको चुननेका हमारे पास है ही क्या? आज पश्चिममें बोलसेविज्म और फासिज्मकी धारा बह रही है। ये दोनों वाद दरअस्ल एकसे हैं जो हिंसा और असहिष्णुताका प्रतिनिधित्व करते हैं। हमारे सामने एक तरफ लेनिन और मुसोलिनी हैं और दूसरी ओर गान्धी हैं। भारतकी आत्माका प्रतिनिधित्व कौन करता है, क्या इसके सम्बन्धमें कोई शक है?

भारतने तीन साल पहले ही अपना रास्ता चुन लिया। उसने अहिंसा, कष्ट-सहन, प्रत्यक्ष संग्राम और शान्तिपूर्ण क्रान्तिका रास्ता चुना है। इस रास्तेसे हटा नहीं जा सकता, समय-समय पर परिवर्तन हो सकता है, आजादीका जो चित्र हमारी कल्पना दृष्टिके सामने है उसे कभी नहीं भुलाया जा सकता और किसी

महान् कार्यकी सिद्धिके लिये कष्ट सहनेमें जो गौरव है उसे नहीं छोड़ा जा सकता ! हमें आने वाले संग्रामके लिये तैयार रहना चाहिये ।

लेकिन अगर हम साम्प्रदायिक समस्याको बुद्धिमानीसे सुलझा न सके तो हमारे त्यागसे वांछित फल न निकलेगा। कुछ फटी हुई खोपड़ियोंका सवाल नहीं है, बल्कि असली सवाल है, जिसके लिये सिर फुड़ौवल होती है। यह अचरजकी बात है कि मामूली बात और बच्चों जैसे अन्धविश्वास या भ्रान्त धारणा के लिये लोग खतरा मोल लेते हैं और युक्ति तथा दलील नहीं मानते। बहुतसे पापोंके लिये धर्मका बहाना बना लिया गया है। साम्प्रदायिक स्वार्थोंकी रक्षाके लिये बहुत कुछ कहा और लिखा जा चुका है। यह भी सुना है कि इस कार्यके लिये सभा समितियाँ बनायी जा रही है। मैं समझता हूँ यह हल्ला-गुल्ला बेकार है। कार्यके लिये हमारे अन्दर साहसका अभाव है। हमारी निर्बलता हमें गुस्सा दिलाती है और हम बहादुराना शब्दोंसे अपना भय छिपाते हैं और अपने असली प्रतिद्वन्दीका सामना करनेका साहस न कर अपने भाई और पड़ौसी पर हमला करते हैं। गुलाम ऐसा ही करते रहे हैं। हमें चेष्टा करनी चाहिये कि एक सम्प्रदाय द्वारा दूसरे सम्प्रदायके विरोधको सब कार्यवाहियोंका खात्मा हो जाय और असली समस्यापर हम सबका ध्यान जमे। आपसी झगड़ोंके लिये हमारे पास समय नहीं है।

मैं अब एक बातका और ध्यान दिलाना चाहता हूँ कि बिन तैयारीके संग्राम नहीं चल सकता। यह काम आवश्यक है रचनात्मक कार्यक्रम द्वारा ही हमारी परीक्षा होती है। हमें कांग्रेस कमेटियोंको दृढ़ कर खद्दरका सन्देश घर-घर पहुँचना चाहिये

महात्माजीने जेल जाते समय सन्देश दिया था। हर एकको कोई न कोई रचनात्मक कार्य करना चाहिये।

मैं आशासे परिपूर्ण हूँ, मेरा विश्वास है कि शीघ्र ही भारतमें राजनैतिक स्वाधीनता आयगी, तब हम कहीं कमजोर और अयोग्य न हों! ऐसी अवस्था न आने पावे इसलिये हमें अभी से तैयार होना चाहिये, हमें महान् और दृढ़ भारतके लिये प्रयत्न करना चाहिये, हमें भारतको अपने नेताके योग्य बनाना चाहिये, जिसे भगवानने कृपा कर हमारे देशको दिया है।

नेहरू-जिन्ना पत्र-व्यवहार

नेहरूजीका श्रीजिन्नाको पत्र

तारीख ६ अक्टूबर (गोपनीय)

'कल हमने जिन मामलों पर तथा मुस्लिम लीग और कांग्रेस के बीच समझौते पर बातचीत की थी उसके सम्बन्धमें मैंने अपने कुछ साथियोंसे बातें कीं। हम सब समझते हैं कि इससे अधिक प्रसन्नताकी बात और कुछ न होगी। तथा देशके हितमें इससे ज्यादा और लाभदायक कुछ न होगा कि दोनों संस्थाएँ फिर मित्रोंके रूपमें मिलें। उनके दिमागमें कोई सन्देह तथा गोपनीय बात न रहे और वे पारस्परिक विचार विमर्शसे अपने मतभेदोंको दूर करें तथा वायसराय या दूसरे लोगोंके मार्फत ब्रिटिश सरकार या और किसी विदेशी ताकतके हस्तक्षेपकी इच्छा न करें और न उस हस्तक्षेपको होने दें। अतएव यदि लीग समस्त भारतकी ओरसे एक संयुक्त मण्डल (टीम) के रूपमें कार्य करनेकी दृष्टिसे अन्त.कालीन सरकारमें शामिल होनेका निर्णय करे तो हम उसका स्वागत करेंगे।

बातचीतके दौरानमें आपने जो मुद्दे रखे वे ये हैं।

१—आपका गांधीजी द्वारा सुझाया हुआ फामूला।

२—लीग इस समय परिगणित जातियों और अल्प संख्यकों का प्रतिनिधित्व करनेवाले सदस्योंके लिये उत्तरदायी नहीं है।

३—यदि परिगणित जातियोंसे भिन्न अल्पसंख्यकोंका प्रतिनिधित्व करनेवाले सदस्योंमें से किसीका स्थान रिक्त हो जाय तो क्या करना चाहिये।

४—बड़े साम्प्रदायिक प्रश्नोंके निर्णयके लिये क्या विधि स्वीकार की जाय।

५—बदलते हुए उपाध्यक्ष।

मुद्दा संख्या १ के बारेमें हम अनुभव करते हैं कि फार्मूलाके शब्द प्रसन्नता दायक नहीं हैं। हम इसके मूलमें निहित उद्देश्य पर शङ्का नहीं करते। हम चुनावके फलको देखते हुए मुस्लिम लीगको मुसलमानोंके बहुमतकी अधिकृत प्रतिनिधि संस्था मानने के लिये तैयार हैं और प्रजातन्त्री सिद्धान्तोंके अनुसार उसको हिन्दुस्तानके मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व करनेका असंदिग्ध अधिकार है। बशर्ते कि इन्हीं कारणोंसे लीग कांग्रेसको गैर मुस्लिमों की और उन मुसलमानोंकी जो कांग्रेसके साथ है, प्रतिनिधि संस्था मान ले। कांग्रेस अपने प्रतिनिधियोंको कांग्रेस में से चुननेके सम्बन्धमें कोई मर्यादा या सीमा माननेके लिये तैयार नहीं है। इसीलिये हमारा सुझाव है कि कोई फार्मूला आवश्यक नहीं है और प्रत्येक संस्था अपनी योग्यता पर स्थिर हो सकती है।

मुद्दा संख्या २ के बारेमें यह है कि लीगके उत्तरदायी होनेका प्रश्न ही नहीं उठता, क्योंकि इस बारेमें वर्तमान विधान पर आपत्ति नहीं है।

मुद्दा संख्या ३ के सम्बन्धमें मुझे यह कहना है कि यदि ऐसा कोई स्थान रिक्त हो तो पूरा मन्त्रिमण्डल विचार करेगा कि उसकी पूर्तिके लिये क्या किया जाय और उसके मुताबिक वायसरायको सलाह देगा।

मुद्दा संख्या ४ के सम्बन्धमें आपका संघका सुझाव ठीक नहीं है। मन्त्रिमण्डलके सामने आनेवाले प्रश्नोंका निवारण अदालत का विषय नहीं बनाया जा सकता। हमें ऐसे प्रश्न आपस में तय करने चाहिये, और मन्त्रिमण्डलके सामने सवसम्मत हल आना चाहिये। इस रूपमें पञ्च-फैसलेके लिये नहीं जाना होगा।

मुद्दा संख्या ५—वायसरायकी कार्य कारिणीके उपाध्यक्षको बारी बारीसे बनानेका प्रश्न नहीं उठता। हमें अतिरिक्त उपाध्यक्ष रखनेमें कोई आपत्ति नहीं है। वह मन्त्रिमण्डलकी एक सूत्रीकरण समितिका उपाध्यक्ष रह सकता है और कमेटीकी ऐसी बैठकोंकी अध्यक्षता कर सकता है।

मुझे आशा है कि यदि आपकी समिति अन्ततः यह तय करती है कि लीग मन्त्रिमण्डलमें शामिल हो जाय, तो वह विधान परिषद्में भी शामिल होनेका निर्णय करेगी।

श्री जिन्नाका नेहरूजीको पत्र

तारीख ७ अक्टूबर

"मुझे आपका ६ अक्टूबरका पत्र मिला। जिसके लिये धन्यवाद। आपने अपने पत्रके पहले पैरेमें जो भावोद्गार व्यक्त किये हैं उनकी मैं सराहना करता हूँ और वैसे ही भाव अपनी ओरसे भी प्रकट करता हूँ।

आपके पत्रके दूसरे पैरेके सम्बन्धमें मेरा पहला सवाल फार्मूलाके सम्बन्धमें है। उक्त फार्मूलेको गांधीजीने और मैंने स्वीकार कर लिया था और हम दोनोंकी भेट इसी आधारपर हुई थी। यह भेट इस उद्देश्यसे हुई थी कि अन्तःकालीन सरकार

के पुनर्निर्माणके सम्बन्धमें बाकी सवालोंपर समझौता हो जाय। वह फार्मूला इस प्रकार है :—

कांग्रेस इस बातको चुनौती नहीं देती है और यह बात स्वीकार करती है कि अब मुस्लिम लीग ही भारतके अधिकांश मुसलमानोंकी एक मात्र संस्था है। इसलिये और प्रजातन्त्रीय सिद्धान्तोंके अनुसार लीगको भारतीय मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व करनेका निर्विवाद अधिकार है। परन्तु कांग्रेस इसके लिये तैयार नहीं हो सकती कि उसे अपने इच्छानुसार अपने सदस्यों मेंसे प्रतिनिधि चुननेके मामलेमें किसी प्रकारके प्रतिबन्धका सामना करना पड़े।

और अब अपने पत्रमें आपने इस फार्मूलेमें रद्दोबदल ही नहीं किया है बल्कि आप फार्मूलेको आवश्यक ही नहीं समझते हैं। मुझे खेद है कि मैं इसमें भाषा सम्बन्धी या किसी भी तरहकी रद्दोबदल को स्वीकार नहीं कर सकता क्योंकि उसी आधारपर हम दोनों अन्य सवालोंपर विचार विनिमय करनेको तैयार हुए थे। न मैं यही माननेको तैयार हूँ कि फार्मूला अनावश्यक है। उसपर गांधीजीने हस्ताक्षर किये है और मैंने स्वीकार किया था।

चूँकि अन्य सारे मामलोंपर बातचीतका आधार यही फार्मूला था जिसे गांधीजीने मान लिया था, इसलिये यदि आप इसे उन सवालोंका आधार स्वरूप, जिनपर मेरी आपकी बातचीत हो चुकी है, न मानेंगे तो मामला आगे न बढ़ पायेगा। मैं इस पत्रके साथ उन सारे मुद्दोंको लिखकर भेज रहा हूँ जिन्हें मै आपके सामने रख चुका हूँ। यदि आपने फार्मूला मंजूर कर लिया तो मैं बातचीत जारी रखनेको तैयार हूँ जिससे उनके अनुरूप समझौता हो सके जिन्हें आपने अपने पत्रके पहले पैरेमें व्यक्त

किया है। मैं तो यही चाहता हूँ कि हममें आपसमें ही अवि-लम्ब समझौता हो जाय।

मेरी रायमें निम्न ९ बातोंको कांग्रेस द्वारा मान लेने पर समझौता हो सकता है :—

१—एग्जीक्यूटिव कौंसिलके सदस्य कुल १४ होंगे।

२—कांग्रेस ६ सदस्योंको नामज़ाद करेगी जिनमें एक सदस्य दलित जातिका होगा। परन्तु उसका यह अर्थ नहीं है कि मुस्लिम लीग दलित जातिके प्रतिनिधिके चुनावमें सहमत है। इस मामलेमें अन्तिम जिम्मेदारी गवर्नर जनरल और वायसराय की है।

३—बाकी ५ सदस्योंमें कांग्रेसको अपनी पसन्दके मुसलमान को शामिल नहीं करना चाहिये।

४—संरक्षण: यह परिपाटी स्थापित हो जानी चाहिये कि जिस साम्प्रदायिक मामलेका अधिकांश हिन्दू या मुसलमान सदस्य विरोध करें उस पर किसी प्रकारका निश्चय न किया जाय।

५—जिस प्रकार संयुक्त राष्ट्र सम्मेलनमें किया गया है कौंसिलके उप सभापतिके पदोंपर बारी-बारीसे दोनों प्रधान जातियोंके लोग नियुक्त किये जाँय।

६—अल्प संख्यक जातियोंके तीन प्रतिनिधियों सिख, भार-तीय ईसाई और पारसीके चुनावके मामलेमें मुस्लिम लीगसे सलाह नहीं ली गयी थी और यह न समझना चाहिये कि जो चुनाव किया गया है लीग उसे पसन्द करती है। पर भविष्यमें पद त्याग या मृत्यु आदिके कारण यदि कोई स्थान रिक्त हो, इन अल्पसंख्यक जातियोंके प्रतिनिधियोंको देशके दोनों प्रमुख दल—लीग और कांग्रेस आपसमें चर्चा करके चुने।

७—पोर्ट फोलियोंके सबसे अधिक महत्वपूर्ण विभाग दोनों प्रमुख दलों, मुस्लिम लीग और कांग्रेसको मिलने चाहिये।

८—जब तक उक्त दोनों प्रधानदल कांग्रेस और मुस्लिम लीग सहमत न हों इस व्यवस्थामें किसी प्रकारका हेर-फेर न किया जाय।

९—दीर्घकालीन योजनापर विचार उस समय तकके लिये स्थगित कर दिया जाय जब तक अधिक अच्छा वातावरण स्थापित न हो जाय और उपरोक्त मुद्दों पर समझौता होकर अन्त कालीन सरकारकी स्थापना न हो जाय।

श्रीजिन्नाको नेहरूजीका पत्र

ता० ८ अक्टूबर

"मुझे आपका ७ अक्टूबरका पत्र तब मिला जब कि मैं कल शाम आपसे मिलनेके लिये बड़ौदा भवन जा रहा था। मैंने शीघ्रतासे इसे पढ़ा मुझे दुःख हुआ कि यह पत्र हमारी पहिली मुलाकातकी बातचीतके विपरीत था। अतः हमने मुद्दोंपर बात-चीत की, परन्तु दुर्भाग्यसे हम एक दूसरे को सन्तुष्ट न कर सके। वापिस आनेके पश्चात मैंने आपके पत्रको फिर ध्यानसे पढ़ा तथा अपने कुछ साथियोंसे विचार विमर्श किया। उन्हें भी केवल आपके पत्र पर ही नहीं, बल्कि पत्रसे सम्बद्ध मुद्दोंकी सूचीपर आश्चर्य हुआ। यह सूची न तो पहिले देखी ही गयी थी, और न उसपर विचार किया गया था। बात-चीतके पश्चात इसका भेजा जाना असंगत प्रतीत होता है।

जैसा मैंने आपको बताया, मैं तथा मेरे साथी उस फार्मूला से सहमत नहीं हैं जिसे आपने तथा गांधीजीने स्वीकार कर लिया है। मेरे और आपके बीच जो मुलाकात आयोजित की

गई वह मेरे विचारसे उसी फार्मूलेके आधारपर की गई मालूम नहीं होती है जैसा मैंने आपने ६ अक्टूबरके पत्रमें लिखा था, हम उस फार्मूलाके सारमे सहमत होनेके लिये तैयार थे। उस फार्मूलेका एक पैरा था जिसका आपने अपने पत्रमें उल्लेख नहीं किया। यह पैरा इस प्रकार है—"यह समझा जाता है कि अन्तः-कालीन सरकारके सभी मन्त्रिगण समस्त भारतके हितके लिये संगठित होकर कार्य करेंगे तथा वे किसी भी मामलेमें गवर्नर-जनरलका हस्तक्षेप नहीं होने देंगे।"

हमारा अब भी यह विचार है कि यह फार्मूला ठीक रूपमें व्यक्त नहीं किया गया है, परन्तु फिर भी समझौतेके, जिसके लिये हम इतने उत्सुक हैं, हम उक्त फार्मूलेको उसके पूर्णरूप में, जिसमें वह पैरा भी सम्मिलित है जिसका आपने अपने पत्रमें उल्लेख नहीं किया, स्वीकार करनेको तैयार हैं।

मुझे आशा है कि आप इस स्थितिको पूर्णतः स्पष्ट करनेके लिये सहमत होंगे। यह बात साफ तौरसे कही जा चुकी है कि कांग्रेसको अपने कोटेमें एक मुस्लिमको रखनेका हक है। मैंने अपने पहिले पत्रमें राष्ट्रवादी मुसलमानों तथा अल्प-संख्यकोंके सम्बन्धमें कांग्रेसकी स्थिति स्पष्ट कर दी थी जिसे अब आप चुनौती नहीं दे सकेंगे।

मैंने अपने ६ अक्टूबरके पत्रके दूसरे, तीसरे और चौथे मुद्दोंके सम्बन्धमें अपनी स्थितिको स्पष्ट कर दिया है, इसके लिये और अधिक लिखनेकी आवश्यकता नहीं। हम आपको संतुष्ट करनेके लिये जितना आगे बढ़ सके बढ़े, हम इससे और आगे बढ़नेमें असमर्थ हैं। मुझे विश्वास है आप हमारी स्थितिको समझेंगे।

पाँचवें मुद्देके सम्बन्धमें (उपाध्यक्षका प्रश्न) आपने कल एक

सुझाव रखा था कि उपाध्यक्ष तथा केन्द्रीय असेम्बलीका नेता एक ही व्यक्ति नहीं होना चाहिये। इन परिस्थितियोंमें इसके यह अर्थ हुए कि असेम्बलीका नेता मन्त्रिमण्डलका एक लीगी सदस्य होना चाहिये। हम इससे सहमत होंगे।

मैंने सभी मुद्दोंपर ध्यानपूर्वक विचार करके, तथा अपने साथियोंसे विचार करनेके पश्चात ही आपको यह पत्र लिखा है। मैंने आपको यह विवादके रूपमें नहीं लिखा है, बल्कि इस पत्रके द्वारा हमने उस समझौतेकी सदिच्छा प्रकट की है जिसके लिये हम उत्सुक हैं। हमने इन मामलों पर काफी विचार किया है और अब समय आ गया है कि इसके सम्बन्धमें अन्तिम रूपसे निर्णय किया जाय।

श्रीजिन्नाका नेहरूजीको पत्र

ता० १२ अक्टूबर

"मुझे आपका ८ अक्टूबरका पत्र, जो आपने मेरे ७ ता० के पत्रके उत्तरमें लिखा है, आज मिला। मैं इस बातपर खेद प्रकट करता हूँ कि आप व आपके सहयोगी गांधीजी तथा मेरे बीच हुए फार्मूलेको स्वीकार नहीं करते। गांधीजी व मैं इस बातपर सहमत हो गये थे कि उक्त आधार पर आप व मैं अन्त कालीन सरकारके पुनर्निर्माणके बारेमें शेष मुद्दोंपर समझौतेकी बातचीत कर सकते हैं। इसी कारणसे ५ अक्टूबरको मेरी व आपकी मुलाकातकी व्यवस्था की गई थी। मुझे यह जानकर आश्चर्य हुआ कि जहाँ तक आपको मालूम है मेरी व आपकी मुलाकात उक्त फार्मूलेके आधार पर नहीं की गई थी। ५ अक्टूबरको हमने सब मुद्दोंपर विचार किया और आपने मुझसे यह कहा था कि आप मुझे अगले दिन अपनी मुलाकातका समय बादमें

बतला देंगे। किन्तु अगले दिन आप मुझसे नहीं मिले, बल्कि आपका एक पत्र मुझे मिला। उसमें आपने लिखा था कि उक्त फार्मूलाके शब्द ठीक नहीं है और साथ ही सुझाव रखा था कि फार्मूलामें ये शब्द होने चाहिये। लीग कॉंग्रेसको समस्त गैर मुस्लिमों व उन मुस्लिमोंका जिन्होंने अपना भाग्य उसके हाथमें सौंप दिया है, प्रतिनिधित्व करनेवाली संस्था मानता है। साथ ही आपने यह लिखा था कि यदि फार्मूलेके इन शब्दोंसे लीग सहमत न हो, तो किसी फार्मूलेकी आवश्यकता नहीं है। आपने अपने ८ ता० के पत्रमें प्रथम पैरेमें समझौतेकी जो भावना प्रकट की थी, वह प्रस्तुत पत्रसे जाहिर नहीं होती। मेरे समझमें यह भी नहीं आता कि आप व आपके सहयोगी मेरे ७ ता० के पत्रसे घबरा क्यों गये, जिसमें मैंने अपनी कुछ बातें पेश की थीं। मेरी माँगोंकी उक्त सूचीमें कोई नयी बात नहीं थी, जिस पर हमने पहले दिन बहस न की हो, मैंने अपकी बातोंकी उक्त सूची केवल सहूलियतके लिये भेजी थी।

"प्रस्तुत पत्रमें आपने कहा है कि विभिन्न मामलोंके बारेमें कुछ हेर-फेरके सिवा आपकी वही राय है जो ता० ७ के पत्रमें अङ्कित है। अपके द्वारा किये गये हेर-फेर और उनपर मेरी प्रतिक्रिया इस प्रकार है:—

आप फार्मूलेको स्वीकार कर लेंगे, बशर्ते कि पैरा नम्बर २ उसमे शामिल कर लिया जाय।

इसके अर्थ यह हैं कि आप उस फार्मूलेसे जिसके आधार पर मैं बातचीत करनेके लिये राजी हुआ था, पीछे हट रहे हैं। मै इस परिवर्तनको स्वीकार नहीं कर सकता।

अछूत जातियोंके सम्बन्धमें भी मै आपके बिचार स्वीकार करनेके लिये तैयार नहीं हूँ।

चूँकि आपने अपनी स्थितिको बहुत सोच-विचारके बाद बतलाया है, अतः मैं ख्याल करता हूँ कि आपका यह अन्तिम उत्तर है। मुझे दुख है कि हम दोनों एक समझौता करनेमें असफल रहे हैं।"

नेहरूजीका श्री जिन्ना को पत्र

ता० १३ अक्तूबर

"१२ ता० के पत्रके लिए मैं आपका धन्यवाद करता हूँ। इस पत्रमें बहुत-सी बातें गलत कही गई हैं। जो कुछ आपने कहा है, उसका मेरी यादमें हमारी बात-चीतसे कोई मेल नहीं बैठता। लेकिन अब मुझे इस मामलेमें आगे जानेकी जरूरत नहीं है। क्योंकि वाइसरायसे मुझे खबर मिली है कि मुस्लिम लीगने अन्तःकालीन सरकारमें ५ स्थान लेने स्वीकार कर लिये हैं।"

समाजवादका सूर्योदय

आजादीकी पुकार, भारतमें नयी नहीं है। जिस दिन हमारा देश विदेशी शासनके नीचे आया, उसी दिनसे भारतमें ऐसे लोग होते आये हैं जिन्होंने स्वाधीनता संग्रामकी, कल्पना की, उसके लिये कोशिश की और अपना सब कुछ आजादीके लिये निछावर कर दिया। सन् सतावनका युद्ध, स्वाधीनताका संग्राम था जिसमें बहुतसे बहादुरीके काम हुए और चिरस्मरणीय बलिदान हुए। हमारे ही कुकृत्योंसे हमें उसमें सफलताकी जगह असफलता मिली। यहाँ झाँसी शहरमें मन उसी रानी झांसीकी तरफ चला जाता है, जो डरका नाम नहीं जानती थी, जो बड़ी बहादुरीसे लड़ी और प्रबल शत्रुओंका मुकाबिला करती हुई, भारत और भारतकी गौरवके लिये मरकर अमर हो गयी।

एक पीढ़ीके बाद दूसरी पीढ़ी आती गयी, कभी किसी पीढ़ीमें ऐसे स्त्री-पुरुषोंका अभाव नहीं था, जिन्होंने विदेशी शासकके सामने सिर झुकाने और घुटने टेकनेसे इन्कार न किया हो। इस अवज्ञाके लिये उन्हें बहुत भारी कीमत चुकानी पड़ी, लेकिन देश-भक्तिकी धारा बहती और बढ़ती हो गयी। हमारी याददाश्त कमजोर है और हम पिछले बहादुराना कामोंको भूल जाते हैं। लेकिन जिस पीढ़ीमें हम हैं उसमें भी बहुतसे स्वर्णिम देशभक्ति पूर्ण कार्य हुए हैं कोई भी जीवित देश, विदेशी शासनके नीचे, अपने विजेता के साथ शान्तिपूर्वक नहीं रह सकता, क्योंकि शान्ति, माने दासता है और दासताका अर्थ एक जीवित राष्ट्रके लिये जो कुछ महत्वपूर्ण है उसका सर्वनाश है। भारतके पुत्र

और पुत्रियोंने देशको विदेशी शासनसे स्वतन्त्र करनेके लिये जो अशेष बलिदान किये हैं, उनके द्वारा भारतने अपने जीवित रहनेका प्रमाण दिया है। जबतक भारत स्वतन्त्रता न प्राप्त कर लेगा, इङ्गलैंडके साथ कभी शान्तिसे न रहेगा। इसीलिये, हम स्वतन्त्रता चाहते हैं और उसके लिये प्रयत्न करते हैं। यह स्वतन्त्रता, साझीदार बननेसे—अगर वह सम्भव भी हो तो नहीं मिल सकता, साम्राज्यवादी प्रतिष्ठान जिसे ब्रिटिश साम्राज्य कहा जाता है, उसकी साझीदारीसे स्वतन्त्रता नहीं मिल सकती क्योंकि हमने अनुभव किया है कि साम्राज्यवाद और स्वाधीनता बिलकुल भिन्न है। जिस दिन ब्रिटेन साम्राज्यवाद छोड़ देगा, हम खुशीसे उसके साथ सहयोग करेंगे। लेकिन क्या इसका कोई लक्षण दिखलाई पड़ता है? या आप इतने सीधे हैं कि सोचते हैं कि उसके साम्राज्य या कामनवेल्थमें शामिल होकर उसे सुधार लेंगे। इङ्गलैंड आज साम्राज्यवादका महान् पुरोहित है और लेबर पार्टी वाले भी स्वाधीनता और स्वभाग्य निर्णयकी लम्बी चौड़ी बातें करते हैं और साम्राज्यवादी नीति बरतते हैं।

इङ्गलैंड हमारा दुश्मन नहीं है, हमारा असली दुश्मन साम्राज्यवाद है, और जहाँ साम्राज्यवाद है, वहाँ हम इच्छा-पूर्वक नहीं रह सकते। लेकिन आपको आजादीके लिये दलालों की जरूरत नहीं है। आप इसके नेता हैं, काँग्रेसने आपका अनु-सरण किया है।

हमने अभी तक राजनैतिक स्वाधीनता पर जोर दिया है। अब फिर मौका आ गया है कि आप नेतृत्व करें और बतलावें कि स्वाधीनतासे आपका तात्पर्य क्या है? कुछ लोगोंने कहा है, काँग्रेसको राजनीतिके सिवा अन्य मामलोंमें हाथ नहीं देना

चाहिये। लेकिन जीवनके हिस्से नहीं किये जा सकते। और न राजनीति ही, समाजके अन्य विषयोंकी उपेक्षा कर सकती है। हमारे सामने स्वाधीन समाज निर्माणकी समस्या है, यह समस्या हल करनेके लिये आपको सामाजिक और आर्थिक स्थिति बदलने पर विचार तथा तदनुसार कार्य करना होगा। वह स्वाधीनता ही क्या है जिसका परिणाम बहुतोंके लिये भूखों मरना और लाखोंके लिये शोषण हो। स्वाधीनता का अर्थ, हर तरहके शोषणसे मुक्ति होना चाहिये इसके लिये आपको समाजमें जो कुछ शोषणको मदद पहुँचाता है, उसपर आक्रमण करना होगा। यह भी एक शक्तिशाली कारण है कि हम क्यों औपनिवेशिक स्वराज्य नहीं चाहते, क्योंकि उस अवस्थामें विदेशी पूँजीका प्राधान्य होगा और विदेशी पूँजीका मतलब है विदेशी शोषण।

हमारे सामने दुमुही समस्या है, पहले ऐसा सामाजिक और आर्थिक कार्यक्रम बनाना है जो जनताको स्वाधीनता दे और फिर शक्ति पानेका तरीका बतलाया जाय जिससे हम अपना कार्यक्रम पूरा कर सकें।

लेकिन कार्यक्रम पर विचार करनेके पहले हमें अपने मुख्य उद्देश्यों और साधारण दृष्टिकोणको स्पष्ट करना चाहिये। हममेंसे बहुतसे जनताकी सेवा करने और उनकी गरीबी भगानेकी बात करते हैं, लेकिन शायद ही हमारी धारणा हो कि यह सब कैसे करेंगे? हम कल्पना करते हैं कि स्वराज्य होनेके साथ ही जनताका लाभ होगा। यह आंशिक सत्य हैं, लेकिन यह निश्चित नहीं है। हम अपनेको जनतासे बहुत कुछ भिन्न समझते हैं। हम अपनी बौद्धिक या आर्थिक समृद्धिके कारण अपने आपको जनताका स्वाभाविक नेता मानते हैं। हम हैं और जनता है। अब अगर दोनों के स्वार्थोंमें कोई संघर्ष हुआ तो

स्वभावत: हम अपनेको विशेष महत्व देंगे। हमें विश्वास है कि हम देशके चुने हुए नेता हैं और हमारे कन्धोंपर जनताको मुक्त करनेका भार है और साथ ही अपनी स्थिति सुधारनेका सुअवसर मिला है।

जाने और अनजाने हम इसी प्रकार सोचते हैं। यह ढोंग है। हमें जनताकी सेवा करनेकी बात न कहना चाहिये, जब कि हमारा प्रधान उद्देश्य अपनी श्रेणीकी सेवा करना है। इसीलिये कार्यक्रम बनाते समय हमें जनताके स्वार्थोंको सर्वोपरि रखना चाहिये और उनके लिये बाकी सबका बलिदान करना चाहिये। क्योंकि दरअसल जनता ही राष्ट्र है। उनकी समृद्धिपर ही देशकी समृद्धि निर्भर करती है। अपने कार्यक्रमको कार्यकरी बनानेके लिये हमें अपने आपको अनुगत रख अपने आन्दोलनमें जनताके प्रतिनिधियोंको प्रमुख स्थान देना चाहिये। तभी हम आन्दोलनको वास्तविक जन आन्दोलन बना सकते हैं। जो दरअसल आर्थिक परिवर्तनसे सम्बन्धित हैं, वे ही आर्थिक परिवर्तन लाते हैं, जन आन्दोलनका नेतृत्व और नियंत्रण उन्हींके हाथमें जाना चाहिये जो आज सर्वाधिक शोषित हैं। वे लड़खड़ायेंगे और गिरेंगे और बहुत सी भूलें करेंगे लेकिन उनके पीछे आर्थिक परिवर्तनके लिये आवश्यक शक्ति होगी और वही शक्ति उन्हें विजय तक ले जायगी। बिना इस शक्तिके हमारी राजनीति प्रस्तावों, जुलूसों और नारोंका समुच्चय होगी जिसके पीछे कोई कार्यकरी शक्ति नहीं। बहस मुबाहिसेसे स्वराज्य नहीं मिलेगा।

मैंने बार-बार कहा है, मेरे विचारसे हमारी बहुत सी सामाजिक बुराइयोंका समाधान एकमात्र समाजवाद है। इसलिये समाजवाद हमारा उद्देश्य होना चाहिये। आपमेंसे बहुतसे

सकारण सोचते होंगे कि एक बारमें ही हम वहाँ तक नहीं पहुँच सकते, इसलिये उससे कुछ उतरता हुआ फौरन काममें लाया जा सके ऐसा कार्यक्रम होना चाहिये। इस कान्फ्रेंसमें ऐसा कार्य-क्रम बनाना आसान नहीं है, इसलिये कान्फ्रेंसको इस कार्यके लिये एक कमेटी बनाना चाहिये। मैं कुछ महत्वपूर्ण विषयोंपर प्रकाश डालता हूँ।

हमारे कार्यक्रममें यह साफ होना चाहिये कि हम उन अयोग्यताओंको बर्दास्त नहीं कर सकते जिनमे दलित जाति-वाले कष्ट भोग रहे हैं। हमे इनको मिटा देना चाहिये और हर एकको आत्मविकासकी पूरी सुविधाएँ देनी चाहिये। महिलाओं परसे बहुतसे बोझ उठानेके लिये खास प्रयत्न होना चाहिये। ताकि उनकी कानूनी और अन्य तरहकी अयोग्यताएँ नष्ट हो जायँ, उनको पुरुषों के समान स्थिति मिलनी चाहिये, पर्दा जैसी बर्बर प्रथा हमेशा के लिये मिट जानी चाहिये।

हमारा आर्थिक कार्यक्रमका उद्देश्य सब तरहकी आर्थिक असमानताओंका नाश और सम्पत्तिका समान बटवारा होना चाहिये। गरीब और दलितको देनेके लिये आपको धनी और जिसके पास है, उससे लेना होगा। इसलिये हमें जहाँ तक सम्भव हो, सम्पत्तिका वर्तमान भेद समान करना है, अमीरों पर टैक्स बढ़ना चाहिये और गरीबीपरसे बिलकुल हटा लेना चाहिये।

इस प्रांतमें हमारे सामने जमीन्दारों और किसानोंकी समस्या है। दुर्भाग्यवश सब जगह जमीन्दार है और उन्होंने विकाशकी राहमें रोड़े अटकाये हैं। अपने प्रांतकी पंजाब और गुजरातसे तुलना कीजिये जहाँ किसान जमीनका मालिक है। हमारे प्रान्तमें देशका गौरव बढ़ानेवाले पुरुष हुए हैं और हैं,

लेकिन हमारे अन्दर मध्यम श्रेणी नहीं है हम अति समृद्धि और अतिगरीबीमें विशेष दक्ष हैं। इसलिये हमें जमीन्दारी प्रथाका सामना करना होगा, सिवा इसे नष्ट करनेके और हम क्या करेंगे। यह आजकलकी स्थितिके सर्वथा विरुद्ध पुराने जमानेका चिह्न है। इसलिये जमीन्दारी प्रथाको हमारे कार्य-क्रममें प्रमुख स्थान मिलना चाहिये। जमीन्दारी प्रथाकी जगह ऐसी प्रथा होनी चाहिये कि परिवारके भरण-पोषण लायक जमीन हर किसानके पास हो।

हम बड़ी जमीन्दारियोंको कैसे मिटावेंगे? कुछ जब्तीके पक्षमें हैं, कुछ हर्जाना देनेके पक्षमें। हर्जाना देनेके लिये इतना धन पाना असंभव है। धन मिल गया तो इससे जमीन्दारको लाभ होगा, क्योंकि उसे नगद रुपया मिल जायगा। हर्जाना दिया गया तो समृद्धिकी समानता नहीं होगी। दूसरे देशोंके उदाहरण बतलाते हैं कि जमीनके बदले पूरा हर्जाना देनेसे किसानको लाभ नहीं हुआ न समस्या सुलझी। इसलिये किसी भी हालतमें हम पूरा हर्जाना नहीं दे सकते।

जब्ती बिलकुल ठीक होनेपर भी बहुतोंके लिये बुरे दिन ला सकती है। कुछ मामलोंमें हर्जाना दिया जा सकता है पर इतना नहीं कि पानेवालेको फिर धनी बना दे।

जो जमीनसे अपना गुजर भर चलाता हो उसे टैक्ससे बरी कर देना चाहिये। किसानोंके कर्जकी समस्या भी हमारे सामने है, कठिन दिनोंमें इन कर्जोंमें छूट होनी चाहिये। कर जहाँ तक संभव हो सीधा होना चाहिये। सरकार और जनताके बीच में कर उगाहनेवाला तीसरा न होना चाहिये। भारतमें तो नहीं मगर इङ्गलैण्ड आदिमें उत्तराधिकार और मृत्युकर हैं। इनका प्रचार होना चाहिये।

भारतके उद्योग-धन्धोंका इतना विस्तार हो गया है कि उद्योग-धन्धोंके कार्य-कर्त्ताओंके प्रति हमें विशेष ध्यान देना चाहिये। पिछले कुछ महीनोंकी हड़ताल, मिल बन्दी और गोलीकाण्डकी घटनाओंकी कोई उपेक्षा नहीं कर सकता। सरकार उनकी उपेक्षा नहीं करती। हमारे अधिकांश नेताओंसे अधिक सरकार ने श्रमिकोंकी महान् शक्तिको समझा है और वह इसीलिये ट्रेड यूनियनोंको बाँध रही है। वे हमारी कांग्रेसके साथ वैसी सख्तीसे पेश नहीं आते क्योंकि सरकार जानती है कि वकील, बैरिस्टर कुछ नुकसान नहीं पहुँचा सकते और हमारा काम बकना है। सरकारको असली खतरा किसानों और मजदूरोंसे है, और औद्योगिक क्षेत्रोंमें काम करनेवालोंमें अपना संगठन करनेकी विशेष क्षमता है और वे ही जन आन्दोलनमें आगे आ सकते हैं। इसीलिये हम देखते हैं कि सरकार उनके गठनको छिन्न-भिन्न करना चाहती है और श्रमिकोंके संगठित कार्यको रोकना चाहती है। जहाँ कहीं भी औद्योगिक विवाद होगा, सरकारकी सारी ताकत मालिककी तरफ होगी। भूखों मारनेवाले मेहनताने और दयनीय रूपसे रहनेकी व्यवस्थाके साथ साथ उन्हें सरकारी गोलियोंका शिकार भी होना पड़ता है, लेकिन यह दमन भी पर्याप्त नहीं समझा गया और ट्रेड डिस्प्यूट बिल और पब्लिक सेफ्टी बिल सामने आया। ब्रिटिश सरकारने सब कुछ किया और भविष्यमें भी जो कुछ उसकी ताकतमें है करेगा ताकि श्रमिक संगठित न हो पावें। क्या आप इस मामलेमें निःपेक्ष भाव रखकर, श्रमिकोंको पिसने देना चाहते हैं? कानपुर आदि जाकर देखिये कि मजदूर कितनी दर्दनाक परिस्थितिमें रहते हैं, बंगालमें जाकर जूट मिलोंकी भयानक अवस्थाके साथ जूट मिल मालिक अँगरेज पूँजी-पतियोंके नफेकी तुलना कीजिये।

साधारण मानव वृत्तिको आपको मजदूरका पक्ष लेनेकी तरफ प्रेरित करना चाहिये राजनैतिक दृष्टिसे भी श्रमिक बड़ी ताकत हैं, अगर हम उनकी उपेक्षा करेंगे तो हम खुद अपनेको उपेक्षित पायेंगे।

इसलिये हमें इरादतन श्रमिकोंको सङ्गठित होनेमें मदद देना चाहिये, श्रमिकोंसे मेरा मतलब सिर्फ शारीरिक मसक्कत वालोंसे नहीं है, बल्कि शरीर और दिमाग दोनोंसे काम करने वालोंसे है। सबसे पहले हमें सरकारी कार्यवाहियोंसे जूझना होगा जिनसे कि श्रमिकोंका विकाश रुकता है। हमें ट्रेड यूनियनोंकी सहायता करना चाहिये और श्रमिकोंके हितोंकी रक्षाके लिये फैक्टरी कमेटियाँ बनानी चाहिये। महिलाओं और बच्चोंके लिये कामके घण्टे कम होने चाहिये। हर मालिक द्वारा श्रमिकके लिये अच्छे स्थानकी व्यवस्था होनी चाहिये और कम-से-कम इतनी तनख्वाह मिलनी चाहिये कि जीवन-निर्वाह हो सके। ये सुझाव क्रांतिकारी नहीं हैं। पूँजीवादी दृष्टि कोणसे भी श्रमिककी योग्यता और कुशलता बढ़ानेके लिये ये आवश्यक हैं।

मेरा मतलब यह विश्वास दिला देनेका है कि सिर्फ स्वराज्य स्वराज्य चिल्लानेसे हम कोई प्रगति नहीं कर सकते। हमें साफ कर देना चाहिये कि हम राजनैतिक स्वराज्यके साथ-साथ सामाजिक और आर्थिक स्वराज्य चाहते हैं, इसके लिये हमें आर्थिक और सामाजिक कार्यक्रम बनाना चाहिये। इसी प्रकार आप अपने आन्दोलनको वास्तविक बना सकते हैं और इसे शक्तिशाली, अप्रतिरुद्धनीय आन्दोलनका रूप दे सकते हैं।

हमारे यहाँ कुछ ऐसे राजनैतिक नेता भी हैं जो आजादीकी लम्बी-चौड़ी बातें करते हैं और साथ ही हर तरहके साम्प्रदायिक अधिकार और सुविधाएें चाहते हैं। हमसे कहा जाता है कि

सम्प्रदायका दिल ठीक है, मुझे शक नहीं है कि हर सम्प्रदाय का दिल ठीक नहीं है, लेकिन सम्प्रदायवाद और स्वतंत्रताका यह अजीब मेल सन्देह पैदा करता है कि जो इन दोनोंको मिलाते हैं उनका सिर ठीक है क्या ? क्योंकि इन दोनोंमें कोई सम्बन्ध नहीं है और आप स्वतन्त्र भारतकी इमारत सम्प्रदाय-वादको बालूमय नींवपर खड़ी नहीं कर सकते।

अपने आदर्शका स्पष्टीकरण करनेके बाद अब सवाल यह है कि आप उसे कैसे प्राप्त करें ? हर एक कहता है, हमारे पास कुछ शक्ति होनी चाहिये, लेकिन मैंने देखा है कि कुछ लोग विश्वास करते हैं लोग एक साथ चिल्लायें और चिल्लाते ही रहें और कुछ भी न करें, तब भी उन्हें सफलता मिल जायगी। यह गलत है, राजनीतिका एक बच्चा भी जानता है कि जिस राज-नैतिक माँगके पीछे शक्ति नहीं है, वह निकम्मी है।

यह शक्ति, जनता और जन-आन्दोलनसे ही आ सकती है। भारत उतना कमजोर नहीं है, जितना बहुतसे कल्पना करते हैं। हमारी कमजोरी, कमजोर दिल, और खासकर जनतासे डरनेके कारण है। अगर हम एक बार जनतासे सम्पर्क कायम कर लें और जनतामें काम करें तो हमारी शक्ति बहुत बढ़ जायगी, तब दुनियाकी ताकतें भी हमारी मदद करेंगी।

—::०::—

क्या भारतीय एक हो सकते हैं ?

क्या भारतीय एक हो सकते हैं। यह एक अजीब मगर महत्वपूर्ण शीर्षक है। क्योंकि यह कुछ शब्दोंमें ही बहुत कुछ कहता है। यह हमें उनकी विचार-धाराका परिचय देता है, जिन्होंने यह वाक्य बनाया है। यह बतलाता है कि वे भारतीय समस्याको किस आधारपर और किस तरह देखते हैं। यह बतलाता है कि हमारी विचार-धारापर पश्चिमकी छाप लग गयी है। यह श्वेत जातिका लादा हुआ बोझा-सा है।

इन सब कारणोंसे मैं इस विषयपर लिखनेको राजी नहीं हुआ था, क्योंकि जब हमारे आधार ही भिन्न हैं, तब बहस और तर्क बेकार है। जब हमारे दिमाग तक सीमित परिधिमें काम करते हैं और विश्वयुद्ध जनित क्रान्तिकारी परिवर्तन भी उस गहरी परिधिसे हमारे दिमागोंको बाहर नहीं निकाल सकते तो, तर्क द्वारा हम किस फलकी आशा कर सकते हैं ?

इस युद्धका सैनिक रूप महान है, सारी दुनियामें जल, थल और आकाश सेनाएँ एक दूसरेसे सङ्घर्ष कर रही है ताकि अपना आधिपत्य कायम कर सके। यह महान् सङ्घर्ष दुनियाकी सूरत बदल चुका है, और फिर आनेवाली चीजोंका रूप निश्चित रूपसे बदलने वाला है। दूसरी तरफ मानव जातिके मस्तिष्कमें महत्तर परिवर्तन हो रहे हैं, उनमें सबसे महान् परिवर्तन वह है जिसका प्रभाव एशियापर पड़ रहा है और जो परिवर्तन पिछले दो सौ वर्षोंके एशिया और यूरोपके सम्बन्धको क्रमशः पर निश्चित रूपसे खत्म कर रहा है। युद्धका रूप आगे चलकर जैसा भी हो जाय, उसका अन्त जो भी हो, शान्ति जैसी भी

हो, यह तय है कि अब पश्चिमी दुनिया एशियापर प्रभुत्व नहीं रख सकती। अगर यह तथ्य अभीसे अनुभव न कर लिया गया और पुराना सम्बन्ध किसी भी रूपमें जारी रखनेकी चेष्टा की गयी तो शान्तिका अस्तित्व नहीं रहेगा और विनाशकारी सङ्घर्ष होगा।

जो पश्चिमी यूरोपकी नीति स्थिर करते हैं, खास कर ब्रिटेन अभी इसको अनुभव नहीं कर रहा है। विशी फ्रांस, जो जर्मनी का तावेदार है, अभी तक फ्रेंच साम्राज्यकी बातें करता है। नीदरलैंड, जो अपने अधिकृत स्थानोंका अधिकांश खो चुका है, आज भी साम्राज्यकी अक्रमणात्मक भाषामें बोलता है और बचे खुचे भागके साथ चिपटा रहना चाहता है। उन्नीसवीं सदी बीत गयी और मर चुकी, लेकिन ब्रिटिश शासकोंका दिमाग अभी भी मृतभूत कालके वातावरणमें ही सोचता है। इस तरह दुनियाके लिये कोई आशा नहीं है और न शान्तिके लिये किसी स्थायित्वकी उम्मीद है, गोकि किसी न किसी समय शान्ति कायम होना ही है। जब तक लन्दन और वाशिंगटन, स्वतन्त्र और समान एशियाका रूप मन में रखकर नहीं सोचते विचारते तबतक जो समस्याएँ उनके सामने हैं, उनका हल उन्हें नहीं मिल सकता।

समस्याओंका एकमात्र हल है कि एशियाके समस्त देशोंकी पूरी और समान स्वाधीनता स्वीकार कर ली जाय। और रंग वर्णगत उच्चताकी भावना, जिसपर सिर्फ नाजियोंका ही अधिकार नहीं है, जिससे अन्य पश्चिमी राष्ट्र भी ग्रसित हैं, उस भावनाको तिलाञ्जलि दे दी जाय। भारतकी स्वाधीनता स्वीकार करनेसे ही समझा जायगा कि इस भावनाको तिलाञ्जलि दी गयी है। भारतकी स्वाधीनतासे भारत राष्ट्रकी महान् शक्ति ही बन्धन मुक्त

न होगी, बल्कि वह समस्त विश्वकी स्वतन्त्रताका प्रतीक होगी, यूरोपके देशोंने निरन्तर सङ्घर्ष, आन्तरिक घृणा, हिंसाप्रेम और गलाघोट सुविधावादके कारण दुनियाकी बहुत बुरी अवस्थाकर डाली है, अपने अधीन भागोंमें इन्होंने दयनीय अवस्था फैला दी और एक ही पीढ़ीमें दो-दो विश्व युद्धोंकी सृष्टि कर डाली, अपने घरकी व्यवस्था न कर सकनेके कारण, वे दूसरोंपर हावी होना चाहते हैं, और उनके मालिक बनना चाहते हैं। लेकिन विज्ञान, साहित्य और विज्ञानके प्रयोगमें उन्होंने जो सफलताएँ प्राप्त की हैं, उनके लिये उनका कोई महत्व नहीं समझता। इन सबके अलावा, दर असल उनके भीतर कुछ खामी है जो उनकी सफलताओंको व्यर्थ कर देती है। एशियाने इस अधरमें लटकती अवस्थाको अपनी प्रौढ़ताकी शक्तिसे काफी समय तक देखा, दो सौ वर्ष कष्ट और यातनामें बीत गये।

लेकिन अब वह काल समाप्त हो गया। अब एक नये अध्यायका श्री गणेश होना चाहिये। एशिया बड़ी तेजीसे विज्ञान और विज्ञानका प्रयोग सीख रहा है और उसे अपनी पुरानी मौलिकताके साथ मिला रहा है। एशियाको कम सीखना है और ज्यादा सिखाना है। उसे जीवनके दर्शन और जीवन यापनकी कलाके विषयमें बहुत कुछ सिखाना है।

क्या भारतीय एक हो सकते हैं ? हाँ ! निश्चय ही एक हो सकते हैं, अगर विदेशी ताकतने उनके बीचमें जो व्यवधान खड़ा कर दिया है, उसे हटा लिया जाय, अगर बिना बाहरी दस्तन्दाजी के उन्हें अपनी समस्याओंका सामना करने दिया जाय। शान्ति पूर्ण तरीकोंसे या सङ्घर्षसे हर समस्या सुलझा ली जायगी, चाहे वे नयी समस्याओंको जन्म दे दें। स्वतन्त्र भारत अपनी समस्याओंको या तो सुलझा लेगा या अपना अस्तित्व मिटा देगा।

भारतका प्राचीन इतिहास बतलाता है कि उसने अपनी समस्याओंको सफलता पूर्वक सुलझाया है, और विरोधी शक्तियोंको सङ्घर्षके परिणाम स्वरूप उसने एक नयी प्रणालीको जन्म दिया है। यह भारतीय इतिहास और सभ्यताका प्रधान लक्षण रहा है।

चीनके सिवा, संसारमें कोई ऐसा देश नहीं है जिसने सदियों ऐसी शक्तिशाली एकता दिखायी हो। इस एकताने यदा कदा ही राजनैतिक रूप लिया था, क्योंकि यातायात और तार टेलीफोन आदिके स्थान सीमा-संकुचित करने वाले साधन हालमें ही निकले हैं। अगर ये साधन आविष्कृत न होते तो सम्भव था कि अमेरिकाके युनाइटेड स्टेट्स भी एक राष्ट्र न हो पाते।

भारतमें ब्रिटेनके राजाने राजनैतिक एकताकी ओर भारतको बढ़ाया और भारतमें औद्योगिक क्रान्तिको जन्म दिया। लेकिन उसी क्रान्तिके विकासमें ब्रिटेनने ही रुकावट डाली, उसने मध्यकालीन वृत्तियोंको उसकाया और औद्योगिक विकासको रोका, भारतके इतिहासमें ऐसे विदेशी लोगोंका शासन प्रथम बार हुआ है, जिनकी सांस्कृतिक बुनियाद कहीं और है, जो अपने लाभके लिये देशका शोषण करते हुए विदेशीकी हैसियतसे ही भारतमें रहते हैं। उनके साथ सामञ्जस्य नहीं हो सकता और निरन्तर सङ्घर्ष अनिवार्य है। इसी सङ्घर्षसे शक्तिशाली अखिल भारतीय आन्दोलन उठ खड़ा हुआ है जो उसकी राजनैतिक एकताका प्रतीक है।

स्वाधीनता, प्रजातन्त्र, और एकता आन्दोलनके स्तम्भ थे। प्राचीन भारतीय परम्पराके अनुसार सहनशीलता, पूर्ण सुरक्षा, और स्वायत्तशासन, भारतके सब अल्प सम्प्रदायोंको देनेका वादा किया गया, शर्त सिर्फ यही कि देशकी एकता कायम रहे

और इसके विधानका आधार प्रजातन्त्रीय हो। स्वाधीनताका अर्थ ब्रिटिश साम्राज्यसे सम्बन्ध विच्छेद है, पर यह अनुभव कर लिया गया है कि नयी दुनियामें किसी राष्ट्रके लिये एकाकी रहना न सम्भव है, न वाँछनीय। इसलिये भारत किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय सङ्घमें समानाधिकार पर शामिल होनेको राजी है लेकिन यह भारतकी स्वाधीनता मान लेनेपर भारतकी स्वतन्त्र इच्छासे ही हो सकता है। किसी भी तरहकी वाध्यता नहीं हो सकती। भारत खास तौरसे चीनसे अपना घनिष्ट सम्पर्क स्थापित करना चाहता है।

मुस्लिम लीग जिन मुसलमानोंका प्रतिनिधित्व करती है, वे भारतके विभाजनकी माँग करते हैं, यह माँग नयी ही है, सिर्फ चार सालकी। यह भी ख्याल रखना चाहिये कि मुसलमानोंका बहुत बड़ा भाग इसका विरोध करता है। कुछ ही लोग इसे पसन्द करते हैं क्योंकि इसके पीछे आर्थिक या राजनैतिक आधार नहीं है। जिन अमेरिकनोंने अपनी युनियन की एकता कायम रखनेके लिये सिविल वार लड़ा वे समझ सकते हैं कि क्यों अधिकांश भारतीय विभाजनको नापसन्द करते हैं।

तीस साल पहले ब्रिटिश सरकारने पृथक धार्मिक निर्वाचन प्रणालीका सिद्धान्त भारतमें चलाया, यह घातक कार्यवाही भारतकी राजनैतिक पार्टियोंके विकासमें बाधक हुई। अब इन्होंने ही भारतके विभाजनका विचार भारतमे फैलानेकी चेष्टा की है, वे दो नहीं कई टुकड़ोंमें भारतका विभाजन चाहते हैं। क्रिप्स प्रस्तावोंके विरोधके कारणोंमें से यह भी एक मुख्य कारण है। अखिल भारतीय कांग्रेस इसे नहीं मान सकी फिर भी उसने यहाँ तक कह दिया कि अगर कोई भाग साफ-साफ तौरसे अलग रहने

की घोषणा करे तो कांग्रेस उसे मजबूर करनेकी बात नहीं सोच सकती।

जहाँतक अल्प संख्यक समुदायोंका प्रश्न है, उन्हें हर तरहके वैधानिक, धार्मिक, सांस्कृतिक. भाषा सम्बन्धी संरक्षण दिये जायँगे। पिछड़े हुए अल्प संख्यकों तथा श्रेणियोंको विशेष शिक्षा सम्बन्धी तथा अन्यान्य सुविधाएँ दी जायँगी ताकि वे शीघ्रतासे सबके समान हो जायँ।

अक्सर कहा जाता है कि असली समस्या मुसलमानोंकी है, मगर उन्हें मुश्किलसे अल्प संख्यक कहा जा सकता है, क्योंकि उनकी संख्या लगभग ९ करोड़ है, यह समझना बहुत मुश्किल है कि बहुमत इन्हें कैसे दबा सकता है। वे लोग खास-खास प्रान्तोंमें आबाद हैं। हर एक प्रान्तको पूर्ण प्रान्तीय शासनके अधिकार रहेंगे, केन्द्रीय सरकारके पास कुछ विशेष अखिल भारतीय विषय होंगे, इससे हर सांस्कृतिक क्षेत्रमें आत्म-विकास की सबको सुविधा होगी। इसके साथ ही प्रान्तके अन्तर्गत भी छोटे सांस्कृतिक स्वायत्त क्षेत्र हो सकते हैं।

यह सम्भव है कि अल्पमतकी हर वाजिब माँगको सन्तुष्ट करनेके लिये बहुतसे तरीके मिल जायँ। कांग्रेसने कहा, यह बहुमतके वोट द्वारा नहीं, बल्कि आपसके समझौते द्वारा होना चाहिये। अगर किसी नुक्तेपर समझौता न हो तो निष्पक्ष पञ्चायतको मान लेना चाहिये। आखिर अगर कोई प्रादेशिक युनिट, युनियनमें मिलकर काम करनेके बाद अनुभव करे कि उसे युनियनसे बाहर ही रहना है तो उसे मजबूरन युनियनमें नहीं रखा जायगा, बशर्ते कि यह सम्बन्ध विच्छेद भौगोलिक दृष्टिसे सम्भव हो।

यह स्मरण रखना चाहिये कि भारतीय अल्प संख्यकोंकी

समस्या भिन्न जाति की और भाषा तथा संस्कृति वाली जातियोंसे बिलकुल भिन्न है। भारतमें ऐसा नहीं है, जहाँ कुछ लोगोंके सिवा हिन्दू मुसलमानके रक्त, संस्कृति और भाषामें विभिन्नता नहीं है। मुसलमानोंकी काफी संख्या हिन्दुओंके वंशकी है, जिन्होंने इस्लाम कबूल कर लिया है।

भारतीय अल्पमतोंका समाधान वस्तुतः जितना सरल है दुनियाकी अन्य समस्याओंके समाधान शायद ही उतने सरल हों। विभिन्न कारणोंसे आज यह समस्या महत्वपूर्ण है और विकासमें रुकावट डालती है, लेकिन दर असल यह बनावटी समस्या है, जिसकी जड़ गहरी नहीं है। भारतकी वास्तविक समस्याएँ हैं, आर्थिक गरीबी और निम्न धरातल। जैसे ही तेजीसे इन समस्याओंका समाधान किया जा सकेगा और आधुनिक उद्योगोंका विकाश होगा, जिसके फलस्वरूप रहन-सहन ऊँचा उठ जायगा, अल्प संख्यकोंकी समस्या मिट जायगी, इस समस्याका जन्म मध्यम श्रेणीकी बेकारीसे हुआ है जिनके लिये कामके थोड़ेसे रास्ते ही खुले हुए हैं और जो राजकी तरफ कामके लिये देखते हैं। चूँकि राजके काम सीमित हैं, इसलिये खास-खास सम्प्रदायोंके लिये स्थान रिजर्व होनेकी माँग उठती है।

समस्याको सुलझानेका प्रयत्न अबतक बराबर असफल रहा है, क्योंकि हमेशा तीसरी पार्टी ब्रिटिश सरकार मौजूद है। अगर यह सरकार न रहे तो इस समस्याका रूप बदल जायगा, क्योंकि तब भारतीयोंको अपनी ओर ही देखना होगा। शक्तियों की वाध्यताके कारण उन्हें वास्तविकताका सामना करना होगा और उन्हें समझौता करना होगा। दूसरा रास्ता, सङ्घर्षका है, जिससे हर एक बचना चाहता है, फिर भी अगर सङ्घर्ष ही होता

है तो वह वर्तमान गतिरोधसे अच्छा है क्योंकि इससे समस्या का हल निकल आयगा।

अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीका यह सुझाव है कि यह और अन्य समस्याएँ वयस्क मताधिकारसे निर्वाचित विधान परिषद् द्वारा विवेचित और निर्णीत हों। निर्वाचनका आधार विस्तृत हो, ताकि इन समस्याओंका विवेचन और निर्णय उनके द्वारा जो सरकारी नौकरियोंकी अपेक्षा देशके आर्थिक मामलोंमें अधिक दिलचस्पी रखते हैं, हो।

ये आर्थिक प्रश्न धार्मिक सीमाओंसे परे हैं, हिन्दू, मुसलमान, ईसाई बौद्धोंके लिये ये समान हैं। अगर यह विधान परिषद् किसी खास अल्पमत सम्बन्धी प्रश्नपर एकमत न हो सके तो, वह इस प्रश्नको अन्तर्राष्ट्रीय पञ्चायतके सामने पेश कर सकती है। इन मामलोंमें अन्तर्राष्ट्रीय पञ्चायत जो भी फैसला करेगा, उसे माननेके लिये हम तैयार हैं, लेकिन स्वाधीनताके सम्बन्धमें पञ्चायतका सवाल नहीं उठता। स्वाधीनता और स्व-भाग्य निर्णयका हक, इस तरहके मामलेके लिये पञ्चायतका सवाल उठनेके पहले ही स्वीकार किया जाना चाहिये।

क्या भारतीय एक हो सकते हैं? मुझे जरा भी शक नहीं कि वे एक हो सकते हैं और एक होंगे। आज भी उनके दृष्टिकोणमें आश्चर्य जनक एकता है, उनके आन्तरिक मतभेद जो भी हों, वे स्वाधीनता चाहते हैं। वास्तविक एकता और प्रगतिके पक्षमें वास्तविक रुकावट विदेशी शासन है। हर दृष्टिकोण से यह अनिवार्य है कि भारतसे ब्रिटिश अपना अधिकार हटा ले और भारतकी स्वाधीनता स्वीकार कर लें। इसके सिवा और कोई रास्ता नहीं है कि भारतको पूर्ण स्वाधीनता दी जाय।

युद्धने इस विषयको और भी महत्वपूर्ण बना दिया। स्वा-

धीन भारत, अमेरिका और ब्रिटेनको अपना मित्र समझेगा। लेकिन भारतीय अपने देशमें अब किसीके गुलाम नहीं रहना चाहते, उनकी दृष्टिमें इससे बढ़कर और कोई आध्यात्मिक पतन नहीं हो सकता।

पूर्व अब पराधीनता नहीं स्वीकार कर सकता एशिया खुद अपने भागका मालिक होगा, उसके भागमें चाहे जो दुख-दर्द यातना हो। चीनने अपनी स्वतन्त्रताकी रक्षाके लिये अपने हृदयका खून बहा दिया। भारतको अपनी स्वाधीनताके लिये संग्राम करनेका अवसर मिला तो वह भी अपने हृदयका खून बहा देगा। वह किसी पर अधिकार नहीं करना चाहता और न वह किसीके अधिकारमें रहना चाहता है। सिर्फ स्वाधीनता, स्वाधीनता ही उसके बन्धन छिन्नभिन्न कर सकती है और दुनियामें उसे अपने योग्य कार्य करने लायक बना सकती है।

— —

युवकोंका साम्राज्य

बंगालके युवा स्त्री-पुरुषों !

बंगालके युवकोंके इस सम्मेलनका सभापतित्व करनेके लिये आमंत्रित कर आपने मेरा सम्मान किया, मैं इसके लिये कृतज्ञ हूँ। लेकिन मैं सोच रहा हूँ मुझसे आप क्या कहलाना या करवाना चाहते हैं, या किस तरहका सन्देश चाहते हैं। मेरे पास कोई खास सन्देश नहीं है और आप जानते हैं, मैं लच्छेदार भाषाका आदी नहीं हूँ और न मुझे लम्बी-चौड़ी बातें बनाना आता है। बंगाल अपने कला-सौन्दर्य-प्रेम तथा भावुकताके लिये प्रसिद्ध है, उसी बंगालने उत्तरके अपेक्षाकृत अधिक गर्म और अधिक ठंडे प्रदेशके अधिवासीको आमंत्रित किया है, जिसके पूर्व-पुरुष हिमाच्छित पहाड़ी प्रदेशसे आये थे। मुझे शंका है कि मेरे अन्दर पहाड़ी वातावरणकी ठण्ढक और सख्ती है। बंगाल और भारतके एक बहुत बड़े नेताने जिनको स्मृति आज भी बनी हुई है, एक दफा मुझे "Cold-blooded" कहा था। मैं इस अभियोगको स्वीकार करता हूँ और चूँकि आपने मुझे आमंत्रित करनेकी जोखिम उठायी इसलिये आपकी मेरी यह वृत्ति सहनी होगी।

मैंने हिन्दुस्तान (जिसे युनाइटेड प्रोविनसेंज कहा जाता है) में बसे हुए काश्मीरी और बंगालीके मामूली फर्कको तरफ ध्यान खींचते हुए अपना कथन आरम्भ किया और आप जानते हैं कितने मामूली ये भेद हैं, और हमें आपसमें बाँधनेवाले बंधन कितने मजबूत हैं। समान भूत, समान वर्त्तमान संकट-काल,

समान अपना और आपका भविष्य गढ़नेकी इच्छा, कितनी दृढ़ है। आप एक देशसे दूसरे देशको अलग करनेवाली नकली सीमाओंकी इन वास्तविकताओंसे तुलना कर सकते हैं। हमारे वर्ग और चरित्रकी विभिन्नताके सम्बन्धमें कहा गया है कि भिला शक ये विभिन्नताएँ हैं। किन्तु उसमेंसे कितनी ही आकस्मिक और जल वायु और शिक्षाके कारण हैं और किस तरह उन्हें आसानीसे बदला जा सकता है। आप देखेंगे कि समान बन्धन, भेदोंसे महान् और महत्वपूर्ण हैं, गोकि हममेंसे बहुतसे यह अनुभव नहीं करते।

मानवताका जो समान बन्धन है, उसीके अनुभवने युवा आन्दोलनको जन्म दिया है। पिछले महायुद्ध और उसके बाद युवा मस्तिष्कमें जो निराशा और विद्रोह जागा आपमेंसे बहुतों को उसका स्मरण न होगा, क्योंकि उस समय आपकी अवस्था कम थी। पुराने लोग अपने घरों और बैंक हाउसोंमें आरामसे बैठे स्वतंत्रता और प्रजातन्त्रके लिये लच्छेदार बातों और अपीलों में अपना स्वार्थ, डाह झूठ छिपाते रहे और लाखों जवान उनकी लच्छेदार बातोंका विश्वास कर मैदानमें निकल आये और मौतका सामना किया, उनमेंसे कुछ ही वापिस लौट सके। सात करोड़ युवक महायुद्धमें युद्धके लिये तैयार हुए और १॥ करोड़ने रण संग्राममें तोपोंका सामना किया, इनमें ८० लाख मर गये और ५५ लाख जीते हुए भी मुर्देसे बदतर हो गये। जरा इन दिल दहला देनेवाली संख्याओं पर गौर कीजिये और गौर कीजिये कि वे सब नवजवान थे, जिनके सामने जिन्दगीका प्याला लबालब भरा था और जिनकी अनगनित आशाएँ फली-फूली नहीं थीं। लेकिन इतने महान् आत्म-बलिदानके बदलेमें क्य मिला? युद्ध बन्द होनेके बाद भारतको अपने बलिदानके बदलेमे

रौलट एक्ट और मार्शल ला मिला। आप जानते हैं, मित्र राष्ट्र स्वभाग्य निर्णयके जिस सिद्धान्तकी दुहाई दे रहे थे, भारत तथा अन्य देशोंके संबंधमें उसका उपयोग कैसे किया गया? मेनडेट्स के रूपमें साम्राज्यवादकी वृद्धिके लिये नया क्षेत्र तैयार किया गया और इन मेनडेटोंकी असलियत छिपानेके लिये उन क्षेत्रोंके वाशिन्दोंके चुनावके अधिकारका पर्दा लगाया गया, किन्तु उन क्षेत्रोंके बाशिन्दे अपने मालिकोंका चुनाव कितना पसन्द करते हैं यह अङ्गरेजोंके खिलाफ मेसोपोटामिया और फ्रेंचोंके खिलाफ सीरियामें जो विद्रोह हुआ है, उसीसे सिद्ध होता है। ईराकमें ब्रिटश जहाजोंने बम बरसाये और फ्रेंचोंने दमिश्क जैसे पुराने सुन्दर शहरको बरबाद कर डाला। यूरोपमें ही क्रान्तिने जितनी समस्याएँ हल नहीं की उससे ज्यादा पैदा कर दी हैं।

क्या यह आश्चर्यकी बात है कि युवकोंने विद्रोह किया और उन पुराने नेताओंको पदच्युत कर दिया, जिन्होंने महायुद्धके भीषण सबककी भी उपेक्षा की और पुराने रास्ते पर चलते हुए नये युद्धकी भूमिका तैयार करनेमें ही लगे रहे। युवकोंने अपना संगठन किया और वे स्वयम् ऐसे समाजके निर्माणमें लग गये जहाँ वर्त्तमान संघर्ष और दयनीय स्थितिका नाम निशान न रहे।

इसीलिये विश्वके युवक समाजने वर्तमान दयनीय अवस्था के कारणोंकी गहराई तक पहुँचनेका प्रयास किया, उन्होंने सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियोंका अध्ययन किया और उन्होंने देखा कि विज्ञान और विज्ञानकी वजहसे जो परिवर्तन हुए उन्होंने सदियाँ ले लीं फिर भी आदमीका दिमाग अभी भी मृतकाल में ही अटका हुआ है। विज्ञानने संसारको अन्तर्राष्ट्रीय और एक दूसरेपर आश्रित बना दिया, लेकिन राष्ट्रोंकी प्रतिद्वन्दिता जारी रही, और जिसके परिणाम-स्वरूप युद्ध भी जारी रहे। विज्ञानने

संसारका उत्पादन बहुत बढ़ा दिया फिर भी गरीबी बनी रही और अमीरी और गरीबीका भेद बहुत बड़ा और प्रत्यक्ष हो गया। आदमी अज्ञान है और भूल करता है, लेकिन तथ्य इसकी पर्वा नहीं करते, हमारे काल्पनिक संसार और वास्तविक संसारमें परस्पर विरोध है, ऐसी हालतमें दुनियामें अशान्ति और दुर-व्यवस्था रहे तो आश्चर्य क्या है ?

लेकिन इसके लिये हम वास्तविकताको दोष नहीं दे सकते। तथ्योंको गलत समझने और उनकी गलत व्याख्या करना ही हमारी मुसीबतों और कठिनाइयोंकी बुनियाद है। हमारे बड़े बूढ़े असफल हुए इसीलिये कि वे बँधी हुई धारणाको बदल नहीं सकते थे, वे बदलते हुए तथ्योंके साथ अपना दृष्टिकोण नहीं बद-लते थे। लेकिन युवक लकीरके फकीर नहीं हैं। युवक विचार कर सकते हैं और विचारोंके परिणामसे नहीं डरते। यह न समझियेगा कि विचार मामूली चीज हैं या उसके परिणाम नगण्य हैं।

विचारोंको स्वर्गके सुख या नरकके दुखोंकी चिन्ता नहीं करनी चाहिये। पृथ्वी पर विचार बहुत क्रान्तिकारी चीज हैं। चूँकि युवक विचार कर सकते हैं और विचारके अनुसार कार्य कर सकते हैं इसीलिये वे देश और दुनियाको वर्तमान दयनीय परि-स्थितिसे उबार सकते हैं।

बंगालके युवा स्त्री पुरुषों ! क्या आपमें विचार करने और विचारोंके अनुसार कार्य करनेका साहस है ? क्या आप संसारके युवकोंके साथ कन्धेसे कन्धा मिलाकर खड़े हो सकते हैं ? आपका काम सिर्फ देशको विदेशी शासनसे मुक्त करना ही नहीं है बल्कि इस दुःखी संसारमें सुखी समाजकी स्थापना करना है यही समस्या आपके सामने है, और अगर आप इसका सच्चाई और

निर्भयतासे मुकाबिला करना चाहते हैं तो आपको निश्चय करना होगा कि विदेशी शासन तथा देशी रूढ़ियों द्वारा आपके रास्तेमें जो रुकावटें आयेंगी आप उनका सामना करेंगे और उन्हें दूर कर देंगे।

आपके सामने आपका आदर्श साफ होना चाहिये। ऐसा न होने पर आप अपनी कल्पनाका भवन कैसे बना सकेंगे? क्या आप खोखली नींवपर विशाल भवन बना सकते हैं या तिनकोंसे मजबूत पुल बना सकते हैं? जब आपको अपने पक्षका साफ-साफ ज्ञान हो जायगा तब आप अपने कर्त्तव्यका भी साफ-साफ निर्णय कर लेंगे और आपका कार्य भी निश्चित परिणामकारी होगा और तब आप जो भी कदम उठायेंगे वह आपको अपने हृदय के प्रिय लक्ष्यकी ओर बढ़ायगा।

वह आदर्श क्या होना चाहिये? राष्ट्रीय स्वाधीनता और पूर्ण स्वाधीनता। ताकि विकासके लिये हम अपनी पसन्दका रास्ता चुन सकें और कार्य कर सकें। क्योंकि इसके बिना राजनीतिक सामाजिक या आर्थिक स्वाधीनता नहीं हो सकती। लेकिन राष्ट्रीय स्वाधीनताका अर्थ युद्ध प्रिय देशोंकी श्रेणीमें एक नये सदस्य की भर्ती न होनी चाहिये। हमारी स्वाधीनताका उद्देश्य होना चाहिये विश्वके राष्ट्रोंका संघ निर्माण, जिससे सारी दुनिया में सहयोग और शान्ति तथा समृद्धि हो।

लेकिन संसारमें उस समय तक सहयोग नहीं हो सकता जब तक कि एक देशका दूसरे पर आधिपत्य है और एक देश दूसरेका शोषण करता है या एक दल या जाति, दूसरे दल या जातिका शोषण करती है। इसलिये हमें सब तरहके शोषणोंका अन्त करना होगा। आप सिर्फ शुद्ध राजनैतिक आदर्श लेकर नहीं रह सकते क्योंकि राजनीति सम्पूर्ण जीवनका एक अङ्ग मात्र है,

गोकि जैसी परिस्थितिमें हम हैं, राजनीतिका हमारे जीवनके हर भागपर आधिपत्य है। आपका आदर्श पूर्ण होना चाहिये, और जीवनकी पूर्णताके साथ उसका सामञ्जस्य होना चाहिये, जिसका आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक त्रिविध रूप है। इसका अर्थ है—समाजमें सबके लिये सामानता साथ ही सबके लिये बराबर सुयोग।

हमारा महिला समाज, पुराने जमानेके गौरवपूर्ण उदाहरणों के बावजूद भी, जिनका हमें गौरव है और इसीलिये हम गौरवके साथ उनका उल्लेख करते हैं, बन्धनसे जकड़ा हुआ है और स्वतन्त्र नहीं है। प्राचीनकालमें हमारे देशका बहुत बड़ा भाग हमारे द्वारा ही दबाया गया और धर्म तथा प्राचीन रूढ़ियोंके नाम पर हमने विकाशके सब अधिकारोंसे उन्हें बंचित रखा। समस्त भारतमें हम देखते हैं कि सख्त मेहनतके बाद भी लाखों भूखों मरते हैं। किस तरह हम उन्हें भूख और दरिद्रतासे छुड़ाकर आनेवाली स्वाधीनताका सुख भोगने लायक बना सकते हैं? हम दरिद्रनारायणकी सेवाकी बात सुनते हैं और जरासे दान या सेवासे हम समझने लगते हैं कि हमारा कर्त्तव्य पूरा हो गया। बड़ी उदारतापूर्वक स्वर्गका साम्राज्य गरीबोंके लिये सुरक्षित छोड़कर, संसारका साम्राज्य अपने पास रखनेकी हम बराबर फिक्र किया करते हैं। युवकोंको कमसे कम इस ढोंगसे दूर रहना चाहिये। दरिद्रता अच्छी चीज नहीं है, इसकी कभी तारीफ न करना चाहिये, यह एक बुराई है जिसका मुकाबिला कर नष्ट करना कर्त्तव्य है। दरिद्र हमसे मामूली नौकरी या उदारता नहीं माँगता। दरिद्र चाहता है कि वह दरिद्र न रहे। यह तभी हो सकता है जब कि वह प्रणाली ही बदल दी जाय जो गरीबी और दुरवस्थाको जन्म देती है।

पिछले महीनोंमें आपने देखा होगा सारे भारतमें श्रमिक असन्तोष फैल गया। मिलोंपर ताले लगे, हड़तालें हुईं और गोलियाँ चलीं। क्या आप सोचते हैं, श्रमिक यों ही हड़ताल कर देता है ताकि वह भूखों मरें और गोलीका शिकार हो। जब तक अवस्था असह्य नहीं हो जाती कोई ऐसा नहीं कर सकता। और दरअस्ल हमारे उद्योग धन्धोंकी अवस्था असह्य हो गयी है। आपके प्रान्तकी जूट मिलोंने दस वर्षोंमें ४५० करोड़ नफा किया। इस महान् धनराशियोंके साथ जूट मिलोंके मजदूरोंकी अवस्थाकी तुलना कीजिये। फिर मजदूर जूट मिलोंमें काम करनेके लिये इसलिये गये कि उनके लिये देशमें कहीं और जगह नहीं थी और उनकी अवस्था और भी खराब थी। क्या आप समझते हैं जिस देशमें दरिद्रता और धनाढ्यतामें इ ना फर्क है वहाँ कभी शान्ति हो सकती है। इस समस्याकी आप उपेक्षा नहीं कर सकते और न उसका समाधान भावी पीढ़ीपर छोड़ सकते हैं।

अगर आपको यह समस्या सुलझानेमें भय होता है तो आप समझ लीजिये कि तथ्यकी उपेक्षाका परिणाम अपना ही नुकसान है। अक्सर कहा जाता है कि जमीन्दार और रैयत, मजदूर और पूँजीवादीके बीच हमें न्याय करना चाहिये जिसका अर्थ है जो अवस्था है, कायम रहे। इसी तरहका न्याय राष्ट्र सङ्घ भी करता है जब वह साम्राज्यवाद देशोंको आधी दुनिया पर शोषणके लिये बना रहने देता है। जबकि वर्तमान अवस्था ही पूर्ण अन्याय है तो जो इस अवस्थाको कायम रखना चाहते हैं उन्हें अन्याय कायम रखनेवाला समझा जाना चाहिये।

अगर आपका आदर्श सामाजिक सामानता और विश्वसङ्घ है तो हमें समाजवादी राजके लिये प्रयत्न करना होगा। इस देश

में 'समाजवाद' शब्द ही बहुतोंको डरा देता है, लेकिन यह कुछ बात नहीं है, क्योंकि भय तो उन लोगोंका पुराना साथी है। पाठ्य पुस्तकें छोड़नेके बादसे विचार जगतमें जो कुछ महत्वपूर्ण हुआ है उससे अनजान, वे हमेशा ही भय करते हैं कि वे उसे न समझते हैं और न समझेंगे।

यह आपका, देशके युवकोंका काम है कि संसारमें जो नयी शक्तियाँ और विचार उठ रहे हैं उनकी कद्र करें और अपने देश में उनका उपयोग करें। दुनियाके लिये 'समाजवाद' ही एक आशा है। यह ध्यान देनेकी बात है कि पिछले महासमरमें पश्चिमके राष्ट्रोंको जब महान् सङ्कटने घेर लिया था तब यूरोपके पूँजीवादी राष्ट्र भी काफी हद तक समाजवादी साधनोंको अपनानेके लिये मजबूर हो गये थे। यह सिर्फ देशके लिये ही नहीं बल्कि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमें भी किया गया, विभिन्न देशोंमें सहयोग हुआ और ऐसा लगा कि देशोंको एक दूसरेसे अलग करनेवाली सीमाएँ मिट रही हैं। देशोंमें घनिष्ट आर्थिक सहयोग कायम हुआ, बल्कि विभिन्न देशोंकी सेनाएँ एकके सेनापतित्वमें एक महासेना बन गयी। लेकिन महायुद्धने जो शिक्षा दी उसे हमने खो दिया। और हम फिर महान् संहारकी ओर बढ़ने लगे।

समाजवाद हमारे बहुतसे मित्रोंको डराता है, लेकिन साम्यवादके बारेमें क्या है? कौंसिल चेम्बरोंमें बैठे हुए हमारे बड़े बूढ़े इस शब्दका नाम सुनते ही अपने सफेद सिरों और सफेद दाढ़ियोंको हिलाने लगते हैं।

फिर भी मुझे शक है कि उनमेंसे किसीको साम्यवादका मामूली ज्ञान भी है क्या? आपने पढ़ा होगा कि सरकार दो काम करना चाहती है—एक तो वह ट्रेड युनियन आन्दोलनका गला घोटना चाहती है और दूसरे कम्युनिस्ट समझे जानेवालों

को दूर कर देना चाहती है। क्या आपने सोचा है कि नया विचार फैलानेवाले व्यक्तियोंसे शक्तिशाली साम्राज्य क्यों डरता है? भारत सरकार अगर सोचती है कि कानून बना देने भरसे ही वह किसी विचारको रोक सकती है तो कहना होगा उसमें अक्ल की कमी है। क्योंकि विचार तोप बन्दूकका भय नहीं करते और सीमा या प्रणालीके बन्धन नहीं मानते।

वह साम्यवादी विचार क्या है जिससे ब्रिटिश साम्राज्य काँपता है, मैं इस पर विशेष प्रकाश नहीं डालता और मैं खुद भी बहुतसे कम्युनिस्ट तरीकोंसे सहमत नहीं हूँ, लेकिन मुझे निश्चय नहीं है कि कम्युनिज्म किस हद्तक भारतके उपयुक्त होगा। मैं समाजके आदर्श स्वरूप साम्यवादमें विश्वास करता हूँ, क्योंकि यह समाजवाद ही है, मेरा खयाल है कि संसारको सर्वनाशसे बचना है तो उसका एक मात्र उपाय—समाजवाद है।

और रूस! रूस आज साम्राज्यवादके महान् प्रतिद्वन्दीके रूपमें खड़ा है और पूर्वके देशोंके साथ उसका व्यवहार उदारता और न्यायपूर्ण रहा है। चीन तुर्की और परसियामें उसने अपनी इच्छासे अपने कीमती अधिकार और सुविधाएँ छोड़ दीं। और ब्रिटिशोंने चीनियोंपर बमबाजी की और सैकड़ोंकी जान ले ली क्योंकि चीनियोंने ब्रिटिश साम्राज्यवादका सामना करनेका साहस दिखलाया।

परसियाके तब्रिज शहरमें जब रूसी राजदूत पहुँचा तो उसने वहाँके लोगोंको बुलाकर जारके पापोंके लिये रूसकी तरफसे माफी माँगी। रूस पूर्वमें समान हैसियतसे चलता है, विजेता या ऊँची जातिवालेकी हैसियतसे नहीं, ऐसी हालतमें उसका स्वागत होना क्या आश्चर्यदायक है।

आपमेंसे कुछ अध्ययनके लिये शायद विदेशोंमें जायँ,

इङ्गलैण्ड जानेपर आप पूरी तरह अनुभव करेंगे कि जाति भेद क्या है? वहाँकी अपेक्षा इटली, फ्रान्स या जर्मनीमें आपका अच्छा स्वागत होगा। रूसमें आप देखेंगे जाति रंगका भेद-भाव नहीं, मास्को विश्वविद्यालयमें पढ़नेवाले चीनी विद्यार्थियोंके साथ समान व्यवहार किया जाता है।

मैंने आपके सामने समाजवाद और अन्तर्राष्ट्रीयवादके आदर्श रखे हैं, ये ही आदर्श युवकोंके मिजाजके उपयुक्त हैं। अन्तरराष्ट्रीयवाद, हमारे देशकी स्वाधीनतासे ही आ सकता है, ब्रिटिश साम्राज्यवाद या ब्रिटिश कामन वेल्थ द्वारा हम इसकी साधना नहीं कर सकते, आप इसे चाहे जिस नामसे पुकारें। किन्तु यह समझ लीजिये कि साम्राज्यवाद ही अन्तर्राष्ट्रीयवादका सबसे बड़ा शत्रु है। अगर भविष्यमें इङ्गलैड विश्वसंघमें शामिल होना चाहे तो हमसे बढ़कर कोई उसका स्वागत नहीं करेगा, लेकिन इसके पहले उसे अपना साम्राज्यवाद छोड़ना होगा। हमारा झगड़ा इङ्गलैंडकी जनताके साथ नहीं है बल्कि इङ्गलण्डके साम्राज्यवादके साथ है।

मैंने अन्तर राष्ट्रीयवादपर जोर दिया है, यह आदर्श चाहे हमारे लिये सुदूरवर्ती भले ही हो, लेकिन दरअस्ल दुनिया ही इस समय अधिकाँशतः अन्तर्राष्ट्रीय है, चाहे हम इसे अनुभव न करें। विदेशी शासनमें रहनेके कारण हमारा दृष्टिकोण राष्ट्रीय होना सम्भव है, हम भारतकी महत्ताकी बातें कहते हैं, हमें विश्व को उसे जो सन्देश देना है उसकी बात कहते हैं, हम अपने देशकी भूतकालकी बातोंमें गर्व अनुभव करते हैं। यह उत्तम है कि हम अपना भूतकाल याद रखें क्योंकि वह महान् और स्मरणीय था, लेकिन युवककी आँखें भविष्यकी ओर होनी चाहिये। हर देशके व शिन्दे सोचते हैं विश्वमें उन्हें कुछ खास

सन्देश वितरण करना है। इङ्गलैंड अपने साम्राज्यका बोझा लादे रखना चाहता है गोकि गुलाम अकृतज्ञ लोग आपत्ति करते हैं और विद्रोह करते हैं। फ्रान्स सोचता है उसे संसारको सभ्य बनाना है, अमेरिका भगवानका अपना देश है, जर्मनीको Kultur (संस्कृति) फैलाना है, इटलीके पास फासिज्म है और रूसके पास कम्युनिज्म है। सदासे ऐसा होता आया है। यहूदी देवताओं के प्रिय थे, अरबोंके लिये भी यही समझिये। क्या यह अचरज की बात नहीं है कि हर देश सोचता है कि उसे विश्वको सुधारना है, उसकी संस्कृतिको समृद्ध करना है! हर एक अपनेको परमात्मा का प्रियपुत्र समझता है।

व्यक्तिगत तौरसे आत्म प्रशंसा हमेशा खतरनाक है। राष्ट्रके लिये भी यह खतरनाक है, क्योंकि इससे राष्ट्र सन्तुष्ट अथच निश्चेष्ट हो जाता है और दुनिया उसे छोड़कर आगे बढ़ जाती है। वर्तमान अवस्थासे सन्तुष्ट होनेका कोई कारण नहीं है। हमारे तौर तरीके विभिन्न हैं, हमारे अन्दर धार्मिक अतिरेक है, हमारी महिलाओंकी अवस्था अनुन्नत है और हमारे श्रमिकों की हालत दर्दनाक है। मृत भूतकालकी प्रशंसामें अपना वक्त बरबाद करनेसे हमारा क्या भला हो सकता है, जबकि वर्तमान हमें पुकार रहा है और काम हमारे सामने पड़ा हुआ है। दुनिया बदलती है और तेजीसे बदल रही है और अगर हम इस स्थिति के अनुसार अपना समाज नहीं बनाते तो हमारा नाश होगा ही। हमने देखा है कि वर्षों नहीं महीनोंमें ही पुरानी प्रणालीको तोड़कर कमालपाशा और अमानुल्लाने क्या कर डाला। जो तुर्की और पिछड़े अफगानिस्तानमें हुआ वही भारतमें हो सकता है। लेकिन यह कमालपाशा या अमानुल्लाके तरीकेसे किया जा सकता है, यह आपकी पसन्द पर निर्भर नहीं हो सकता कि

आप धीरे-धीरे सुधार करें या जल्दी-जल्दी, या तो आप फौरन अपना चुनाव कर लें और काम करने लगें अन्यथा विनाश अवश्यंभावी है। तुर्की और अफगानिस्तानने अपना चुनाव कर लिया और वे आज महान् राष्ट्र माने जाते हैं, आप क्या चाहते हैं ?

दुनियाकी हालत बहुत खराब है और चमकते हुए बड़े शहरोंके होते हुए भी भारतकी अवस्था संगीन है। युद्धकी अफवाहोंका बाजार गर्म है और भविष्यवाणीकी जाती है कि भावी महा संग्रामका परिणाम वर्तमान सभ्यताके लिये विनाश-कारी हो सकता है।

इस देशमें और अन्यत्र भी, युग-युगमें महापुरुषोंका मानव जातिकी सहायताके लिये जन्म हुआ है। लेकिन किसी भी महापुरुषसे बढ़कर वह आदर्श है जिसकी वह प्रतिष्ठा करना चाहता है और धर्मकी व्याख्या युग-युगमें बदलती रहती है, और कोई भी सामाजिक प्रणाली जो किसी समय समाजके लिये हितकर रही हो, किसी समय नुकसानदेह हो सकती है। आज आप बैलगाड़ीमें बैठकर बम्बई नहीं जाते और न तीर-कमान लेकर लड़ते हैं। तब ऐसी प्रणालीके पीछे क्या पड़ते हैं जो किसी समय बैलगाड़ी या तीर कमानके समय अच्छी थी।

जितने महापुरुष हुए हैं सबने वर्तमान प्रणालीके विरुद्ध विद्रोह किया है। २॥ हजार वर्ष पहले बुद्धने सामाजिक समा-नता की घोषणा की और पौरोहित्य तथा अन्य सुविधाओंके खिलाफ विद्रोह किया। वे जनताके पक्षमें और उन्हें शोषित करनेवालों के खिलाफ थे। फिर ईसा-मसीह आये और फिर अरबके मसीहा जिन्होंने हर एक चीज बदलनेमें जरा भी आना-कानी नहीं की। वे तथ्यके भक्त थे। आजके जमानेके 'अवतार'

वे विचार हैं जिनका संसारके सुधारके लिये जन्म हुआ है, और आजका आदर्श है, सामाजिक समानता। मैं चाहे कमजोर हूँ और जितना चाहूँ उतना काम न कर सकूँ और आप भी चाहे कम ही कर सकें किन्तु मैं और आप मिलकर बहुत कुछ कर सकते है और भारतके जाग्रत युवा प्राणोंकी सहायतासे हम बहुत कुछ कर सकते हैं। युवा ही देश और संसारकी रक्षा कर सकते हैं। मैं फासिस्टोंको पसन्द नहीं करता किन्तु उनके इस नारेको पसन्द करता हूँ—Gi veniezza। मैं चाहता हूँ आपका भी आदर्श वाक्य हो, खतरेके साथ खेलेंगे। हमारे बड़े बूढ़ोंको सुरक्षित रहने दीजिये।

आप और मै भारतीय हूँ, और भारतके हम बहुत ऋणी हैं, लेकिन हम मानव भी हैं और हम मानवताके भी कर्जदार हैं। हमें युवा साम्राज्यको नागरिक बनाना चाहिये। बस यही एक साम्राज्य है जिसके अधीन हमें रहना हैं, क्योंकि यही भावी विश्व-सङ्घका पुरोहित है।

—:※::—

युवा-विद्रोह

मित्रों और साथियों !

मैं कांफ्रेंसोंसे कुछ ऊबसा गया हूँ और उनकी उपयोगितामें भी मुझे जरा सन्देह होने लगा है। कांफ्रेंसोंके प्रति मेरे अन्दर उत्साहकी कमी होने पर भी, युवकोंकी कांफ्रेंसकी तरफ मेरे हृदयमें आकर्षण बना हुआ है क्योंकि यह वयोवृद्धोंकी सभाओंसे बिलकुल भिन्न है। आपमेंसे बहुतसे मुमकिन है, बड़े होनेपर आपमें जो उत्साह और लापरवाही तथा साहस है, उसे भूल जायँ। लेकिन आज आप जवान हैं और उत्साहसे भरे हुए हैं और मैं जिसकी उम्र बढ़ती जा रही है, आपकी आशा और उत्साहमें साझीदार बनने आया हूँ ताकि अपने दैनिक कार्योंके लिये आपका कुछ उत्साह और आशा अपने साथ ले जा सकूँ। मैं इसलिये आया कि युवकोंकी पुकार अदमनीय है, उनके आह्वानका प्रत्याख्यान कुछ ही लोग कर सकते हैं। और जब यह आह्वान बम्बईके युवा स्त्री-पुरुषोंकी तरफसे आया, जो वर्तमान युवा-जागृतिके नेता रहे हैं तब मैंने इस सम्मानको पसन्द किया और स्वीकार किया।

लोग कांफ्रेंसोंमें क्यों जमा होते हैं ? आप लोग यहाँ क्यों एकत्र हुए हैं ? सिर्फ व्याख्यान देने या सुनने अथवा कामसे छुटकारा पाकर या अपने खेलसे छुट्टी पाकर, वक्त वितानेके लिये ? मै सोचता हूँ आप लोग यहाँ इसलिये एकत्र हुए हैं कि जो कुछ इस वक्त है उसे आप पसन्द नहीं करते और बदलना चाहते हैं। क्योंकि आप यकीन करते हैं कि इस बेहतरी

दुनियामें जो कुछ है वह बेहतरीन नहीं है। क्योंकि आप अपने कन्धोंपर देशकी दुरवस्था और दयनीयताका बोझ अनुभव करते हैं और आपका विश्वास है कि अपनी युवावस्था जन्य साहस, स्वभाव और मनोबल द्वारा उस बोझको उठाकर फेंक सकते हैं, कमसे कम अपनी चेष्टा और विश्वाससे हलका कर सकते हैं। अगर मेरा अन्दाज ठीक है और इसी प्रेरणासे आप यहाँ आये हैं तो बहुत अच्छा है और आपके मिलने बोलनेसे तथा आपके निर्णय द्वारा कुछ न कुछ लाभ अवश्य होगा। लेकिन अगर आप वर्तमान अवस्थासे असन्तुष्ट नहीं हैं, अगर आप वर्तमान परिस्थितिसे उद्विग्न नहीं हैं, अगर आप इस बेचैनीके कारण कुछ करनेके लिये तैयार नहीं होते तो आपमें और बुड्ढोंकी बैठकोंमें क्या फर्क है जो आपसमें मिलकर बातचीत और तर्क तो बहुत करते हैं किन्तु काम कम करते हैं। जो लोग बराबर अपनी सुरक्षा और संरक्षणके फिक्रमें पड़े रहते हैं, वे संसारका सुधार नहीं करते, नहीं कर सकते। जिन्हें वतमान अवस्थासे कोई शिकायत नहीं है वे भला परिवर्तनके लिये क्यों चेष्टा करने लगे। लेकिन आप देखते हैं दुनियाँ बदलती है और तरक्कीकी तरफ बढ़ती है, क्योंकि दुनियामें ऐसे लोग हैं जो बुराइयों और अन्यायोंको सह नहीं सकते हैं।

समाजका आधार सुरक्षा और स्थायित्वके साधन हैं। सुरक्षा और स्थायित्वके बिना, समाज या सामाजिक जीवनका जन्म नहीं हो सकता, लेकिन आपके समाजमें आज कितनोंको सुरक्षा और स्थायित्व प्राप्त है? आप जानते हैं, लाखोंको ये प्राप्त नहीं है, उनके पास इतना भोजन तक भी नहीं है कि शरीर और आत्माको एक साथ रखा जा सके। उनके सामने सुरक्षाकी बात करना मक्कारी है। जब तक कि जनता सुरक्षामें भाग नहीं लेती,

तबतक आप स्थायी समाजका निर्माण नहीं कर सकते। इसी-लिये आप देखते हैं कि विश्वके इतिहासमें एक क्रान्तिके बाद दूसरी क्रान्ति होती है। इसका कारण यह नहीं है कि कोई व्यक्ति या दल खून खराबी पसन्द करता है, किसीको अराजकता या विशृंखला अच्छी लगती है, लेकिन इसका कारण अधिका-धिक जनताके लिये नहीं तो कमसे कम अधिकसे अधिककी भलाईके लिये प्रयत्नशील होना है, कुछ लोगों या दलोंके भलेसे वह बात नहीं आ सकती। वह उत्तम समय चाहे नजदीक भले ही न हो, पर यह समझ लें कि बराबर, कभी-कभी ध्यान जाते हुए ही उसी तरफ बढ़ रहा है। और सङ्घर्ष तथा वहाँ तक पहुँचने की इच्छा जितनी ही बढ़ी होगी, समाजका उतना ही लाभ हो। अगर यह इच्छा बिलकुल ही न रह जाय तो समाज निर्जीव हो जायगा और धीरे-धीरे उसका नाम निशान मिट जायगा।

इसलिये चूँकि दुनिया निर्दोष नहीं है, एक स्वस्थ समाज में बिद्रोहका बीज अवश्य होना चाहिये। इस विद्रोहको क्रान्ति और विचारमें रद्दोबदल करनेवाला होना चाहिये। युवा स्त्री-पुरुषोंका काम है कि समाजको यह प्रभावशाली भावना दें, युवा स्त्री-पुरुषोंको ही जो कुछ बुरा है उसके विरुद्ध विद्रोहका झण्डा उठाना चाहिये।

आप लोगोंमेंसे बहुतसे आश्चर्य कर रहे होंगे कि मैं इस ढंगसे क्यों बोल रहा हूँ। इसकी वजह यह है कि एक तो मैं व्याख्यानदाता या प्लेटफार्मका हीरो नहीं हूँ और दूसरा कारण यह है कि मैं अनुभव करता हूँ कि हमारी अधिकाँश कठिनाइयाँ झूठे आदर्शवादके कारण है। विदेशी राजनैतिक, आर्थिक आधिपत्य काफी खराब है, लेकिन अपने शासकका आदर्शवाद

स्वीकार कर लेना मेरी दृष्टिमें खराबसे भी खराब है क्योंकि यह हमारे सब प्रयत्नों पर रोक लगा देती है, और बिना लक्ष्यके ऐसी जगह भेज देती है, जिससे बाहर निकलनेका दरवाजा नहीं है और जहाँ हम भटकते रहते हैं। इसलिये मैं चाहता हूँ अपना दिमाग साफ़ रखूँ और हर मसले पर साफ तौरसे सोचूँ। मैं चाहता हूँ आप भी ऐसा ही करें। आजकलके रोज-मर्राके राजनैतिक शब्दोंके ग्रहण करनेसे कोई फायदा नहीं है जब तक हम यह न समझें कि हमारा कर्तव्य क्या है, हमारा लक्ष्य क्या है और किस तरह हम उस लक्ष्य तक पहुँचेंगे। मेरे साथ आप सहमत हों तो मैं इस सहमतिका स्वागत करूँगा किन्तु अगर इस सहमतिके पीछे विचार और विश्वास नहीं है तो उसका कुछ अर्थ नहीं है। मैं तो यह चाहता हूँ आप दुनिया की हालत देखें और समझें और उत्तम करनेकी अदम्य इच्छा उत्पन्न करें और सफाईसे यह जाननेकी चेष्टा करें कि क्या करना चाहिये और कैसे करना चाहिये। जो कुछ कहता हूँ उसे अगर आप गलत सोचते हैं तो बिलकुल मत मानिये। लेकिन धर्म या समाज या प्रणालीसे स्वीकृत जो भी चीज आपको अनुचित और समय विरोधी जान पड़े उसे भी मत मानिये। क्योंकि धर्म जैसा कि चीनी कहावत है बहुत हैं, लेकिन कारण एक है।

आजकी दुनियामें हम क्या देखते हैं? जनताके बहुसंख्यक लोगोंकी दयनीय अवस्था जबकि कुछ ऐशसे जिन्दगी बसर करते हैं, बहुतोंको खाना कपड़ा तक नहीं मिलता और न उन्हें अपने विकासके लिये सुविधाएँ मिलती हैं। दुनिया भरमें युद्ध और सङ्घर्ष जारी है और जो शक्ति उत्तम समाज निर्माणमें लगनी चाहिये वह ज्यादातर आपसी प्रतिद्वन्दिता या नाशमें खर्च होती

है। जब सारी दुनियाकी यह हालत है तब हम अपने दुखी देशकी क्या बात कहें। विदेशी शासनने भारतको बिलकुल कंगाल बना दिया है। और पुराने तौर तरीकों और विचारोंमें चिपके रहनेकी प्रवृत्तिके कारण उसमें जीवन नहीं रह गया है।

दरअस्ल दुनियामें ही कुछ गड़बड़ी है, इस गोलमाल और दुख-दर्दके पीछे दरअस्ल कोई मतलब भी है? पच्चीस सौ वर्ष पहले कुमार सिद्धार्थ (फिर महान बुद्ध हुए) ने दुनियाकी यह दयनीय अवस्था देखी थी और अपनेसे ही सवाल किया था—

कैसे वह ब्रह्म—
संसारकी रचना कर, उसे दयनीय रख सकता है?
अगर वह सर्व शक्तिमान होकर,
दुनियाको इस हालतमें छोड़ देता है, तो
वह अच्छा नहीं है। और अगर शक्तिमान नहीं है
वह भगवान नहीं है।

मनुष्यका अन्तिम उद्देश्य चाहे जो भी हो लेकिन हर एक मनुष्यका वर्तमान उद्देश्य होना चाहिये कि यह दयनीयता कम हो और उत्तम समाजका निर्माण हो और उत्तम समाजका लक्ष हो, एक राष्ट्र पर दूसरे राष्ट्रके आधिपत्यका विनाश, एक व्यक्तिपर दूसरेके आधिपत्यका सर्वनाश। इसको प्रतिद्वन्दिताके स्थान पर सहयोगकी स्थापना करना चाहिये।

आपने अक्सर ब्रिटिश साम्राज्यवादकी निन्दा की होगी क्योंकि आपको इसके अन्तर्गत दुख भोगना पड़ा। लेकिन क्या आपने सोचा है कि साम्राज्यवाद एक ऐसी सामाजिक प्रणाली का परिणाम हैं, और जो संसारके अधिकांश भाग पर अपना आधिपत्य जमाये हुए हैं जिसको पूँजीवाद कहते हैं। मेरा और आपका लक्ष्य होना चाहिये देशको विदेशी शासनसे मुक्त करना,

लेकिन जो समस्या हमारे सामने है यह उसका एक भाग ही है। जब तक साम्राज्यवादका खात्मा नहीं किया जाता तबतक मानव जातिका कुछ आदमियों द्वारा शोषण होता रहेगा। यह हो सकता है कि हममेंसे कुछ शोषकोंके पद तक पहुँच जायँ, लेकिन उससे बहुतोंको स्वाधीनता नहीं मिलेगी। इसलिये हमारा लक्ष्य होना चाहिये सब तरहके साम्राज्यवादका विनाश और दूसरे आधारपर समाजका गठन। वह आधार पारस्परिक सहयोगका होना चाहिये। और यही समाजवादका दूसरा नाम है। इसलिये हमारा राष्ट्रीय लक्ष्य होना चाहिये समाजवादी समाज की रचना और अन्तर्राष्ट्रीय लक्ष्य होना चाहिये, समाजवादी राष्ट्रोंका विश्वसङ्घ।

अपने आदर्श तक पहुँचनेके पहले दो विरोधी दलोंसे लड़ना होगा, एक दल राजनैतिक विरोधी होगा और दूसरा दल सामाजिक विरोधी होगा। हमें विदेशी शासकोंको हटाना होगा और सामाजिक प्रतिक्रियावादियों पर विजय प्राप्त करनी होगी। भूतकालमें हमने देखा है कि जो राजनीतिमें सबसे उग्र थे, वैसे लोग भी सामाजिक क्षेत्रमें प्रतिक्रियाशील थे। हमने देखा है, राजनैतिक माडरेट सामाजिक मामलोंमें काफी अग्रसर हुए हैं। लेकिन देशके राजनैतिक जीवनको सामाजिक जीवनसे अलग नहीं किया जा सकता। आप समाजका सुधार सिर्फ उसके एक भागको सुधारकर नहीं कर सकते, एक भागके कीटाणु दूसरे भागपर निश्चित रूपसे असर डालते हैं और रोगकी गहरी जड़ जमा देते हैं। इसलिये आपकी सामाजिक और राजनैतिक फिलासफी सम्पूर्ण एक होनी चाहिये और आपका कार्यक्रम ऐसा होना चाहिये जिसमें जीवनके सब अङ्गोंका समावेश हो।

भूतकालमें चाहे जो कुछ शक भी रहा हो मगर आज यह

बिलकुल साफ है कि सामाजिक प्रतिक्रियावादी उनके साथी हैं जो भारतको परतन्त्र रखना चाहते हैं। अगर इस स्वयम् सिद्ध तथ्यके लिये किसी प्रमाणकी जरूरत थी तो वह पिछले महीनों में मिल गये। आपने साइमन कमीशनका बायकाट देखा और उसमें काफी मदद भी दी। आपने यह भी देखा कि कुछ व्यक्तियों और कुछ दलोंने इस कमीशनसे साथ कैसे सहयोग किया, और राष्ट्रकी इच्छाको न मानकर उसके स्वागतमें भाग लिया। वे लोग और दल कौन हैं? आप देखेंगे वे प्रतिक्रियावादी, सम्प्रदाय वादी या अवसर वादी हैं जो जातिके स्वार्थोंका बलिदान कर अपने लिये सुविधाएँ चाहते हैं।

राजनैतिक और सामाजिक प्रतिक्रियाशीलताका इससे भी बढ़कर उदाहरण आपको भारत सरकारके वर्तमान रुखसे मिलता है जो उसने समाज सुधार सम्बन्धी साधनोंके प्रति अख्तियार कर रखा है। जनताके प्रतिनिधियों द्वारा सामाजिक बुराइयोंको मिटानेके जो प्रयत्न होते है उसपर सरकार पानी फेर देती है। सरकारी विरोधके कारण ही समाजकी काफी उन्नति नहीं हो सकती और न समाज बदलती हुई अवस्थाके अनुकूल अपनेको बना सकता है। भारतकी ब्रिटिश सरकार भारतके हिन्दू मुसलमानोंके पुराने रीति-रिवाजों की स्वनिर्वाचित संरक्षक बन गयी है। हालमें ही पबलिक सेफटी बिलके समय शुद्धि और तब लीगके सम्बन्धमें ईसाई गोरे साम्राज्यवादियोंकी लम्बी चौड़ी बातें सुनने लायक थीं, किन्तु उनकी बातोंसे यह नहीं मालूम होता था कि वे दोनोंमेंसे किसकी तरफदारी ज्यादा करना चाहते हैं।

मनुष्यकी स्वतन्त्रताकी इच्छाको कम करनेके लिये पहले भी धर्मका बहाना लिया गया है। राजा और सम्राटोंने अपने लाभके

लिये धर्मकी दुहाई देकर जनताको अपने अधीन रखा है, लोगोंमें विकाश जमा दिया था कि उनपर शासन करनेका राजाओंको दैवी अधिकार है। पुरोहित, पुजारी या इसी तरहकी अन्य सुविधा प्राप्त जातियाँ, अपनी सुविधाओंके लिये दैवी स्वीकृतिका दावा करती रही हैं। धर्मके जरिये जनताके दिमागमें यह बात जमायी गयी है कि उनकी दुरवस्था उनके दुर्भाग्यके कारण है, ये सब उनके पूर्व जन्मके पापोंका फल हैं। धर्मके नामपर ही महिलाओंको भी दबाकर रखा गया है, और आज भी उसीके नामपर पर्दा जैसी बर्बर प्रथाके अधीन रखा गया है। दलित या अछूत जाति चिल्ला-चिल्लाकर कह रही है किस तरह उन्हें धर्म के नामपर मानवताके अधिकारोंसे वंचित रखा गया। धर्म अधिकार वादका स्रोत रहा है और चूँकि हमारे शासकोंने हमारी इस कमजोरीको समझ लिया है और चूँकि उनका शासन भी इसी अधिकारवादके आधारपर अवस्थित है, इसीलिये वे इसके बुरे-से-बुरे रूपको भारतमें फैलाये रखना चाहते हैं अगर पढ़े लिखोंकी भावना इस अवस्थाके प्रति विद्रोही हो उठे और भारत भरमें फैल जाय तो अधिकारवादकी नीव हिल जायगी और साथ ही ब्रिटिश शासनकी जड़ भी हिला देगी।

आज भारतमें और तमाम दुनियामें सामाजिक और आर्थिक मामलोंपर काफी तर्क वितर्क और बहस हो रही है। इन तमाम बहस मुबाहिसोंसे दो प्रकारकी विचारधारा प्रकट होती हैं। एक विचारधारा सुधारकोंकी है जो जिनके पास समाजकी सत्ता है उन सत्ताधारियों की रजामन्दीसे समाजका धीरे-धीरे सुधार करना चाहते हैं। वह विचारधारा मन्दगतिसे सामाजिक विकासका समर्थन करती है। राजनैतिक क्षेत्रमें यही अँगरेजोंकी रजामन्दीसे भारतके लिये औपनिवेशिक स्वराज्यकी स्थितिमें

विश्वास करती है और आर्थिक क्षेत्रमें यह पूँजी पतियों और जमीन्दारोंकी रजामन्दीसे दरिद्रोंका भला करना चाहती है, यह रजामन्दी चाहे उत्साहके साथ और एकाँगी हो। सामाजिक क्षेत्र में भी जिन जातियों या दलों को सुविधाएँ प्राप्त हैं, उनसे उन्हें धीरे-धीरे वंचित किया जाय। दूसरी विचार धारा क्रान्तिकारी है जो शीघ्र परिवर्तन चाहती है, यह विश्वास नहीं करती कि सुविधा और सत्ताके अधिकारी जब तक मजबूर न हो जायेंगे अपनी स्वीकृति देंगी. यहाँ भी रजामन्दी है, पर यह स्वीकृति अनिच्छा पूर्वक मजबूरन स्वीकृति है।

ये दोनों प्रतिद्वन्दी धाराएँ आधिपत्य कायम करनेके लिये आपसमें प्रतिद्वन्दिता कर रही हैं। काफी हदतक प्रगतिशील और क्रान्तिकारी साधन, अगल बगल काम करते हैं। किन्तु आदर्शमें जो फर्क है, वही मुख्य है इसीलिये यह आवश्यक है कि दोमेंसे एक विचार धाराको चुन लें और जिसे आप चुने उसीके अनुसार कार्य करनेमें अपनी सारी ताकत लगा दें।

अगर आपमें कोई यह विश्वास करता हो कि जिनके पास सत्ता और सुविधा है, वे आपकी दलीलें और तर्कसे उन्हें छोड़ देंगे तो मैं कहूँगा कि आपने इतिहासका ठीकसे अध्ययन नहीं किया और भारतमें जो घटना घटीं उनपर विशेष ध्यान नहीं दिया। हमारे सामने जो समस्या है वह शक्ति पानेकी है। हमारी कौसिलों और असेम्बलियोंमें बढ़िया भाषण चाहे उनके शब्द कितने ही कड़े क्यों न हों सत्ताधिकारीपर प्रभाव नहीं डालते। हम वहाँ कारण और दलीलोंका बाहिरी प्रदर्शन देखते हैं फिर भी सरकारी वक्ताका रुख कभी-कभी असह्य और अपमान जनक होता है। लेकिन आप बाहर आकर देखिये, जहाँ कहीं भी जनताकी इच्छा और सरकारकी मर्जीमें संघर्ष होता है, वहाँ

जनता चाहे जितनी शान्त हो, मगर सरकार जनताके साथ तर्क और दलीलसे पेश नहीं आती बल्कि सैनिकोंके बायोनेट और पुलिसकी लाठियोंसे वह जनताको समझाना चाहती है, उसकी भाषा शूटिंग और मार्शल लाकी है। वर्तमान स्थितिका आधार इस्पातकी—बायोनेट और लाठी है। सख्त इस्पात और डण्डेसे आप क्या तर्क वितर्क कर सकते हैं। आपको, अगर आप चाहें तो उनका सामना दूसरे तरीकोंसे करना होगा, वे तरीके ऐसी सामर्थ संग्रह करना है जो बायोनेट और लाठीसे तगड़ी हो।

सरकारको—कहा जाता है कानून और व्यवस्थाकी रक्षा करना ही है। इससे कोई मतलब नहीं है कि इसका परिणाम अधिक अव्यवस्था, मौत और जख्म हो। हर भारतीय जानता है कानून और व्यवस्थाके नामपर क्या अपराध किये जाते हैं, फिर भी कुछ लोग इसकी दुहाई देते हैं। कानून और व्वयस्था, प्रतिक्रियावादियों और उन सत्ताधारियोंका अन्तिम आश्रय स्थल है जो अपनी सत्ता छोड़ना नहीं चाहते। जबतक स्वतन्त्रता नहीं आती, देशमें कानून और व्यवस्था कायम नहीं हो सकती। फ्रेंचदार्शनिक Proudhon ने ठीक कहा है—स्वाधीनता—व्यवस्थाका लड़की नहीं माता है।

सुधारवादी परिवर्तनके लिये सच्चाईसे जोर दार अपील हैं, वे अपने प्रतिद्वन्दियोंके खिलाफ कानूनी नुक्तोंमें विजय पाना चाहते हैं। लेकिन सरकारका विरोध अपनी जगहसे टससे मस नहीं होता और उनकी कोशिश बेकार हो जाती हैं क्योंकि सत्ताधिकारी जानता है कि इनके तरीकोंसे उनकी सत्ताको कोई वास्तविक भय नहीं है, वह सख्त इस्पातके भरोसे बैठा रहा है। दुख तो यह है कि जिस सर्वसाधारणके लिये सुधारवादी इतनी चेष्टा करते हैं, उसपर भी उनके तर्कोंका प्रभाव नहीं पड़ता। सर्व,

साधारण यह सब कुछ नहीं समझता और न उसे समझानेकी कोशिशकी जाती है। नेताओंमें समझौता करानेकी कोशिशोंमें तमाम शक्ति खर्चकी जाती है और उपेक्षाकी जाती है। तब आश्चर्य क्या है कि जनता भी उदासीन रहती है और नेताओंकी पुकारका उसपर कोई असर नहीं पड़ता। राष्ट्रका सिर धड़से इतनी दूर चला गया है कि दोनोंमें सम्बन्ध ही नहीं दिखता।

इसीलिये इस समय देशमें एक आवाज, सिर्फ आवाज होनी चाहिये विद्रोह! लाखों, करोड़ों कण्ठोंसे एक ही थर्रा देनेवाली आवाज विद्रोहकी निकलनी चाहिये। जब करोड़ों कण्ठोंसे एक ही ध्वनि एक साथ निकलेगी तब इङ्गलैंड—जैसा कि उसने पहले किया है—अपना सर झुका देगा। लेकिन अगर राष्ट्रकी यह आवाज बुलन्द नहीं की गयी तो आप यह न समझें कि आप अंग्रेजोंसे किसी प्रकार सत्ता ले लेंगे।

जनताकी आवाज उसी हालतमें उठ सकती है जब आप उसके सामने ऐसा आदर्श और कार्यक्रम रखें, जिसका उसपर असर पड़ता हो और जो उसकी आर्थिक अवस्था सुधारता हो। और जनताकी आवाज उठनेके बाद वह तभी कार्यकरी होगी जबकि वह ध्येय, संग्राम और बलिदान कर पाने योग्य हो।

मेरे प्रांतके गवर्नरने तालुकेदारों को सलाह दी है। गवर्नरने उनसे कहा, वे अपने साथी बुद्धिमानीसे चुन लें। मैं भी आपको सलाह देता हूँ—अपना साथी सावधानी और बुद्धिमानीसे चुनें। इन चुनावमें आपको यह देखना होगा कि भारतकी स्वाधीनता से किनको लाभ होगा और अँग्रेजी राज कायम रहनेसे कौन फलता फूलता रहेगा। भारतकी स्वाधीनतासे जिनको लाभ होगा, आप उन्हीं का पक्ष लीजिये। देशकी जनता—किसानों

और मजदूरोंका साथ दीजिये और स्वतन्त्र भारतका स्वप्न देखते समय उनका ही ध्यान कीजिये। तभी आपका कार्यक्रम जनता के हितका होगा और तब जनताको इच्छा और शक्ति आंदोलनके पीछे होगी। जनताकी स्वाधीनताका अर्थ ब्रिटिश साम्राज्यवाद का ही नहीं, हर तरहके शोषणका अन्त होना है, और इसका लक्ष आर्थिक और सामाजिक सामानताके आधार पर समाजका पुनर्निमाण है।

भारतकी स्वाधीनता हम सबको प्यारी है। स्वाधीनताकी हमारी इच्छा शरीरसे कम और मनसे ज्यादा सम्बन्ध रखती है। किन्तु भारतकी जनताके लिये जिनका पेट खाली है, शरीर नंगा है और कमर खुली हुई है, स्वाधीनताका जीवनका सबसे बड़ा सवाल है। भारतकी दरिद्रता ही अत्यन्त आश्चर्य और दुखदायक है। यह भगवानका अभिशाप या समाजकी अवस्था का परिणाम नहीं है। भारत भूमिमें अपने बच्चोंके लिये काफी सामग्री है, अगर विदेशी सरकार और भारतके हा कुछ लोग सब चीजोंको हथिया कर जनताको उसके भागसे वंित न करें। रस्किनने कहा है—गरीबी—गरीबकी प्राकृतिक कमजोरीके कारण नहीं है, न यह ईश्वरीय देन है—गरीबीका कारण नशेबाजी भी नहीं है—इसका असली कारण है कि दूसरेने उसकी पाकेट मार ली।

सारी सम्पत्तिपर कुछके अधिकारका अर्थ बहुतोंका दुख ही नहीं है, बल्कि यह जनमन पर भी अपना प्रभाव डालता है ताकि वह स्वाधीनता न चाहे। यही मानसिक दृष्टिकोण ही गरीबीको निसहाय बना देता है और यह पराजयकी भावना ही है जिसका आपको सामना करना है।

आप भारतके युवा आन्दोलनके नेता रहे हैं। और आपने

एक शक्तिशाली संगठन खड़ा किया है। मगर याद रखिये संगठन और संस्थाएँ तबतक आगे नहीं बढ़ सकती जबतक कि उसके पीछे शक्तिशाली विचार न हों। आप अपने सामने महान् आदर्श रखिये और उपेक्षणीय समझौते द्वारा उन्हें नीचा मत कीजिये। खेतों और कारखानोंमें काम करनेवालोंको देखिये और देखिये भारतकी सीमाके बाहर लोग कैसे अपने देशकी समस्याओंका सामना करते हैं। अपनी मातृभूमिके उद्धार के लिये राष्ट्रीय बनिये और अन्यायके बन्धनसे संसारको मुक्त करने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय बनिये। महान् कार्य करने के लिये— एक फ्रेंच महापुरुषने कहा है—आदमीको सोचना चाहिये कि वह कभी नहीं मरेगा। मौतसे कोई भी नहीं बच सकता मगर जवान इसका ख्याल तक नहीं करते, इसीलिये युवक मृत्युञ्जयी हैं और जो मौतको जीत चुका है वह सब कुछ कर सकता है।

—::o::—

साम्प्रदायिक दंगे

समय आ गया है कि हम इन सब दुःखपूर्ण घटनाओंको जो भारत भरमें हो रही है, खत्म करें। मुझे विश्वास है कि प्रत्येक भावनापूर्ण व्यक्ति चाहे उसके राजनैतिक विचार कुछ ही हों, इस महत्त्वपूर्ण कार्यमें सहयोग देगा।

धारा सभा इस बातको अनुभव करेगी कि यह मामला ऐसा है जिसने सारे देशमें उत्तेजना फैलाई है और उससे लोगोंके दिमागमें बेचैनी होना स्वाभाविक है। इस मामलेको बिना वाद-विवादके उठाना कठिन है और इन वाद-प्रतिवादोंसे कटुता उत्पन्न होती है। मेरा उद्देश्य या इच्छा कुछ ऐसा कहनेकी नहीं है जिससे कटुतामें वृद्धि हो या इस धारासभामें और कोई वाद-प्रतिवाद उत्पन्न हो जाय।

आगे चलकर नेहरूजीने समाचारपत्रोंमें प्रकाशित साम्प्रदायिक दंगोंके बारेमें अतिरञ्जित तथा उत्तेजक समाचारोंका उल्लेख करते हुए कहा—"मैं आशा तथा विश्वास करता हूँ कि धारासभा मेरी इस बातसे सहमत होगी कि हम सबका और विशेष कर धारासभाके सदस्योंका कर्त्तव्य है कि महासंकटके इन दिनोंमें हम ऐसी कोई बात न कहें या न करें जिससे लोग उत्तेजित हों और स्थिति बदसे बदतर हो जाय। स्थितिका एक सबसे बुरा पहलू यह है कि अफवाहें जोरोंसे उड़ने लगती हैं और कभी-कभी वे बिलकुल बेबुनियाद होती हैं। तरह-तरहकी अफवाहों पर जल्दी विश्वास कर लिया जाता है। हमें केवल अरक्षा तथा सार्वजनिक अशांतिको ही नहीं सहना पड़ता बल्कि उससे भी बुरी

चीजको बर्दाश्त करना पड़ता है। यह चीज मानसिक अवस्था है जो कि इस प्रकारकी अवस्थाओंका पोषण करती है। जब हमारे सामने महान् सङ्कट उत्पन्न होता है तब हमें स्थितिप्रज्ञता रखनी चाहिये।

जबसे अन्तःकालीन सरकारने कार्यभार सम्भाला तबसे इन साम्प्रदायिक दंगोंकी ओर उसे बहुत अधिक ध्यान देना पड़ा है। धारासभाको यह याद होगा कि १६ अगस्तको कलकत्तामें जो नरमेध प्रांरम्भ हुआ उसके बाद ही सरकाने काम सम्भाला, हमारे सब कार्योंपर इन घटनाओंका ग्रहण लग गया और हमने स्थितिको सम्भालनेकी पूरी कोशिश की।

धारासभा यह जानती है कि मौजूदा विधानके अन्तर्गत भारत सरकार प्रांतीय स्वशासनमें हस्तक्षेप नहीं कर सकती है। मौजूदा विधानके अन्तर्गत यदि कोई हस्तक्षेप कर सकता है तो वह गवर्नर जनरल न कि सपरिषद् गवर्नर जनरल। फिर भी चूँकि, उत्तरदायी पदोंपर हम भारतीय मौजूद हैं और देश हमारी ओर पथ-प्रदर्शनके लिये देखता है। हमने सहायताकी पूरी कोशिश की। इस दुर्भाग्यपूर्ण कालमें, चाहे वह कलकत्तामें हो, भारतके किसी अन्य स्थानमें, नोआखली में या पूर्वी बंगाल अथवा बिहारमें, सरकारको अपनी जिम्मेदारीका पूरा ख्याल रहा है और भारतको जिस खतरेने घेर लिया था उसे दूर करनेकी सरकारको बड़ा उत्कंठा रही है। ऐसा जान पड़ता है कि हम अकर्मण्य बैठे हैं और उसके लिये जनताने हमारी बहुत आलोचना की। लेकिन यह तो अनिवार्य था कि हम इस मामलेमें खुले तौर पर कार्य नहीं कर सकते थे। मैं समझता हूँ कि यह आलोचना न्यायोचित नहीं थी।

आगे चलकर नेहरूजीने कहा, ऐसा जान पड़ता है मानो

विभिन्न स्थानोंमें हत्याओं तथा नृशंसताके लिये प्रतिद्वन्दिता चल रही है। यदि हमने इसे न रोका तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि हमारे देशका भविष्य अन्धकारपूर्ण बन जायगा। यद्यपि इन दंगोंको दबानेके लिये सशस्त्र फौजोंकी जारूरत हो सकती है किन्तु केवल उनसे ही काम न बनेगा। इसके लिये तो उन सब लोगोंको प्रयत्न करना चाहिये जिनका कि जनता पर प्रभाव है।

हालमें मैं बिहारके लोगोंके निकट सम्पर्कमें आया। तब मैंने देखा कि सीधे सादे तथा भोले किसान भी अपने विवेक तथा अपने मानसिक संतुलनको खोकर कितना अन्धेर कर सकते हैं। मुझे यह ज्ञात हुआ कि कलकत्ताके नरमेधमें बहुतसे बिहारी मारे गये थे। इनके रिश्तेदार तथा बहुतसे शरणार्थी वापस आये और उन्होंने बिहारके देहातोंमें कलकत्ताके नरमेधकी कहानियाँ सुनाई। इससे बिहारकी जनता बहुत उद्विग्न हो उठी। उसके बाद नोआखाली तथा पूर्वी बङ्गालके समाचार मिले। उपर्युक्त कहानियों तथा विशेष कर स्त्रियोंके अपहरण, बलातकार तथा बलात् विवाहके समाचारोंने जनताकी क्रोधाग्निमें घी का काम किया। कुछ समय तक वह केन्द्रीय सरकारकी ओर देखती रही और उसे आशा थी कि सरकार सहायता और संरक्षण देगी। जब उन्होंने ऐसी कोई मदद या संरक्षण मिलता न देखा तो वह बहुत क्रोधित हो उठी और अन्तकालीन सरकारकी बाह्य अकर्मण्यताकी बड़ी आलोचना की।

आगे चलकर नेहरूजीने कहा कि छपरा तथा भागलपुरकी घटनाओंने उत्तेजनामें वृद्धि की और गुण्डोंने स्थितिसे पूरा फायदा उठाया। तथा मुंगेर जिलोंमें दंगोंने जन-विद्रोहका रूप लिया। यह जन-विद्रोह करीब एक सप्ताह तक रहा। जितने

जल्दी यह शुरू हुआ था उतनी ही जल्दी दब गया। यह विद्रोह जो अन्य जिलोंमें भी फैलनेवाला था, रुक गया और यह एक आश्चर्य-जनक बात है। निश्चय ही बादमें फौज पहुँच गई और उसने शान्ति कायम करनेमें मदद दी, किन्तु शान्ति-स्थापनमें उन लोगोंने बहुत योग दिया जो कि प्रधानतः बिहारी थे। वे सब गाँवों में फैल गये-और उन्होंने किसानोंको समझाया। गांधी-जीके अनशनकी खबरका भी अच्छा प्रभाव पड़ा।

समाचार पत्रोंमें प्रकाशित बिहारके हताहतोंकी कुछ संख्याओं को बिलकुल गलत बताते हुए नेहरूजीने कहा—एक सप्ताह बाद बिहारमें स्थितिपर काबू कर लिया गया और अब यहाँ शान्ति है। स्थितिके साधारण अवस्थाको पहुँचानेका लक्षण यह है कि लोग गाँवोंको लौटना चाहते हैं। अब यहाँ सबसे बड़ी समस्या जनताके पुनर्निवास की है।

पूर्वी बङ्गालकी समस्याका उल्लेख करते हुए नेहरूजीने कहा—विश्वसनीय साक्षियोंसे वहाँके बारेमें जो समाचार मिले हैं उन्होंने इस महत्वपूर्ण समस्याकी ओर ध्यान आकर्षित किया है कि अपहृत तथा बलात् धर्म-परिवर्तित स्त्रियोंको वापस किया जाय। यह प्रश्न स्वयंमेव ही महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि इसकी प्रतिक्रियाएँ भी भारतमें व्यापक होंगी। अतएव यह अत्यावश्यक है कि जल्दी ही इन स्त्रियोंको लौटानेके लिये कार्रवाई की जाय, तभी बङ्गालमें पुनर्निवासका कार्य प्रारम्भ हो सकता है।

निश्चय ही राज्यका कर्तव्य है कि वह इन उपद्रवोंसे पीड़ितों को सहायता दे। मुझे आशा है कि प्रान्तीय सरकारें पर्याप्त रूपमें इस कार्यको करेंगी। इससे जनतामें सुरक्षाकी भावना उत्पन्न होगी और साधारण जीवनके लिये उपयुक्त वातावरण पैदा होगा।

प्रश्नोत्तर

(१ क्या आप "भारतके लिये पूर्ण स्वाधीनता" शब्दकी व्याख्या करेंगे कि इसका अर्थ क्या है ?

उत्तर—

कांग्रेसके विधानमें पूर्ण स्वाधीनताका जो उल्लेख है, उसीसे इस प्रश्नकी उद्‌भावना हुई है, ऐसा मेरा अन्दाज है, मैं इसका जा आर्थिक रूप है, उसे छोड़कर जो राजनैतिक पहलु है, उसीका स्पष्टीकरण करता हूँ। यद्यपि कांग्रेस इसके आर्थिक पहलू और अन्य तरहके विकास पर भी विचार करने लगी है और बहुतसे कांग्रेसी जिनमें मैं भी हूँ, राजनैतिक स्वाधीनतासे भी अधिक आर्थिक स्वाधनतापर जोर देते हैं। यह प्रत्यक्ष है कि आर्थिक स्वाधीनतामें राजनैतिक स्वाधीनता भी शामिल है। लेकिन जैसा कि कांग्रेसके विधानमें है, इस वाक्यकी सिर्फ राजनैतिक व्याख्या की जाय तो इसका अर्थ है, राष्ट्रीय स्वाधीनता—सिर्फ घरेलू हो नहीं बल्कि विदेशी, आर्थिक और सैनिक स्वाधीनता होगी, यानी विदेशी मामलों और सैनिक मामलोंमें भारत पूर्ण स्वाधीन हो। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि हम भारतके एकाकी रहनेपर जोर देते हैं या हम इङ्गलैण्ड या अन्य किसी देशके साथ सम्बन्ध विच्छेद पर जोर देते हैं, लेकिन इसका अर्थ यह जरूर है और इसीलिये स्वाधीनता शब्दका व्यवहार किया गया है कि यह खास तौरसे ब्रिटेनके साथ साम्राज्यवादी सम्बन्ध तोड़ना चाहता है अगर इङ्गलैण्डमें साम्राज्यवाद बरकरार रहता है तो हमें इङ्गलैण्डसे अवश्य अलग होना चाहिये। क्योंकि जबतक

इङ्गलैण्डमें साम्राज्यवाद बना हुआ है तबतक भारत और इङ्ग-लैण्डका सम्बन्ध, किसी न किसी रूपमें साम्राज्यका आधिपत्य कायम रखनेके रूपमें होगा। यह सम्बन्ध चाहे क्षीणसे क्षीण हो जाय और फिर क्रमशः राजनैतिक दृष्टिसे चाहे दिखलाई भी न पड़े किन्तु फिर भी इसका शक्तिशाली आर्थिक रूप रहेगा। इसलिये साम्राज्यवादी ब्रिटेनके साथ भारतकी स्वाधीनताका अर्थ, भारतका इङ्गलैण्डसे सम्बन्ध विच्छेद है। व्यक्तिगत तौरसे मैं इङ्गलैण्ड और भारतके सहयोगका स्वागत करूँगा किन्तु उसका आधार साम्राज्यवाद नहीं हो सकता।

(२) संसारकी समस्याओंके साथ भारतकी समस्याका क्या सम्बन्ध है? क्या लीग आफ नेशन्स इस सम्बन्धमें सहायक है?

उत्तर—

मेरा खयाल है—यूरोप, भारत, चीन, या अमेरिकाकी प्रायः सब समस्याएँ जिनका हमें सामना करना पड़ रहा है, एक दूसरे से सम्बन्धित हैं और अन्य समस्याओंको बिना सोचे, किसी समस्या पर सोचना या उसे सुलझाना दरअस्ल कठिन है। संसार के विभिन्न भाग आजके जमानेमें असाधारण रूपसे, तेजीसे एक दूसरेसे मिले जा रहे हैं। जो घटनाएँ दुनियाके एक भागमें होती हैं, दूसरे भागमें तुरन्त ही उनकी प्रतिक्रिया या अन्तः-क्रिया होती है। अगर अन्तर्राष्ट्रीय युद्ध जैसी कोई घटना होती है तो उसका प्रभाव समस्त दुनियापर पड़ता है। अगर कोई आर्थिक सङ्कट आता है—जैसा महान् आर्थिक सङ्कट पिछले वर्षोंमें आया है, तो उसका प्रभाव सारी दुनिया पर पड़ता है। इन बड़ी लहरों या आन्दोलनोंका प्रभाव विश्वपर पड़ता है, ऐसी हालतमें स्पष्ट है कि भारतीय समस्याका अन्य समस्याओंके साथ सम्बंध है। जो कुछ

भारतमें होता है उसका असर राष्ट्रोंके ब्रिटिश गुट यानी ब्रिटिश साम्राज्य पर पड़ता है और जिसका असर ब्रिटिश साम्राज्य पर पड़ता है, उससे दुनिया प्रभावित होती है, क्योंकि ब्रिटिश साम्राज्यवाद आजकी दुनियाकी राजनीतिमें महत्वपूर्ण तथ्य है। जहाँ तक भारतका सम्बन्ध है यह अच्छी तरह जानी हुई बात है कि पिछले सौ वर्षोंमें भारतने ब्रिटेनकी वैदेशिक नीति पर सर्वाधिक प्रभाव डाला है। नेपोलियनके युगमें भी भारतका महत्व बहुत था गोकि जब आप नेपोलियोनिक आंदोलनके बारेमें पढ़ते हैं तो उसका उल्लेख कम मिलता है, लेकिन भारत इसके पीछे था। चाहे क्रिमियन युद्ध हो या मिस्रके अधिकारका सवाल हो, इसकी जड़में भारतीय सवाल है। शायद आपमें से कुछको स्मरण होगा कि प्रथम महायुद्धकी समाप्तिके बाद भी मि० चर्चिल आदि द्वारा बढ़ाया गया मध्य पूर्वीय साम्राज्यका विचार फैला था, जिसकी शुरूआत भारतसे होती थी। सौभाग्य-वश वह विचार कार्यरूप धारण नहीं कर सका। उस समय मध्य-पूर्वीय भूभाग अँग्रेजोंके कब्जेमें था—परसिया, मेसोपोटामिया, पेलेस्टाइन, अरबका हिस्सा, कुस्तुन्तुनियापर ब्रिटिश अधिकार था। इसलिये मध्यपूर्वीय साम्राज्यका विचार उतना खयाली नहीं है जितना इस समय मालूम होता है। लेकिन यह कार्य रूपमें नहीं आ सका, इसका कारण अनेक घटनाएँ हैं। एक तो सोवि-यट गवर्नमेंट, दूसरे तुर्की और परसियाकी घटनाएँ इसका कारण थीं। इसके बाद भी बहुतसे परिवर्तन हुए, फिर भी ब्रिटिश सरकारका उद्देश्य था, भारतको जानेवाले पथ मार्ग पर अधि-कार रखना क्योंकि मोटर और हवाई जहाजके विकासके कारण स्थल मार्गका महत्व बढ़ा। मोसलके प्रश्न पर तुर्की और इङ्ग-लैण्डमें झगड़ा हो जानेकी परिस्थिति पैदा हो गयी थी, इसका

प्रधान कारण यही था कि मोसलका भारतके स्थल-मार्गमें विशेष स्थान है।

इसलिये अनेक दृष्टिकोणोंसे भारतका प्रश्न दुनियाकी समस्याओंपर बहुत अधिक असर डालता है।

लीग आफ नेशन्सके सम्बन्धमें यही कहा जा सकता है कि अगर इसके सामने भारतीय दृष्टिकोण रखा जाय तो वह भले ही सहायक हो, किन्तु अभीतक लीग आफ नेशन्समें भारतके उपस्थित होनेके सिवा और कोई वास्तविक सम्बन्ध नहीं है। भारतके नामधारी प्रतिनिधि दरअस्ल वहाँ ब्रिटिश सरकारका दृष्टिकोण ही उपस्थित करते हैं। आप कह सकते हैं कि वहाँ भारत अपना प्रतिनिधित्व नहीं करता बल्कि इस प्रकार ब्रिटिश सरकारको अतिरिक्त प्रतिनिधित्व मिल जाता है। भारतका प्रतिनिधित्व सचमुच हो तो भले ही कुछ भलाई हो सके किन्तु वास्तविकता यह है कि राष्ट्र सङ्घ वर्तमान स्थिति कायम रखने के लिये ही बनाया गया है, और भारतीय अपनी वर्तमान स्थिति बदलना चाहते हैं, इसलिये अगर भारतकी तरफसे कोई खास बात कही जायगी तो उसका यह कह कर विरोध किया जायगा कि यह ब्रिटिश साम्राज्यकी आन्तरिक नीतिमें दस्तन्दाजी करना है।

(३) साम्प्रदायिक समस्यामें आर्थिक अवस्थाका हाथ कहाँ तक है?

उत्तर—

इस प्रश्नका गठन शायद ठीक नहीं हुआ है, कुछ हदतक इसके लिये मैं जिम्मेदार हूँ। इस मानेमें कि साम्प्रदायिक समस्याका प्रधान आधार आर्थिक नहीं है, इसका आर्थिक

आधार भी है, जिसका इसपर कभी-कभी असर पड़ता है, किन्तु इसका मुख्य कारण राजनैतिक है। इसका कारण धर्म नहीं है। धार्मिक युद्ध भावना या Antagonism के साथ साम्प्रदायिक समस्याका बहुत कम सम्बन्ध रहा है। साम्प्रदायिक समस्या का धर्मके साथ इतना ही सम्बन्ध रहा है कि पिछले वर्षोंमें जुलूस आदिको लेकर मुठभेड़ हो गयी है और कुछ सिर फूट गये हैं।

लेकिन वर्तमान साम्प्रदायिक समस्या धार्मिक नहीं है, गो कि कभी-कभी यह धार्मिक भावना उकसा देती है और यह मुश्किल है। लेकिन दरअस्ल यह ऊँची मध्यम श्रेणीका राजनैतिक सवाल है, यह सवाल ब्रिटिश सरकारकी राष्ट्रीय आन्दोलनको कमजोर करनेकी नीतिके कारण उठ खड़ा हुआ है, दूसरा कारण भारत को जो राजनैतिक अधिकार मिलने वाला है, ऊँची श्रेणी वाले उसमें भाग बटवारा चाहते हैं। इसका आर्थिक रूप यह है कि मुसलमान हिन्दुओंकी अपेक्षा गरीब हैं, कहीं-कहीं कर्ज देनेवाला हिन्दू और कर्ज लेनेवाला मुसलमान होता है, कहीं-कहीं जमींदार हिन्दू है और रियाया मुसलमान है, हिन्दू रियाया भी है और हिन्दू ही जन-संख्यामें अधिक हैं। कभी-कभी होता है कि महाजन और लेनदार जमींदार और रैयतमें झगड़ा है, लेकिन पत्रोंमें यह साम्प्रदायिक झगड़ेके रूपमें छपता है। दरअस्ल यह साम्प्रदायिक समस्या ऊँची श्रेणीके हिन्दू मुसलमानोंका नये विधानके अनुसार मिलनेवाले काम और अधिकारके लिये झगड़ा है। इसका सर्वसाधारण पर असर नहीं पड़ता। एक भी साम्प्रदायिक माँगका आधार आर्थिक नहीं रहा है और न किसी भी माँगका जन-साधारणके साथ कोई सम्बन्ध रहा है अगर आप साम्प्रदायिक माँगों पर विचार करें

तो आप देखेंगे कि वे सिर्फ धारा सभाओंकी सीटों और भविष्य में मिलनेवाले कामोंका उल्लेख करते हैं।

(४) बङ्गाल और सीमा प्रान्तकी स्थिति ठीक करनेके लिये कौनसे अन्य तरीके आप व्यवहारमें लायेंगे ?

उत्तर—

संक्षेपमें अन्य तरीके जो मैं सोचता हूँ समझाने बुझानेके हैं और कुछ हद तक आर्थिक अवस्था उन्नत करनेके हैं। सीमा-प्रान्तवालोंको प्रधान कठिनाई वस्तुओंकी कमी है। वे सख्त पहाड़ी देशके रहनेवाले हैं, वे वहाँसे भोजन और लूटके लिये आते हैं। व्यक्तिगत तौरसे मैं नहीं सोचता कि फ्रांटियरका मामला बहुत मुश्किल है। अगर ठीक और दोस्ताना कदम बढ़ाया जाय तो मेरा खयाल है इसका समाधान सहज ही हो जाना चाहिये। मेरी अपनी धारणा है कि ऐसी ही समस्या यहीं नहीं—ऐसी ही समस्याका सामना उन्नीसवीं सदीमें जारकी सरकारको करना पड़ा था क्योंकि रूसका सीमान्त बहुत करीब था और लगभग ऐसे ही लोगोंसे उसका पाला पड़ा था। जहाँ तक मैं जानता हूँ उन्हें किसी महान् कठिनाईका सामना नहीं करना पड़ा। सौ वर्षोंमें ब्रिटिश सरकारको जो कठिनाइयाँ उठानी पड़ीं वे उसे नहीं उठानी पड़ीं। एक बात साफ है कि ब्रिटिश सरकारकी सीमा प्रान्तीय नीति बिलकुल असफल रही। अगर वे युगों तक चेष्टा करनेके बाद भी इस समस्याको सुलझानेमें असफल रहे, अगर साल दर साल सैनिक अभियान और हत्या-काण्ड तथा बमबाजीके बाद भी वे असफल रहे तो मानना होगा, उनकी नीति ही गलत है। जारकी सरकारको उन कठिनाइयोंका सामना नहीं करना पड़ा, जिनका ब्रिटिश सरकारको करना पड़ा, उसका कारण जहाँ तक मैं समझता हूँ यह है कि जारकी सर-

कारने फ्रांटियरके लोगोंके लिये स्वाभाविक शान्तिपूर्ण जीवन बसर करना सम्भव कर दिया, और इस बातकी कोशिश की कि वे देशमें बस जायें। मैं यह भूमिका सुझावके तौर पर रख रहा हूँ, मैं यह निश्चित रूपसे नहीं कह सकता कि ब्रिटिश सरकारको जिन कठिनाइयोंका सामना करना पड़ा, जारकी सरकारको उनका सामना क्यों नहीं करना पड़ा। सीमा प्रान्तकी जन संख्या बहुत नहीं है, ऐसी हालतमें उनकी आर्थिक अवस्था सुधारना मुश्किल नहीं होना चाहिये था। लेकिन इस कार्यके लिये जो कदम बढ़ाया जाय दोस्ताना का होना चाहिये। एटलीने अबसीनियामें जैसा कदम बढ़ाया वैसा नहीं। सीमान्तके लोग बहुत बहादुर हैं, वे इसकी ज्यादा पर्वा नहीं करते कि जिन्दा रहें या मर जायँ, वे स्वाधीनता-प्रेमी लोग हैं, जैसे कि अक्सर पहाड़ी लोग हुआ करते हैं, ब्रिटिश सरकार उन्हें अपने अधीन नहीं कर सकी, समय-समय पर वह उन्हें जीत भले ही ले पर उन्हें अपने अधीन नहीं कर सकती।

दोस्ताना प्रयत्नके सम्बन्धमें कुछ कहना चाहता हूँ। कुछ वर्ष पहले सीमा प्रान्त वालोंने महात्माजीको निमन्त्रण दिया था, वे गये भी पर उन्होंने सीमा पार नहीं की और एकदम उनके पास नहीं पहुँच सके। वे दोनों सीमाओंमें काफी जनप्रिय हैं और उन्हें बराबर निमन्त्रण मिलते हैं किन्तु सरकार उन्हें उनसे मिलनेके लिये नहीं जाने देना चाहती। वे सरकारी आज्ञा भंग कर जाना नहीं चाहते, क्योंकि वे इस प्रश्नपर सङ्घर्ष नहीं चाहते, इसलिये वे जब जाना चाहते हैं, वायसराय या भारत सरकारसे कहते हैं—मुझे वहाँसे बुलावा आया है और मैं जाना चाहता हूँ और उन्हें बराबर एक ही जवाब मिलता है—"हम बड़े जोरों से वहाँ न जानेकी सलाह देते हैं।" महात्माजीके बाद महान्

फ्रांटियर नेता अब्दुल गफ्फार खाँका वहाँ काफी प्रभाव है और वे काफी जनप्रिय हैं। वे इस क्षेत्रमें बहुत महत्व रखते हैं और यही कारण है कि सरकार उन्हें पसन्द नहीं करती। और वे अपना समय जेलमें बितानेको मजबूर होते हैं इस समय वे जेलमें हैं। दो-तीन साल बिना मुकदमा चलाये जेलमें रखनेके बाद वे पिछले साल जेलसे रिहा किये गये थे, पर यह रिहाई तीन महीने ही रही, और वे फिर दो सालके लिये जेल भेज दिये गये। खान साहब कांग्रेस कार्यकारिणीके मेम्बर हैं, वे सीमान्तमें ही नहीं समस्त भारतमें लोकप्रिय हैं। आप उनके नामसे समझ सकते हैं कि वे हिन्दू नहीं मुसलमान हैं। वे भारतकी जनताके महान् नेता हैं। इसलिये मैं सोचता हूँ कि अगर महात्मा गांधी और खान अब्दुल गफ्फार खाँ सीमान्त जायँ तो उनका अपूर्व स्वागत होगा, वे वहाँ सीमान्तकी समस्याओं पर बातचीत कर सकते हैं। मैं नहीं समझता यह समस्या सुलझाना मुश्किल है। वहाँ जानेसे ही मुश्किलोंका अन्त नहीं हो जायगा, किन्तु शान्ति और सुव्यवस्थाका रास्ता निकल जायगा और धीरे-धीरे सब मुश्किल आसान हो जायगी।

बङ्गालके आतंकवादको जो महत्व और विज्ञापन मिला है, वह बहुत ज्यादा है। बङ्गालमें आतंकवाद था, और अब भी एक हदतक है इससे इनकार नहीं किया जा सकता लेकिन जब आप इस प्रश्नपर विचार करते हैं तो भारत जैसे देशमें और बङ्गाल जैसे बड़े प्रान्तमें, देखेंगे कि दो-तीन सालमें एक या दो आतंकवादी कार्य हुए हैं, गोकि यह निन्दनीय है लेकिन यह इतना भीषण नहीं है। इस मामलेमें हमें घबराना नहीं चाहिये, यही बात मैं सर्व प्रथम कहना चाहता हूँ। जहाँ तक मैं जानता

हूँ, इस समय बङ्गालमें कोई सङ्गठित आतंकवादी दल नहीं है, गांकि जेलमें रहनेके कारण मुझे कोई प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं हैं। पहले थे, किन्तु इस समय, बङ्गाल या भारतमें कहीं नहीं हैं। इससे मेरा यह मतलब नहीं है कि बङ्गाल या अन्य कहींके लोग हिंसात्मक तरीकोंमें विश्वास नहीं करते, बहुतसे हैं जो हिंसात्मक तरीकों और क्रान्तिमें विश्वास करते हैं, लेकिन मैं सोचता हूँ जो हिंसात्मक तरीकोंमें विश्वास भी करते हैं, वे इस वक्त उनका प्रयोग नहीं करते। पुराने आतंकवादी या उनमेंसे अधिकांश सत्तासे लड़नेके लिये सशस्त्र हिंसा आवश्यक समझते हैं और उसकी संभाव्य आवश्यकता पर भी सोचते हैं, पर वे बम फेंकने या गोली मारनेकी बात नहीं सोचते। महात्मा गांधीके शान्तिपूर्ण आन्दोलनके कारण वे उस पथसे विरत हो गये। और जो बाकी रह गये वे भी इससे दूर हट गये क्योंकि आप जानते हैं, आतंकवाद राजनैतिक आन्दोलनका बिलकुल शिशुकाल है। जब राष्ट्रीय आन्दोलन छिड़ता है तब उसके पीछे दो भावनाएँ होती हैं निराशा और निसहायावस्था, यह भावना उत्तेजित युवकोंको आतंकवादी कामोंकी ओर ले जाती है, लेकिन जब आन्दोलनका विकास होता है और वह बढ़ता है तब तो जनता की शक्ति सङ्गठित कार्यकी तरफ, जनकार्यकी ओर चली जाती है। यही भारतमें हुआ और आतंकवादी आन्दोलन शेष हो गया किन्तु बङ्गालमें जिस प्रकारका भीषण दमन हो रहा है वह लोगोंको उत्तेजित करता है। मसलन, किसी शहरमें या किसीके मित्रके साथ कोई घटना घटनेसे कोई बेहद उत्तेजित हो सकता है। वहाँ पर भीषण काण्ड हो रहे हैं, ऐसी हालतमें एक या दो व्यक्ति, जिसने ये कार्य किये उसके खिलाफ कार्य करने पर उतारू हो सकते हैं। इससे सङ्गठित आतंकवादसे कोई सम्बन्ध नहीं है।

लेकिन पिछले दो वर्षोंसे ऐसी घटना भी नहीं घटीं। प्रसिद्ध आतंकवादियोंको पुलिस लगभग जानती ही है। बहुतसे नजर-बन्द कर दिये गये, बहुतोंको जेल भेज दिया गया, बहुतोंको फाँसी दे दी गयी, फिर भी बहुतसे अभी भी हैं। दो-तीन साल पहले उनमें एकके साथ मेरी मुलाकात हुई थी। आगत सज्जन पुराने जमानेके आतंकवादी आन्दोलनमें प्रधान थे, ये मेरे पास आये और बोले; मेरी यह पक्की राय है कि आतंकवादके कार्य ठीक नहीं हैं। मैं अब वे कार्य नहीं करना चाहता। मैं अपने साथियोंसे कह रहा हूँ कि वे अब ये कार्य न करें। लेकिन सवाल यह है कि अब मैं क्या करूँ? पुलिस मेरे पीछे पड़ी है, मैं जगह-जगह छिपता फिरता हूँ। मैं जानता हूँ जब भी पकड़ा जाऊँगा, फाँसी पर लटका दिया जाऊँगा, लेकिन मैं यह नहीं चाहता, मैं जब पकड़ लिया जाऊँगा, आत्म-रक्षामें गोली चलाऊँगा। अक्सर ऐसा भी होता है, पुराने आतंकवादी फाँसी पर लटकनेकी अपेक्षा मारकर मरना पसन्द करते हैं।

मेरे कहनेका तात्पर्य यही है कि आतङ्कवादी आन्दोलन आक्रमणात्मक रूपमें नहीं चल रहा है, कोई उत्तेजनावश, या फँस जाने पर आत्म-रक्षाके लिये हिंसात्मक कार्य भले ही करे किन्तु आतङ्कवादके दिन बीत चुके, इन इक्के-दुक्के कार्योंके भी कारण होते हैं, पर मार्शल-ला आदिसे उनके दमनका प्रयत्न करना बिलकुल व्यर्थ है। साधारण सैनिक मस्तिष्क किसी भी समस्याका हल मार्शल-लामें सोच सकता है और दुर्भाग्यवश भारतमें साधारण नागरिक मस्तिष्क, ज्यादातर सैनिक रूपमें चलता है। आतङ्कवादी अपने ही जीवनसे खेलता है, आतङ्क-पूर्ण कार्य करते हुए वह किसी भी समय अपनी जानसे हाथ धो

सकता है। उदाहरणके लिये कोई व्यक्ति भीड़से भरे हालमें जाता है और किसीको गोली मारता, ऐसी हालतमें साफ है कि उसने अपने जीवनका मोह छोड़ दिया। मैं नहीं समझता कि जो व्यक्ति अपना जीवन देनेके लिये तैयार है, किसी तरह मिलिटरी तरीकोंसे डराया नहीं जा सकता। अपना कार्य करते समय वह जानता है कि उसे मरना ही होगा, अक्सर वह जहर लिये रहता है और काम करनेके बाद खुद जहर खा लेता है।

(५) क्या भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलनको लन्दनमें एक ऐसी एजेंसी नहीं रखनी चाहिये जो ठीक समाचार दे सके ?

उत्तर—

मेरी समझसे यह बहुत ही आवश्यक वांछनीय कार्य है, सिद्धांतरूपमें इस विषयमें कोई आपत्ति नहीं कर सकता। आपको स्मरण रखना चाहिये कि पिछले छः वर्षोंमें भारतको असाधारण अवस्थासे गुजरना पड़ा। इन छः वर्षोंमें चार साल कांग्रेस गैर कानूनी संस्था थी। हम नहीं जानते थे कि कब हम गैर कानूनी करार दे दिये जायँगे, कब हमारे फण्ड जब्त कर लिये जायँगे, कब हमारी सम्पत्ति कुर्क कर ली जायगी, कब हमारे आफिसों पर सरकारी ताले पड़ जायँगे। इन सबने विदेशमें एजेंसीको सुचारु रूपसे चलाना जरा कठिन बना दिया था फिर भी यह कार्य वांछनीय है और मैं लन्दनमें सूचना दफ्तरकी स्थापना पसन्द करता हूँ, पर सिर्फ लन्दनमें ही नहीं यूरोपके अन्य भागोंमें भी खुलने चाहिये।

भारतीय राष्ट्रीय सेना

एक विषय मुझे कुछ समयसे कष्ट पहुँचा रहा था और परेशान कर रहा था, लेकिन अभी तक मैंने उसका उल्लेख नहीं किया था क्योंकि मेरे द्वारा उसका उल्लेख किया जाना, किसी क्षेत्र विशेषमें गलत समझा जा सकता था। लेकिन अब चूँकि युद्ध शेष हो गया है, अब इस विषय पर चुप रहनेका वैसा कोई कारण नहीं है। इसका सम्बन्ध बीस हजार या अधिक तथा-कथित भारतीय राष्ट्रीय सेनाके कैदियोंसे है। यह राष्ट्रीय सेना बर्मा और मलायामें गठित की गयी थी। तीन साल पहिले मेरी राय थी और अब भी है कि इस सेनाके नेतागण तथा अन्य, गलत तरहसे परिचालित हुए थे और वे जापानके दुर्भाग्यपूर्ण साथके बड़े परिणामों पर पहुँचनेमें असमर्थ थे।

तीन साल पहले मुझसे कलकत्तेमें सवाल किया गया कि यदि सुभाष बोस भारतको आजाद करनेके नाम पर भारतमें प्रवेश करने वाली सेनाका नेतृत्व करें तो मैं क्या करूँगा। मैंने जवाब दिया, मैं इसका प्रतिरोध करनेमें नहीं हिचकूँगा, गो कि मुझे इसमें जरा भी शक नहीं है कि श्री सुभाष और उनके भारतीय साथी तथा अनुगामी भारतकी स्वाधीनताकी कामनासे अनुप्राणित हुए हैं और किसी भी तरहसे वे जापानके हाथके कठपुतले भी नहीं हैं, फिर भी उन्होंने अपने आपको गलत पक्षकी तरफ कर लिया है और जापानके अनुकूल होकर काम कर रहे हैं। कोई भी व्यक्ति इस तरहसे भारतमें प्रवेस नहीं कर सकता। इसलिये

भीतरी मतलब जो भी हो, उनका भारतमें और भारतके बाहर प्रतिरोध करना चाहिये।

लेकिन युद्धकी समाप्तिके साथ-साथ अवस्था बिल्कुल बदल गयी और अब भारतीय राष्ट्रीय सेनाके बहुतसे अफसर और सैनिक कैदी हैं और कुछको तो दण्ड भी मिल चुका है।

गो कि उपयुक्त सूचनाका अभाव है किन्तु यह विश्वसनीय सूत्रों द्वारा कहा गया है कि किलों और कैदखानोंमें उनके साथ बहुत बुरा व्यवहार किया जा रहा है! बहुतसे तो मौतकी छाया में रहते हैं, कठोर सैनिक अनुशासनके कार्यमें मैं अँग्रेजोंकी शिकायत नहीं करना चाहता, वे विद्रोहियोंके साथ चाहे जैसा व्यवहार करनेके औचित्यकी वकालत कर सकते हैं! लेकिन एक भारतीयकी हैसियतसे, और इस मामलेमें, हर दृष्टिकोण, दल या गुट्टके भारतीयकी रायका प्रतिनिधित्व करने वालेकी हैसियतसे मैं कह देना चाहता हूँ कि अगर ये अफसर और सैनिक दण्ड देनेके बहाने हमसे छीन लिये गये तो यह महान दुखदायी कार्य होगा।

भूतकालमें उनकी जो भी भावनाएं हों, और वे बहुत गंभीर थीं, लेकिन इसमें भी कोई शक नहीं है कि वह जवानोंका एक उत्तम दल था, इसके अफसर और सैनिक उत्तम थे और उनका प्रधान उद्देश्य, भारतको स्वाधीनताका प्रेम था। किसी भी वक्त उनके साथ सख्तीका व्यवहार करना गलत है, और इस वक्त— जब कि कहा जाता है, भारतमें महान परिवर्तन होने जा रहे हैं, यह भारी गलती होगी—जिसके परिणाम बहुत दूर व्यापी होंगे, अगर उनके साथ मामूली विद्रोहियों जैसा व्यवहार किया गया। उनको सजा देना दरअस्ल सारे भारतीयोंको सजा देना होगा जो करोड़ों हृदयोंमें गहरा घाव कर देगा। सौभाग्यवश, इस मामले

में साम्प्रदायिकता नहीं है, अफसर और सैनिकोंमें हिन्दू, मुसलमान, सिख सभी हैं।

जो कुछ समाचार मुझे मिले हैं उनसे मालूम होता है कि जब सिंगापुर जापानियोंसे घिर गया और ज्यादातर ब्रिटिश आर्मी बोटोंसे चली गया तब सिंगापुरमें भारतीय राष्ट्रीय सेनाका उद्भव हुआ। मलायामें भारतीय फौज बिल्कुल जापानियोंकी दयाके भरोसे रह गयी थी।

इस समय ब्रिटिश इण्डिन आर्मीके जुनियर अफसर सरदार मोहनसिंह जापानी कमाण्डके सम्पर्कमें आये और भारतीय फौजोंके अवशिष्ट सैनिकोंको लेकर, जिनकी संख्या लगभग ७ हजार थी, एक सेना संगठित की। गो कि मोहन सिंहने किसी हद तक जापानियोंके साथ सहयोग किया, फिर भी उन्होंने जापानियोंको कई तरीकोंसे रोका और उनको कठपुतली बननेसे इनकार कर दिया। कई महीनों बाद, मामला बहुत संगीन हो गया और मोहनसिंह जो बहुत होशियार और काबिल संगठन कर्त्ता साबित हुए, जापानियो द्वारा गिरफ्तार कर लिये गये।

इस उदाहरणसे राष्ट्रीय सेनाकी विचित्र और असाधारण स्थितिका आभास मिलता है और मालूम होता है कि किस प्रकार इस सेनाके अफसर, जापानियोंके साम्राज्यवादी स्वार्थोंके साधन में भारतीय राष्ट्रीय सेनाका उपयोग न हो इस बातकी बराबर चेष्टा करते थे। वे अपने प्रयत्नमें कहाँ तक सफल हुए मैं नहीं जानता। लेकिन इससे उनका आन्तरिक उद्देश्य स्पष्ट हो जाता है और यही महत्वपूर्ण है।

इन सब बातोंको ध्यानमें रखते हुए, मैं तहे दिलसे विश्वास

करना चाहता हूँ कि इन युद्ध बन्दियोंके सम्बन्धमें ऐसा कुछ नहीं किया जायगा जिससे कि भारतके दिल और दिमागमें एक नयी वेदना उत्पन्न हो। लड़ाईकी समाप्तिके साथ-साथ युद्धावस्था भी चली गयी और इस मामलेमें अन्य विस्तृत विचारोंको प्रधानता मिलनी चाहिये।

भारतीय राष्ट्रीय सेनाके साथ व्यवहारके सम्बन्धमें भारत सरकार कम्युनिकका उल्लेख करते हुए पण्डित जवाहरलालजीने कहा—मुझे प्रसन्नता है कि मलायामें १९४२ में स्थापित भारतीय राष्ट्रीय सेनाके बन्दियोंके साथ कैसा व्यवहार किया जायगा, इस सम्बन्धमें भारत सरकारने विज्ञप्ति प्रकाशित की है। अबतक इस विषय पर जो पर्दा पड़ा हुआ था, वह उठा लिया गया, किन्तु तथ्य अभी तक छिपे हुए हैं। मैं चाहता हूँ वे तथ्य या उनमेंसे अधिकांश जनताके सामने पेश किये जाने चाहिये। मालूम होना चाहिये कि भारतकी जेलों, किलों, कैम्पोंमें इस सेनाके अफसरों और कैदियोंकी संख्या कितनी है? अभी तक किसीके भी खिलाफ क्या कार्यवाही की गयी है और किन मौलिक परिस्थितियोंमें इस सेनाकी स्थापना हुई थी।

ऐसा कहा गया है, किस अधिकारसे यह मैं नहीं चाहता कि वे लोग वहाँ अपनी मर्जीसे इधर-उधर जानेके लिये छोड़ दिये गये थे। इस सम्बन्धमें बहुतसे कानूनी सवाल भी पैदा होते हैं और उन पर भी विचार होना चाहिये और उनके द्वारा होना चाहिये जो इस तरहके कानूनोंके विशेषज्ञ हैं। यह कहा जा सकता है कि इस तरहकी कोई भी सेना, उस समयकी परिस्थितियोंमें संगठित और विदेशी शक्तियों द्वारा स्वतन्त्र सेनाके रूपमें स्वीकृत, युद्धरत सेनाकी स्थिति पा लेती है, और इसके बन्दियोंके साथ साधारण

युद्ध-बन्दियोंका-सा व्यवहार होना चाहिये। मैं इसतरहके कानूनका विशेषज्ञ नहीं हूँ कि अपनी राय दे सकूँ, लेकिन इस विषयमें निश्चिन्त हूँ कि यह विषय तहेदिलसे विचार करने योग्य है।

फिर भी मुख्य बात, कानूनी पहलूकी नहीं है। दरअस्ल यह प्रश्नको देखनेके पहलू पर निर्भर करता है। क्या यह पूर्ण अंग्रेजी या अभारतीय पहलू है या इस प्रश्नका भारतीय पहलू भी है? मैं अंग्रेजी पहलूको समझ सकता हूँ मगर भारतीय पहलूको सिर्फ समझ ही नहीं सकता बल्कि गहरे ढंगसे अनुभव भी कर सकता हूँ। मैं समझता हूँ यह हमारा भारतीय पहलू सिर्फ नागरिक जनतामें ही नहीं बल्कि ब्रिटिश भारतीय सेनाके व्यक्तियोंमें भी समझा और अनुभव किया जाता है।

यह हम सबके लिये प्रसन्नताकी बात है कि लड़ाई बन्द हो गयी और अब समस्याका सामना, युद्धको स्थितिमें नहीं बल्कि शान्तिकी स्थितिमें किया जाना चाहिये। कठिन सजाके जो राजनैतिक परिणाम होंगे उन पर भी अवश्य विचार करना चाहिये, और इसमें कोई शक नहीं कि ये राजनैतिक परिणाम काफी गहरे और सुदूर व्यापी होंगे। इस विषयमें सम्भव साम्य तुलना फ्रांसके मार्किसमे की जा सकती है। जब जर्मनोंने मार्किसोंके साथ विद्रोहियोंके समान व्यवहार करना चाहा, तब पेतांकी सरकार और जनरल आइसे हूवरने जर्मनोंको बहुत ठीक, कड़ी चेतावनी दी कि इनके साथ युद्धरत सेनाका-सा व्यवहार किया जाना चाहिये और इन्हें युद्ध बन्दियोंकी सब सुविधाएँ दी जानी चाहिये।

इसमें जारा भी शक नहीं है कि यह भारतीय राष्ट्रीय सेना नियमित, संगठित, अनुशासित, सुसज्जित सेनाकी तरह काम

करती थी। इस सम्बन्धमें कोई भी भूल नहीं है। यह दुर्भाग्यपूर्ण था कि उसमें अधिकांश गलत तरीके पर चले गये थे, किन्तु यह बिलकुल न भूलना चाहिये कि जिस पक्षमें वे थे, उसका समर्थन करनेका उनका इरादा या इच्छा न थी, उनका उद्देश्य एक ही था और वे उसीसे अनुप्राणित थे—वह था भारतकी स्वाधीनता। इसमें मुझे जरा भी शक नहीं है कि ब्रिटिश भारतीय सेनाके सैनिक और अफसर यह पसन्द करते हैं कि पुराने साथियोंके साथ उदार व्यवहार किया जाय।

—::o::—

मध्यवर्ती सरकार और लीग

लीग जबसे मध्यवर्ती सरकारमें शामिल हुई है, अँग्रेजोंके समर्थनका प्रयास किया है। मैंने एक बार मिस्टर जिन्नाको लिखा कि केन्द्रीय सरकारमें कांग्रेस और लीगके मतभेद बिना वायसरायकी दस्तन्दाजीके आपसमें तय होने चाहिये। मिस्टर जिन्नाने एकदम इस सुझावको रद्द नहीं किया, किन्तु सरकारमें शामिल होनेके बादसे लीग दल अपनेको King's party के रूपमें स्थापित करनेकी चेष्टा कर रहा है। ब्रिटिश सरकार भी अपने उद्देश्यकी सिद्धिके लिये इस स्थितिसे फायदा उठा रही है। इसके सिवा लीग और उच्च ब्रिटिश अफसरोंमें दिमागी मत-साम्य भी है।

मिस्टर जिन्नाने वायसरायको जो पत्र दिया है, उससे प्रकट है कि वह मन्त्रि-मण्डलके १६ मईके प्रस्तावको स्वीकार नहीं करते, ऐसी हालतमें केन्द्रीय सरकारमें लीगी प्रतिनिधियोंके लिये कोई स्थान नहीं रह जाता। गोकि हम उनके विधान परिषदमें शामिल होनेका स्वागत करते हैं, किन्तु हम यह बात स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि वे आवें या अलग रहें, हम आगे बढ़ते जायँगे। मैं इस विधान परिषद पर फिदा नहीं हूँ, लेकिन हमने इसे स्वीकार कर लिया है और हम कार्य करेंगे और इसका पूरा लाभ उठायेंगे। मैं इस विधान परिषदको अन्तिम विधान परिषद नहीं मानता। यह सम्भव हो सकता है कि पर्याप्त स्वतंत्रता प्राप्त करनेके बाद भारत, फिर दूसरी विधान परिषद बनावे।

इस विधान परिषद्‌में सिर्फ एक अच्छाई यह है कि ब्रिटिश शक्ति इसमें प्रत्यक्ष रूपसे उपस्थित नहीं है, गोकि पिछले दरवाजेसे अप्रत्यक्ष प्रतिनिधित्वको हम भले ही न रोक सकें। लेकिन हम विधान परिषद्‌में मामूली बातोंपर झगड़ने नहीं जा रहे हैं, बल्कि हम वहाँ भारतीय रिपब्लिककी स्थापना करने जा रहे हैं।

पाँच महीने तक परिषद्‌को स्थगित करनेके मिस्टर जिन्नाके सुझावके सम्बन्धमें पण्डितजीने कहा, इसका वास्तविक अभिप्राय यह है कि परिषद्‌की बैठक कभी हो ही नहीं।

मध्यवर्ती केन्द्रीय सरकारमें शामिल होनेपर सरकारके सब मंत्रियोंको लेकर कार्य करनेके सम्बन्धमें हमने जो स्थायी समझौते किये थे वे अस्वीकृत कर दिये गये।

केन्द्रीय सरकारके गठनमें दो आधारभूत सिद्धान्त थे, एक तो सब एक टीमकी भांति कार्य करें, दूसरा यह कि मुस्लिम लीग सरकारमें शामिल तभी हो सके जब वह दीर्घ कालीन योजना स्वीकार करे। लीगने दोनों ही सिद्धान्त स्वीकार कर लिये, लेकिन अब मुस्लिम लीग कहती है, केन्द्रीय सरकार न तो केबिनेट है और न संयुक्त है और उसके सदस्योंने एक अलग "ब्लाक" बना लिया है। मैंने मि० जिन्नाको लिखा कि केन्द्रीय सरकारमें लीग और कांग्रेसके मतभेद आपसी समझौतोंसे मिटा लिये जायँ, वायसरायको बीचमें न डाला जाय, लेकिन अभी तक यह सुझाव अस्वीकृत है।

देशकी राष्ट्रीय शक्तियोंकी मुखालिफतमें लीगने हमेशा ब्रिटिश सरकारका साथ दिया है, यही नीति अभी भी चालू है और ब्रिटिश सरकार अपनी स्वार्थ सिद्धिके लिये इसका फायदा उठा रही है।

मि० जिन्नाके वक्तव्यसे साफ है कि लीग सरकारमें काम करनेके लिये शामिल नहीं हुई है बल्कि उसे भय हो गया था कि अगर वह सरकारमें शामिल न हुई तो कमजोर हो जायगी। परिस्थिति बहुत ही सङ्गीन है, फिर भी कांग्रेसके सदस्योंको सरकारमें अवश्य रहना चाहिये, मगर यह नहीं कहा जा सकता कि कबतक।

कांग्रेस सबजेक्ट कमेटी मेरठमें अपने उक्त भाषणके समर्थन में; पण्डित जवाहरलालजीने वह पत्रव्यवहार प्रकाशित करवा दिया जो मध्यवर्ती सरकारमें लीगके शामिल होनेके सम्बन्धमें उनमें और वायसरायमें हुआ था। उन पत्रोंका सारांश नीचे दिया जा । है।

४ अक्तूबरको वायसरायने मि० जिन्नाको निम्नाशयका पत्र लिखा—

संयुक्त (Coaliton) सरकारमें नीति विषयक प्रधान मामलों का फैसला करना असम्भव है, जब कि संयुक्त सरकारकी एक प्रधान पार्टी प्रस्तावित कार्यवाहीके सख्त खिलाफ हो। मेरे वर्तमान साथी और मैं सहमत हूँ कि केबिनेटमें प्रधान साम्प्रदायिक मामलोंका निर्णय वोट द्वारा करना घातक होगा। मध्यवर्ती सरकारकी कार्यकारिता और सम्मान इस बातपर निर्भर करेगा कि केबिनेटकी बैठकोंके पहले मित्रतापूर्ण विचार विनिमय द्वारा इस तरहके मतभेदोंको मिटा लिया जाय। संयुक्त सरकार अगर काम करती है तो वह आपसी समझौतेके आधारपर ही करती है, अन्यथा कार्य नहीं करती।

चूँकि केबिनेटमें भाग लेनेका आधार १६ मईका वक्तव्य स्वीकार किया जाना है, मैं मान लेता हूँ कि लीग कौंसिल अपने

बम्बईके प्रस्तावपर पुनः विचार करनेके लिये अति शीघ्र बैठक बुलायेगी।

वायसरायको लिखे गये पण्डित जवाहरलाल नेहरूके १४ अक्तूबरके पत्रका सारांश।

यह हमारे लिये महत्वपूर्ण है कि हम ठीक-ठीक समझ लें कि (मि० जिन्ना) कैसे मध्यवर्ती सरकारमें शामिल होना चाहते हैं, और वे क्या शर्तें हैं जिनका वे उल्लेख करते हैं। अखबारों और खासकर मुस्लिम लीगके प्रमुख पत्रमें जो वक्तव्य निकल रहे हैं वे बेहद विशृंखल हैं। हमारा पिछला अनुभव हमें उत्साहित नहीं करता कि हम स्पष्ट और भ्रांतिपूर्ण वाक्यवादियोंपर भरोसा करें। इससे बादमें भ्रान्त धारणाएँ पैदा होती हैं और अनिश्चित तर्क-वितर्क खड़ा होता है। इसलिये इस मामलेमें सावधान होना आवश्यक है और यह जानना जरूरी है कि दरअसल हम कहाँ हैं ?

पिछले अगस्तके आपके ब्राडकास्टकी शर्तोंको हम जानते हैं, और आपने ४ अक्तूबरको मि० जिन्नाको जो खत लिखा है उसे देखा है, लेकिन १२ अक्तूबरको आपने जो पत्र उन्हें लिखा उसे मैंने नहीं देखा। मैं विश्वास करता हूँ कि १२ तारीखके पत्रमें ऐसी कोई बात नहीं होगी जो अगस्तके ब्राडकास्ट या ४ अक्तूबरके पत्रमें नहीं है। अगर ऐसा है तो हमें इसकी सूचना मिलनी चाहिये ताकि हम जान सकें कि वास्तविक स्थिति क्या है ?

जैसा कि मैं समझता हूँ—अगस्तके ब्राडकास्टमें आपने जो आफर लीगको दिया था वह यह था कि मध्यवर्ती सरकारमें पाँच स्थान लीग द्वारा लिये जा सकते हैं। आपने अपने ४ अक्तूबरके पत्रमें यह स्पष्ट कर दिया कि संयुक्त सरकारको एक

टीमकी भांति कार्य करना ही चाहिये, यह दो प्रतिद्वन्द्वी दलों का एक साथ होना नहीं है जो एक उद्देश्यके लिये सहयोग न करते हों। आपने अपने पत्रमें आगे लिखा है कि केबिनेटमें भाग लेनेका मतलब, १६ मईके मन्त्रिमण्डल मिशनके वक्तव्यको स्वीकार करना है।

हमें यह अधिक उत्तम मालूम होता है कि कोई सम्भव गलत फहमी हो तो इस अवस्थामें दूर कर दी जाय ताकि वह भविष्यमें हमारे रास्तेमें न आवे। हमें एक कठिन स्थितिका सामना करना है। जहाँ तक हमारा सवाल है, हम एक टीमकी तरह सहयोग पूर्वक काम करनेकी हर प्रकारसे चेष्टा करेंगे। पिछले ६ सप्ताहोंमें हमने काफी सफलतापूर्वक यही किया है और उससे हमें हमारे काममें भी सुविधा हुई है। हमारा लगभग हर फैसला, उसका सम्बन्ध किसी भी विभागसे क्यों न रहा हो संयुक्त विचार और समझौते द्वारा हुआ है।

इसने हमें एक हद तक विभिन्न विभागोंके कामोंके लिये जिम्मेदार बना दिया और किसी एक खास विभागका बोझा भी दूसरोंने बटाया। हम इसी तरह काम करना चाहते हैं। मुस्लिम लीगके सदस्य हमारे विचारसे कहाँ तक सहमत हैं मैं नहीं जानता। दूसरा कोई भी तरीका विभिन्नता पैदा करेगा और काममें देर करेगा। किसी भी हालतमें हम समझते हैं कि हमारे लिये यह जानना जरूरी है कि १३ अक्तूबरके पर्चेमें मिस्टर जिन्नाने किन शर्तोंका उल्लेख किया है। अगर अगस्तके ब्राडकास्ट या ४ अक्तूबरके पर्चेसे वे शर्तें भिन्न हैं या उनमें और कोई शर्तें जोड़ी जायँ तो उनकी सूचना हमें मिलनी चाहिये।

इस पत्रके जवाबमें वायसरायने १५ अक्तूबरको पण्डित जवाहरलाल नेहरूको यह पत्र लिखा—

कलके पत्रके लिये धन्यवाद, मैंने १२ अक्तूबरको मि० जिन्नाको जो पत्र दिया, उसकी नकल पत्रके साथ है। अगस्तके ब्राडकास्ट, ४ अक्तूबरके पत्रके परे कोई भी सफाई या आश्वासन मि० जिन्नाको नहीं दिया गया।

पण्डित जवाहरलालजीने २३ अक्तूबरको वायसरायको जो पत्र लिखा, उसका सारांश—

मेरे साथ आपका जो पत्र व्यवहार हुआ उसमें आपने मुझे और मि० जिन्नाको जो पत्र लिखा उसमें यह साफ कर दिया गया था कि मध्यवर्ती सरकारमें लीगके शामिल होनेका अर्थ १६ मईके प्रकाशित मन्त्रि मिशनके वक्तव्यकी दीर्घकालीन योजनाको स्वीकार किया जाना है। विभिन्न पत्रोंमें इस विषय का जो स्पष्ट उल्लेख हुआ है, उसे उद्धृत कर मैं आपको व्यर्थ कष्ट नहीं देना चाहता। उस समय यह ध्यान दिलाया गया था कि चूँकि लीगने अस्वीकृतिका प्रस्ताव पास कर रखा है इसलिये, इस प्रकारका निर्णय करनेके लिये लीगकी बैठक बुलानी होगी। फिर भी यह साफ कर दिया गया था कि लीगकी कार्यकारिणी खुद ही इस योजनाको स्वीकार किये जानेकी सिफारिस करेगी और इसके बाद ही लीग, इसे स्वीकार कर लेगी। इसी आधार पर हम आगे बढ़े थे।

इसलिये हम इन दो points का खुलासा चाहते हैं।

(१) १६ मईके वक्तव्यके अनुसार लीगका दीर्घ कालीन योजना स्वीकार किये जानेमें, सिर्फ कौंसिल आफ लीगकी Formal स्वीकृति भर बाकी है, जिसकी बैठक जितनी जल्दी ही बुलायी जायगी, कहा गया है, इसलिये उसकी तारीख निश्चित होनी चाहिये।

(२) मध्यवर्ती सरकारके सम्बन्धमें लीगका रुख खासकर

राजा गजनफर अली खाँ और मि० लियाकत अली खांके हालके भाषणसे व्यक्त करते हैं या नहीं ?

अगर यह स्पष्टीकरण सन्तोषजनक है तो दूसरा काम विभागों का वितरण है, लेकिन पहले, कदमके पहले, दूसरा कदम नहीं उठ सकता, क्योंकि यह पहले पर निर्भर करता है और पहला कदम ही दूसरेको नियंत्रित करता है।

पिछले अनुभवसे आप समझ सकेंगे कि यह स्पष्टीकरण और सावधानी भावी दिक्कतोंक दूर करनेके लिये आवश्यक है। यह और भी आवश्यक है, इसलिये कि मुस्लिम लीग कांग्रेससे समझौता करनेके लिये सरकारमें शामिल नहीं हो रही है। फिर भी हम उसके शामिल होनेका स्वागत करते हैं, किन्तु इस प्रवेश की कीमत मामूली है, बल्कि यह प्रवेश सबके लिये हानिदायक हो भी सकता है, अगर दरअस्ल यह भीतरी और बाहिरी संघर्षकी भूमिका हो।

वायसरायने २३ अक्तूबरको पण्डित जवाहरलाल नेहरूको जो पत्र लिखा उसका सारांश—

मैंने मि० जिन्नासे आज मुलाकात की और उनसे साफ कह दिया कि मध्यवर्ती सरकारमें लीगके शामिल होनेकी यह शर्त है कि वह केबिनेट मिशनके २५ मईके वक्तव्यकी योजनाको स्वीकार करे। और यह भी साफ कह दिया कि वे इसे मानने के लिये अपनी कौंसिलको यथाशीघ्र बुलावें।

जैसा कि मैंने आपसे कहा, मि० जिन्नाने मुझे विश्वास दिलाया है कि मुस्लिम लीग मध्यवर्ती सरकार और विधान परिषदमें सहयोग करनेके इरादेसे आ रही है। पूर्व बङ्गालके दंगोंके लिए उन्हें आपकी तरह ही अफसोस है और वे आपकी तरह ही उनकी निन्दा करते हैं।

एटली-नेहरू

एक कदम आगे बढ़ाकर, फिर दूसरा कदम आगे न बढ़ा कर पीछे रखनेकी जो पुरानी साम्राज्य नीति है उसीके अनुसार सोशलिस्ट नामधारी ब्रिटिश सरकार आचरण कर रही है। राष्ट्रीय कांग्रस और साम्प्रदायिक लीगकी एकता कायम करनेके नाम पर, भारतीय मामलेमें अपनी बन्दर बाँट मनोवृत्ति चरितार्थ करनेके लिये कांग्रेस और लीगके नेताओंको लन्दन बुलाया गया था। लीगने अपने आश्रय दाताओंके निमंत्रणको प्रसन्न चित्तसे स्वीकार कर लिया, किन्तु कांग्रेसका कहना था कि भारतकी समस्याका निर्णय भारतीय, भारतमें करेंगे और जिन मामलोंके बारेमें निर्णय हो चुके हैं, उनपर फिरसे विचार करनेकी आवश्यकता नहीं है तथा ए० बी० सी० विभागोंमें जानेपर भी प्रान्त अपना विधान बनाने तथा गुटमें शामिल होने, न होने या शामिल होकर भी अलग हो जानेके लिये स्वतन्त्र हैं, कांग्रसकी यही व्याख्या है और वह अपनी व्याख्या पर दृढ़ है, अगर किसीको इस विषयमें सन्देह हो तो वह भारतके सर्वोच्च संघ न्यायालयमें जा सकता है और काग्रेस संघ न्यायालयका फैसला माननेको तैयार है।

कांग्रेसके इतने स्पष्ट रुखके बावजूद भी प्रधान मन्त्री एटलीने जवाहरलालजीसे लन्दन आनेका विशेष आग्रह किया और भलमनसाहतके खयालसे पंडित जवाहरलालजी लन्दन गये।

लन्दन जानेके पहले इस सम्बन्धमें जो पत्र व्यवहार हुआ, वह इस प्रकार है।

२६ नवम्बरको पंडित जवाहरलाल नेहरूने वायसरायको निम्नोक्त पत्र लिखा—

प्रिय लार्ड वावेल !

आज आपसे मेरी जो मुलाकात हुई इसमें बातचीतके दरमियान आपने हमें इस सप्ताह लन्दन जानेका एच० एम० जी का निमंत्रण दिया। मैंने मेरे साथियोंसे सलाह की है और हमने इस सुझाव पर सावधानीसे विचार किया है, लेकिन हम महसूस करते हैं कि हम इस अवस्थामें लन्दन जानेकी व्यवस्था नहीं कर सकते। भारतमें ब्रिटिश सरकारके जो प्रतिनिधि हैं उनसे बातचीत करनेके लिये हम रजामन्द हैं

हमें ऐसा लगता है कि ब्रिटिश केबिनेट डेलीगेशनके भारतमें आनेके बादसे जो विभिन्न निर्णय हुए हैं, उनको नये सिरेसे छेड़ कर, उनपर विचार करना, इस सुझावमें निहित है। मुस्लिम लीगने सरकारमें जो स्थान ग्रहण किये, वे इस स्पष्ट समझौतेके आधार पर थे कि वे लोग १६ मईके केबिनेट मिशनके सुझावोंकी शर्तोंको स्वीकार करते हैं, और किसी तरहसे वे सरकारमें शामिल नहीं हो सकते थे। लेकिन अब लीगने बिलकुल निश्चित रूपसे घोषणा कर दी है कि वह विधान परिषदमें भाग न लेगी।

हम निश्चित तारीख यानी नौ दिसम्बरको विधान परिषद्के आरम्भ किये जानेको बहुत महत्व देते हैं, यह आप जानते हैं। ऐसी अवस्थामें लन्दन जानेका निमन्त्रण, हमारी दृष्टिमें उस सम्पूर्ण समस्याको फिरसे सामने लानेके लिये है, जिसका काफी हदतक समाधान, केबिनेट मिशनके वक्तव्य और मध्यवर्ती सर-

कारकी स्थापनसे हो गया। हमारी रायसे जनताके मनमें यह धारणा होना कि इन निर्णयोंपर फिर विचार होगा, घातक होगा। इसलिए हम जनताके कल्याणकी दृष्टिसे यह आवश्यक समझते हैं कि इस बातपर जोर दिया जाय कि चूँकि समस्याएँ तय हो गयी हैं इसलिए निश्चित तारीखको विधान परिषद्का आरम्भ होना चाहिए।

यह स्मरण रहना चाहिए कि विधान परिषद्के प्रतिनिधियोंके चुनावके महीनों बाद यह तारीख रखी गयी थी। वर्तमान अवस्थामें अब और अधिक कालतक इसका प्रारम्भ स्थगित करना, इस योजनाको त्याग देनेके रूपमें होगा, जिसमें सब ओर अनिश्चयका वातावरण फैल जायगा। यह वातावरण इस समय अवाँछनीय ही नहीं है बल्कि, दरअस्ल यह इस वक्त विभिन्न हिंसात्मक प्रचारको प्रोत्साहित करेगा।

वर्तमान अवस्थामें कुछ कालके लिये भी देश छोड़कर जाना हमारे लिये बहुत मुश्किल है। विधान परिषद्के आरम्भका समय दो सप्ताहसे भी कम है, हमें उसके लिये तैयारी करनी है।

इन दिक्कतोंके रहने पर भी विदेश जानेसे दरअस्ल कोई फल होनेकी आशा होती तो हम जाते। हमारा विश्वास है कि इस समय हमारे भारत छोड़नेका अर्थ होगा कि लीगके निर्देशसे केबिनेट मिशनकी योजना छोड़ी जा रही है या उसमें काफी परिवर्तन होनेवाला है, और हम इस तरहसे कार्यमें शामिल हैं। पहले इस बातका निश्चय होना चाहिये कि जिन योजनाओं पर मतैक्य हो चुका है वे कार्य रूपमें लायी जायँगी और नीतिमें सिलसिला होगा। अभी भी काफी सन्देह है, अब इसमें और कुछ जोड़ा गया तो वह सम्पूर्ण योजनाको ही भंग कर देगा।

और इसकी जगह दूसरोंको देना असम्भव हो जायगा। इसलिये हम महसूस करते हैं कि हम इस समय लन्दन नहीं जा सकते। लेकिन जब भी आवश्यक हो हम भारत स्थित ब्रिटिश सरकारके प्रतिनिधियोंसे सलाह करनेके लिये तैयार हैं। इङ्गलैण्डकी संक्षिप्त यात्रा कोई फल नहीं दे सकती, बल्कि इसका परिणाम उल्टा हो सकता है। इसलिये हमें अफसोस है कि आपके द्वारा हमें एच० एम० जीका जो निमंत्रण मिला है, उसे हम स्वीकार नहीं कर सकते। मुझे विश्वास है कि इस पत्रकी विषय वस्तुसे आप एच० एम० जीको अवगत करा देंगे।

प्रीमियरका आश्वासन

भारत मन्त्री लार्ड पैथिक लारेंसने वायसरायकी मार्फत निम्नोक्त समुद्री तार भेजा। भारत मंत्रीने लिखा कि कृपया प्रधान मन्त्रीके तरफसे यह तार नेहरूजीके पास पहुँचा दीजिये।

मुझे बहुत आशा है कि आप लन्दन आनेके लिये राजी हो जायँगे क्योंकि भारतमें तीन महीनेसे अधिक बितानेके बाद मेरे साथियोंके लिये, या मेरे लिये इस समय भारत आना सम्भव नहीं है।

हम लोगोंकी बातचीतका आधार विधान-परिषद्की बैठकको जो ९ दिसम्बरको हो रही है सफल बनानेकी चेष्टा होगी। विधान परिषद्के आरम्भ करनेके निर्णयको त्यागनेका कोई इरादा नहीं है और न केबिनेट डेलिगेशनका योजनाको छोड़नेका इरादा है। इच्छा योजनाको त्यागने या बदलनेकी नहीं है बल्कि पूर्णरूपसे इसे कार्यमें लानेकी है। इसी कारण हम, आप और आपके साथियोंको लन्दन बुला रहे हैं। मन्त्रि-मिशनके तीनों सदस्योंने व्यक्तिगत और सामूहिक रूपसे मुझसे कहा है कि मैं, हमारे मिलनेकी सर्वाधिक आवश्यकता पर जोर डालूँ ताकि भारतमें और कोई अवांछनीय कार्य होनेके पहले हम इस विषय पर विचार विमर्श कर लें।

भारतीय स्वाधीनताके लक्ष्यकी ओर तेजी और शान्तिपूर्वक बढ़नेके लिये, हम आपसे मदद चाहते हैं, भारतीय जनता का जो उक्त लक्ष्य है उसमें हम पूरे दिलसे शामिल हैं।

२८ नवम्बरको वायसरायने भारत मन्त्रीको निम्नोक्त तार भेजा।

[कृपया पंडित जवाहरलालका यह सन्देश प्रधान मन्त्रीको पहुँचा दें]

मैं आपके सन्देशके लिये धन्यवाद देता हूँ और दिसम्बर तथा उसके बाद विधान-परिषद्की सफल बैठकके लिये आपने जो इच्छा प्रकटकी है, उसकी तारीफ करता हूँ। हम सब उत्सुक हैं कि विधान-परिषद् निश्चित तिथिको हो और अपना कार्य पूरा करनेके लिये वह सब सदस्योंके साथ आगे बढ़े, इस मामलेमें हम दूसरोंके सहयोगसे जो कुछ सम्भव होगा, वह सब कुछ करनेकी पूरी कोशिश करेंगे। जैसा कि हमने बार-बार कहा है, हमने केबिनट मिशनकी योजनाको उसके पूर्ण रूपमें स्वीकार किया है। कुछ व्याख्याओंके सम्बन्धमें हमने मन्त्री मिशनके सामने अपनी स्थिति साफ कर दी थी और तबसे हमने उसीके अनुसार काम किया है। हमने यह भी कह दिया कि व्याख्याओं में भेद होनेपर मामला फेडरल कोर्टको सौंपा जाय और हम कोर्टके निर्णयको मानेंगे। कल पार्लामेंटमें ब्रिटिश सरकारकी तरफसे जो वक्तव्य दिया गया, उससे मालूम होता है कि जिस दृष्टि बिन्दु पर विचार होगा, वह सिर्फ यह व्याख्या है। इस व्याख्याके सम्बन्धमें हमारी स्थिति बिलकुल साफ है, और हम इससे बंधे हुए हैं। हम इसे बदल नहीं सकते, और न हमें ऐसा करनेका अधिकार है। इसलिये इस कार्यके लिये हमारा लन्दन आना अनावश्यक है।

विधान-परिषदकी प्रारम्भिक बैठकमें, उसकी कार्यवाहीके तरीकोंका निर्णय तथा विभिन्न कमेटियोंकी नियुक्ति होगी। इसलिये आगेकी कार्यवाहीकी व्याख्याका सवाल इस समय नहीं

उठता। इसलिये हम सबके लिये यह सहज सुलभ है कि हम इस बैठकमें सहयोग करें और अगर आवश्यकता आ जाय तो जिस मामलेपर समझौता न हो सके उसे फेडरल कोर्टके सिपुर्द कर दें।

विधान-परिषद्की प्रथम संक्षिप्त बैठकके बाद आवश्यक हो तो हमारा लन्दन आना अधिक उपयुक्त और सुविधा जनक होगा, क्योंकि उस समय विचार विमर्शके लिये अधिक समय मिल सकेगा।

इन सब पर विचार करते हुए और फिलहाल भारत छोड़ने में जो महान् दिक्कतें हैं उनके कारण हम महसूस करते हैं कि इस समय हमारा लन्दन आना सुफल दायक न होगा। लेकिन इन सब बातोंके बावजूद भी, या किसी अन्य विषयपर विचार करनेके लिये आप चाहते हैं कि हम आवें ही तो हम आनेकी चेष्टा करेंगे, लेकिन विधान-परिषद्की ९ तारीखकी बैठकके पहले हमें भारत लौटना होगा।

२८-११-४६ को वायसरायने भारत मन्त्रीका तार पाया।

आपका तार मिला, कृपया प्रधान मन्त्रीका यह तार पंडित नेहरूको पहुँचा दें।

आपके सन्देशके लिये धन्यवाद। कांग्रेसकी स्थितिके सम्बन्धमें आपने जो लिखा उसे मैंने नोट कर लिया, फिर भी हम महसूस करते हैं कि विधान-परिषद्की बैठकके पहले आपका आगमन बहुमूल्य होगा, इस मामलेमें आपकी रजामन्दीकी हम प्रशंसा करते हैं। ९ दिसम्बरसे पहले आपकी वापसीका इन्तजाम किया जायगा।

—:o:—

विधान परिषद

भारतीय "विधान परिषद् स्वयं आदेश देनेवाली और स्वयं निर्णायक संस्था होगी, जो किसी बाहरी हस्तक्षेपको बर्दाश्त न करेगी।" पं० जवाहरलाल नेहरूने लन्दनसे स्थानसे पूर्व डारकेस्टरके होटलमें भारतीय पत्र प्रतिनिधियोंके सामने भाषण करते हुए कहा—

नेहरूजीने आगे कहा, ब्रिटिश अखबारोंके पढ़नेसे किसीका भी यह गलत खयाल बन सकता है कि हिन्दुस्तानमें को जबरदस्त अफसोसनाक वाकया होनेवाला है, और किसी जादू भरे समझौतेसे उसे रोकनेके लिये हमें यहाँ लन्दन बुलाया गया है।

कई तरहसे हिन्दुस्तानकी हालत अफसोसनाक हो रही है, लेकिन उससे किसी के परेशान हो उठनेकी जरूरत नहीं है। यह एक दर्दनाक हालत है, जिसके पीछे काफी लम्बा इतिहास है। किसी जादूकी छड़ीसे उसे ठीक नहीं किया जा सकता। उसके लिए कुछ वक्तकी जरूरत होगी। यह कोई कानूनी बहसका सवाल नहीं है, जिसे इधर या उधर करके हल किया जाय, इसके लिए आम लोगोंका खयाल बदलना होगा।

बातचीतकी कामयाबी और नाकामयाबीके सवालका कोई मतलब ही नहीं है। असली सवाल यह है कि विधान परिषद तीन दिनके अन्दर बैठ रही है। मुस्लिम लीग उसमें शरीक नहीं होगी। उसके लिये यह नामुमकिन है कि वह तीन दिनके वक्तमें शामिल हो सके।

परिषदका शुरूका इजलास करीब एक दर्जन दिन चलेगा,

जिसमें जाब्तेकी और रस्मियाँ बात तय होंगी। परिषद्का पूरा इजलास तीन महीने बाद होगा इस दौरानमें कमेटियाँ अपना काम करती रहेंगी!

हम ज्यादासे ज्यादा सहयोग हासिल करने की कोशिश करेंगे।

जो बात खयालमें रखनेकी है वह यह है कि विधान परिषद की बैठक हो रही है यह बात दूसरी है कि उसमें सब मेम्बर शरीक नहीं हो रहे हैं।

विधान परिषद् एक नई तरहकी संस्था है, जो एक बार शुरू हो जाने पर स्वयं शासित और स्वयं निर्णायक है और जो बाहरके किसी शख्ससे हिदायतें हासिल न करेगी। इसके साथ ही वह एक खास ढांचेमें काम करेगी। उसकी स्वयं निर्णायक सत्ताको असलमें जो चीज सीमित कर सकती है वह बाहरी ताकत नहीं वल्कि स्थिति पर प्रभाव डालने वाली अन्दरूनी चीजें हैं। अगर अन्दरूनी तौरपर वह कामयाब नहीं हो सकती तो वह आगे नहीं बढ़ सकती।

हम इस बातको महसूस करते हैं और इसलिये हम उसे अन्दरूनी तौर पर कामयाब बनाना चाहते हैं। विधान परिषद्के बारेमें यह बात महत्वकी रही है और है कि एक ऐसी चीज पैदा कर दी गई है कि जिसकी शुरुआत कितनी ही छोटी होनेपर भी वह अपनेमें बढ़नेकी ताकत रखती है और जिस तरफ जाना चाहे जा सकती है।

हिन्दुस्तानके लिये आमतौर पर जो बात सबसे जरूरी है वह यह है कि बाहरी किसी भी तरहका दखल न हो, क्योंकि बाहरी किसी भी तरहके दखलकी मुखालिफत होगी। और उससे पेचीदगियाँ पैदा हो जायँगी।

हिन्दुस्तानका कोई भी सवाल वहांके लोगोंको खुद हल करना होगा। अगर दूसरे लोग उसे हल करनेकी कोशिश करेंगे तो नतीजा यह होगा कि हालत और बदतर हो जायगी। किसी भी चीजके जबरदस्ती लादे जानेका विरोध होगा और जो मन्त्रि मिशनकी योजनाके बहुत बड़ी हद तक स्वभाग्य निर्णयके मुख्य गुणको मिटा देगा।

विधान परिषद्की योजनाके सिवा अन्तःकालीन सरकारके काममें भी बाहरी दखलसे बचना जरूरी है, क्योंकि दोनों ही एक दूसरेसे जुड़े हैं। अगर हिन्दुस्तानको जल्दी ही आजाद होना है, जो कि वह हो रहा है तो अब अन्तःकालीन सरकारके कामोंमें उसक परिचय मिलना चाहिये।

पोलिटिकल डिपार्टमेण्ट, जो कि देशी रियासतोंके साथ व्यवहार करता है अभी तक भारत सरकारसे जुदा बना हुआ है, जो कि परस्पर-विरोधी चीज है। इस स्थितिसे रोजाना परेशानियाँ पैदा होती रहती हैं।

ये सब सवाल इतनी नजदीकीसे जुड़े हैं कि उन्हें अलग नहीं किया जा सकता न एकको दूसरेसे जुदा समझा जा सकता है।

अंग्रेजी सरकारका वक्तव्य

कराची हवाई अड्डेमें एकत्रित पत्रप्रतिनिधियोंके सामने अपनी लन्दन यात्राके बारेमें छोटासा वक्तव्य देते हुए पंडित जवाहरलाल नेहरूने कहा कि लन्दनसे हमारे रवाना होनेके पहले शामको ब्रिटिश सरकारके वक्तव्यका मशविदा पढ़कर हमें सुनाया गया। मैंने कल हवाई जहाजमें वह वक्तव्य पढ़ा तो मालूम हुआ कि उस मशविदेमें कुछ परिवर्तन किया गया

है और जोड़ा भी गया है। यह तो स्पष्ट है कि वह वक्तव्य महत्वपूर्ण है और इसपर ध्यानपूर्वक विचार करने की आवश्यकता है। मैं अपने सहयोगियों से बिना परामर्श किये अधिक कहना उचित नहीं समझता।

उन्होंने बताया कि इस वक्तव्यसे महत्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न होते हैं। यह वक्तव्य एक तरह से ब्रिटिश मन्त्रि दलके १६ मईकी घोषणामें संशोधनके रूपमें है या उसमें जोड़-सा दिया गया है। जैसा कि १६ मई की घोषणाके स्पष्टीकरणके रूपमें है। लेकिन यदि १६ मई को घोषणा में थोड़ा भी परिवर्तन हुआ तो उसका असर पूरी घोषणा पर होगा। और उसी दृष्टिसे उसपर विचार करना होगा। विधान परिषद्की बैठक कल हो रही है जिसमें निसन्देह सारी स्थिति पर विचार किया जायगा।

विधान परिषद्की विशेषता यह है कि वह स्वयं शासित और स्वयं निर्णय करनेवाली संस्था है। उसमें बाहरके किसी तरहके दबावको सहन नहीं किया जायगा। हम प्रारम्भसे ही इस बात की चेष्टा करते रहे हैं कि विधान परिषद्में देशके अधिकसे अधिक दलोंका सहयोग प्राप्त हो किन्तु यदि दुर्भाग्यसे कुछ लोग इसमें न आयें तो विधान परिषद्का कार्य रुकना नहीं चाहिये।

उनसे पूछे जानेपर कि क्या लन्दन जाना उचित था उन्होंने बताया कि मैं लन्दन जाना नहीं चाहता था लेकिन ब्रिटिश प्रधान मन्त्री श्री एटलीकी व्यक्तिगत अपीलके कारण गया। मुझे वहाँ पुराने मित्रोंसे मिलकर बड़ी खुशी हुई। इस दृष्टिसे मेरी लन्दन यात्रा अच्छी रही अन्यथा नहीं।

—::०::—

भारतमें विदेशी व्यापारी

पंडित जवाहरलाल नेहरूने एसोसियेटेड चेम्बर आफ कामर्सकी बैठकमें भाषण देते हुए दूसरे देशोंके साथ स्वाधीन भारतके सम्बन्धोंका विस्तृत विश्लेषण किया :—

आप लोगोंमें से अधिकांश स्वाधीन भारतके भविष्य की जानकारीके लिये उत्सुक हैं, जिसकी अभी हम योजना प्रस्तुत कर रहे हैं। आज अभी यह स्पष्ट नहीं है कि स्वाधीन भारतकी रूपरेखा कैसी होगी। सिर्फ यह अनुमान लगाया जा सकता है कि भारतका दूसरे देशोंसे कैसा सम्बन्ध कायम होगा। मुझे इसमें सन्देह नहीं कि विदेशोंसे हमारा घनिष्ठ सम्बंध रहेगा।

जहाँ तक इङ्गलैण्डका सम्बन्ध है, भारतमें पिछले १५० वर्षों के ब्रिटिश शासनकालमें संघर्षके बावजूद भी हम लोगोंके बीच प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष सम्पर्क सभी दृष्टियोंसे विद्यमान है, जिसका अचानक अन्त नहीं हो सकता। इङ्गलैंडके साथ भारतका सम्बन्ध यदि इस रूपमें भङ्ग न हो जिससे भविष्य विशाक्त रूप धारण कर सके, तो सैकड़ों उपायोंसे स्थापित सम्बन्ध कायम रहेगा। किन्तु जो देश पहलेसे भारतके साथ मैत्रीभाव रखते हैं, उनके प्रति विशेष आकर्षण निश्चित है। जैसा कि हम देख रहे हैं आजके विश्वकी स्थितिमें, मैं कह सकता हूँ कि, भारत शक्ति-शाली है और राजनीतिक, आर्थिक तथा व्यावारिक दृष्टिसे अवश्य ही बहुत मजबूत है।

मैं यह साफ-साफ कह सकता हूँ कि भारत मोलतोलकी सुदृढ़ स्थितिमें है। भौगोलिक दृष्टिसे भारतका जैसी स्थिति है, उसे दृष्टिगत रख उसकी बिना इच्छाके चाहे व्यापार अथवा रक्षा तथा अन्य मामलोंमें सम्पूर्ण दक्षिण-पूर्वी एशियामें मुश्किलसे कोई घटना हो सकती है। भारतकी अन्तर्निहित शक्ति सुदृढ़ है और आर्थिक शक्ति बहुत बड़ी है। भारत परिवर्तनकाल समाप्त होते ही अग्रसर होकर विश्वमें अपना उचित स्थान ग्रहण करेगा। व्यापारिक दृष्टिसे हम बहुत ही अच्छी स्थितिमें हैं और औद्योगिक साधन सम्पन्न अमेरिकासे भी व्यवहार बढ़ा सकते है। आज भारतके समक्ष अनेक समस्यायें न केवल राजनीतिक बल्कि खासकर आर्थिक उपस्थित हैं। हमें शीघ्रता करनी पड़ेगी, यदि हम इन्हें हल करना चाहते हैं। यदि हम इनका समाधान नहीं करेंगे, तो ये हमारा समाधान करनेकी धमकी देती है। आज सृष्टि और विनाश तथा विश्वके निर्माण और उत्तरोत्तर नये सङ्कट पैदा करनेवाली शक्तियोंके बीच होड़-सी दिखाई पड़ रही है।

पंडित नेहरूने आगे कहा कि राजनीतिक सम्बन्धोंके अतिरिक्त भारत तथा इङ्गलैंडके बीच औद्योगिक तथा औपनिवेशिक देशका सम्बन्ध रहा है। औपनिवेशिक अर्थनीतिमें कुछ परिवर्तन हुआ है। किन्तु अभी भी बहुत कुछ परिवर्तन शेष है। इसी अर्थनीतिके संरक्षणमें यहाँ ब्रिटिश उद्योगोंका विकास हुआ है। आज भी ब्रिटिश उद्योगोंको रक्षाके विभिन्न साधन मौजूद हैं। यद्यपि इनकी भिन्न-भिन्न शब्दोंमें व्याख्याकी जाती है तथापि मतभेद अवश्य है। वास्तवमें यह सुरक्षा भारतमें ब्रिटिश स्वार्थों तथा उद्योगोंकी रक्षाके लिये है। भारतमें इसका बहुत बड़ा विरोध हुआ है। पिछले वर्ष भारत सरकारने यह प्रश्न उठाया

था, जो इसका अन्त करना चाहती थी किन्तु कुछ कारणवश उच्चाधिकारियोंके विरोध करने पर मामला स्थगित हो गया। यह बिलकुल स्पष्ट है कि कोई भी भारतीय सम्भवतः किसी भी व्यक्तिके लिये सुरक्षा अथवा रक्षाकी स्वीकृति प्रदान नहीं कर सकता। इसका अन्त होने वाला था और अब निश्चय ही होकर रहेगा।

पण्डित नेहरूने अँग्रेजोंके व्यापार और अन्य मामलोंमें राजनीतिक दाँव-पेचोंका जिक्र करते हुए कहा कि, क्योंकि ब्रिटेनकी औपनिवेशिक आर्थिक नीति और उसमें अँग्रेज व्यापारियोंके स्वार्थ बहुत ही विचित्र हैं, अतः गत डेढ़ सौ वर्षोंके दौरानमें इस नीतिका मेल राजनीति या व्यापारिक मामलोंमें नहीं बल्कि प्रत्येक आवश्यक मामलोंमें दाँव-पेचके साथ चलता रहता है। स्वभावतः राजनीतिक पहलू व्यापारिक पहलूसे पृथक होता है और अभी भी आप देख सकते हैं कि राजनीतिक पहलू पृथक है।

पंडितजीने मि० टाउननेण्टके इस दावेका कि अंग्रेजोंने व्यवस्थापिकाके मामलेमें बहुत बड़ा कार्य किया है, जिक्र करते हुए कहा कि बङ्गाल और आसाममें अँग्रेज व्यापारियोंको अत्याधिक प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया है। किसी भी अन्य देश में विदेशियोंको वोट देनेका अधिकार नहीं प्राप्त है लेकिन भारत में विदेशियोंको मामूली नहीं बल्कि उन्हें औसतन लगभग दश हजार वोट प्राप्त हैं। मैं बङ्गालकी राजनोतिके बारेमें थोड़ी बातें जानता हूँ और मैं यह भी जानता हूँ कि इन लोगोंने बङ्गाल की राजनीतिको अत्याधिक प्रभावित किया है और यहाँ सरकार के गठन और पतनमें उनका हाथ रहा है। इस प्रकार अँग्रेजोंके

औद्योगिक और व्यापारिक कार्योंके प्रति लोगोंमें भावना पैदा हो गयी है।

पंडित नेहरूने भारतमें ईसाई मतकी प्रगतिका जिक्र करते हुए कहा है कि दक्षिण भारतमें यह बहुत दिनोंसे है और इसका प्रचार अँग्रेजी राजसे पहले हुआ था। लेकिन भारतमें अँग्रेजोंके आनेके बाद फैला। इस प्रकार ईसाई मत अंग्रेजी शासनका राजनीतिक प्रतीक बन गया। आपके व्यापार और उद्योग पर जैसा राजनीतिक आवरण है उससे गुण और दोषका पता नहीं लगाया जा सकता।

वीर आदमी ही बता सकता है कि भविष्यमें दो एक वर्षके भीतर भारतमें क्या होने वाला है क्योंकि हम युगके सन्धिकालमें हैं, लिहाजा निश्चयपूर्वक कुछ नहीं कह सकते। मुझे भी नहीं मालूम है कि आगामी एक दो वर्षके भीतर क्या होगा। लेकिन युग सन्धिकाल जो भी हो, कुछ होनेमें एक वर्ष या अठारह महीने लग सकते हैं पर नवीन भारत, स्वतन्त्र और भारतीय जनताके प्रतिनिधियों द्वारा नियन्त्रित होगा। वे प्रतिनिधि क्या करेंगे मुझे नहीं मालूम। वस्तुतः मुझे नहीं मालूम है कि नयी ताकतें आने पर क्या होगा। यह भी हो सकता है कि पुराना नेतृत्व खत्म हो जाय लेकिन मुझे कमसे कम इसका भय नहीं है। मैं जानता हूँ कि जब एक राष्ट्र आगे बढ़ता है तब ऐसा होता है और भारत इसी प्रकार आगे बढ़ेगा!

पंडित नेहरूने कहा कि यह बिलकुल असम्भव है कि सरकार व्यापारमें हस्तक्षेप न करे। उसने अतीतमें भी हस्तक्षेप किया है और भविष्यमें भी अत्याधिक करेगी। आज समाजकी भलाईके लिये सरकारी हस्तक्षेपकी ओर विश्वमें अधिक रुझान देखा जा

रहा है क्योंकि आखिर राज्य समाजकी भवनाओंका प्रतीक तो है ही।

मुद्राप्रसारके सम्बन्धमें पंडितजीने कहा कि इस मामले पर भारतका ध्यान आकर्षित हुआ है लेकिन यह आसान काम नहीं है। हमने खाद्यान्नका मूल्य कम रखनेका प्रयास किया है लेकिन मैं आपसे कहूँ कि मैं इसे पसन्द नहीं करता क्योंकि मैं सोचता हूँ किसानको जिसके साथ अतीतमें अन्याय किया गया है अच्छे दाम मिलें। आमतौर पर हम शहरों और नगरोंकी बातें सोचा करते हैं और अपने देहाती अञ्चलोंका उपेक्षा करते हैं। यह अच्छी बात है कि हमारे किसान इस वक्त अपने कर्ज चुकानेमें कुछ समर्थ हुए हैं लेकिन जब अपेक्षाकृत उनकी हालत अच्छी है तब हमसे जो कुछ कहते हैं वह उनके लिये करना चाहिये। कंट्रोलके बारेमें पंडिजीने कहा कि कंट्रोलसे चोर बाजारको प्रोत्साहन मिलता है और सरकारी कर्मचारी तथा नागरिकोंमें भ्रष्टाचार तो फैलता है, साथ ही आज कंट्रोल बिना काम चलना कठिन है। लेकिन जब हम देखेंगे कि बिना कंट्रोलके काम चल सकता है तो हम युद्धकालीन कंट्रोल उठा देंगे।

पंडितजीने कलकत्ते जैसे शहरोंकी बस्तियों और गन्दे महल्लोंका जिक्र करते हुए कहा कि इनको बर्दाश्त करना हमारे नगरोंके लिये बहुत शर्मकी बात है। मैं कल्पना नहीं कर सकता हूँ कि वहाँ इन्सान कैसे रहता हूँ। म्युनिसिपैलिटी और कारपोरेशनकी जिम्मेवारी है लेकिन मालिकोंके बारेमें क्या किया जाय? मैंने कलकत्ता और बम्बईकी कुछ बस्तियोंका निरीक्षण किया है। मैं जानता हूँ कि वहाँ रहनेवाले मजदूर उन कारखानोंमें काम करते हैं जो अच्छे डिवीडेंट अदा करते हैं। यह स्थिति बदनामीका कारण है।

एक ओर युद्ध और उसके बाद कुछ लोगोंके हाथमें अपार धन-राशि आयी है और दूसरी ओर अधिकांश लोगोंको खाने तकका सामान नहीं है। यह शिकायत की जाती है कि युद्ध-कालमें इनकम टैक्सकी भरमार थी। अब तक वे टैक्स मौजूद हैं। मैं पूछता हूँ ऐसा होनेपर भी यह धनराशि कहाँसे आयी? मैं इन सब मामलोंकी जाँच करवाना पसन्द करता हूँ। ऐसी बात अच्छी नहीं कि मुट्ठी भर धनी हों और ज्यादातर लोग गरीब हों। इसके अन्दर कुछ गलती है उसे नियन्त्रणमें लानेकी आवश्यकता है।

—::०::—

विधान परिषद्के लक्ष्य और उद्देश्य

भारतीय विधान-परिषद्में परिषद्के उद्देश्य और लक्ष्योंके सम्बन्धमें अपना प्रस्ताव पेश करते हुए पण्डितजीने महत्वपूर्ण वक्तव्य दिया। पंडितजीका प्रस्ताव कहता है कि भारतका लक्ष्य स्वतंत्र स्वाधीन रिपब्लिक सरकार है।

पण्डितजीने कहा, यह प्रस्ताव जो विधान हम रचने जा रहे हैं, उसका भाग नहीं है, इसलिये इस प्रस्तावको विधानका एक भाग समझकर उसपर विचार नहीं करना चाहिये। इस परिषद्को पूर्ण स्वाधीनता है कि वह चाहे जैसा विधान बनावे और दूसरे जिन्होंने अभी परिषद्में भाग नहीं लिया है, उन्हें भी जब वे परिषद्में शामिल हों तो, पूर्ण हक है कि वे विधानको चाहे जैसा रूप दें।

दरअस्ल यह प्रस्ताव दो अन्तिम छोरोंके बीचमें है, यानी बहुत ज्यादा कहना या बहुत कम कहनाके बीचमें है अर्थात् न बहुत अधिक कहना है न बहुत कम। यह प्रस्ताव कुछ महत्व-पूर्ण मूल भित्तियोंको उपस्थित करता है, जिनके बारेमें किसी दल पार्टी या व्यक्तिको शायद ही कुछ उज्र हो।

मैं यह स्पट कर देना चहता हूँ कि जहाँ तक इस प्रस्ताव या घोषणाका सम्बन्ध है, यह विधान-परिषद्के भावी कार्यमें किसी तरह दखल नहीं देता, या न यह प्रस्ताव परिषद्की किसी भावी चर्चा या दो दलोंके वार्तालापमें दस्तन्दाजी करता है। सिर्फ एक तरहसे, अगर आप पसन्द करें तो यह हमारा काम सीमित करता है, अगर आप इसे सीमित करना कह सकें, वह

यह कि प्रस्तावमें जो आधार भूत भित्तियाँ निहित हैं हम उन्हें मानते हैं, और मैं विश्वास करता हूँ कि वे आधारभूत भित्तायाँ किसी भी अर्थमें सचमुच विवादास्पद नहीं है। भारतमें उन्हें कोई चुनौती नहीं देता, किसीको उन्हें चुनौती नहीं देना चाहिये। फिर भी अगर कोई चुनौती देता है तो हम उसे स्वीकार करते हैं। और हमने जो स्थिति ग्रहण की है, उसपर कायम रहते हैं।

मैं आशा करता हूँ—जो नयी दिक्कतें सामने आ गयी हैं, हर शख्स जानता है कि ये दिक्कतें इसलिये उठ खड़ी हुई हैं कि ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल और जो इस समय अधिकार पूर्वक बोल सकते हैं, उन्होंने हालमें ही खास तरहके वक्तव्य दिये हैं, मगर मैं आशा करता हूँ, जैसा कि मैंने पहले कहा है कि ये दिक्कतें हमारा रास्ता बन्द न कर सकेंगी और हम जो यहाँ इस समय उपस्थित हैं और जो अभी यहाँ नहीं हैं, उन सबके सहयोगसे आगे बढ़नेमें समर्थ हो सकेंगे।

हममेंसे अधिकांश, पिछले वर्षोंमें—एक पीढ़ीसे भी अधिक काल तक मृत्यु-छायाकी उपत्यकासे गुजरे हैं और अगर फिर जरूरत हो तो, फिर उसी रास्तेसे गुजरनेके लिये तैयार हैं।

फिर भी जो कुछ वक्त गुजर गया, उस गुजरे वक्तमें हम उस समयकी बात सोचते थे, जब हमें सिर्फ युद्ध करने, सिर्फ विध्वंश करनेका अवसर ही नहीं मिलेगा, बल्कि रचना और विकाशका अवसर भी प्राप्त होगा। और अब ऐसा लगता है कि स्वतंत्र भारतमें निर्माण कार्यका समय सामने आ रहा है, हम इस मुहूर्त का उत्साहसे स्वागत करते हैं, और ऐसे सुन्दर अवसर पर जब हमारे सामने नयी दिक्कतें पेशकी जाती है, वह हमें चोट पहुँचाती है। यह जाहिर करता है कि इन दिक्कतोंके पीछे

जो भी ताकत हो, इसके पीछे जो हैं वे योग्य, चालाक और बुद्धिमान होने पर भी किसी न किसी प्रकार कल्पनासे रहित हैं, जिसका कि इतने उत्तर दायित्वपूर्ण पदोंपर बैठनेवालोंमें अभाव नहीं होना चाहिये। क्योंकि यदि आपको जनताके साथ व्यवहार करना है तो आपके लिये आवश्यक है कि आप जनताको काल्पनिक, बौद्धिक, भावुकतापूर्ण दृष्टिसे समझ सकें।

हमारे सामने पिछले महीनोंमें जो कठिनाइयाँ आयी हैं उनके बावजूद भी हमने पारस्परिक सहयोगका वातावरण उत्पन्न करनेकी ईमानदारीसे काफी चेष्टा की है। हम अपनी चेष्टा बराबर जारी रखेंगे, लेकिन मुझे भय है कि दूसरी तरफसे अगर हमारे प्रयत्नोंका उत्तर न मिला तो वातावरण खराब हो जायगा। फिर भी चूँकि हम महान् कार्यकी सिद्धिके लिये दृढ़ संकल्प हैं, मुझे विश्वास है कि हम अपना वह प्रयत्न बराबर जारी रखेंगे और मुझे आशा है कि हम लगातार कोशिश करते रहे तो हम, आखिर सफल होंगे

हाँ, हमें वह चेष्टा बारबर जारी रखनी चाहिये, उस हालतमें भी, जब कि हमारी दृष्टिमें हमारे कुछ देश भाइयोंने गलत रास्ता पकड़ लिया है, क्योंकि आखिरकार हमें इस देशमें ही एक साथ रहना है हमें एक साथ ही काम करना है, और हमें सहयोग करना ही है, चाहे आज न सही, कल—परसों सही। इसलिये फिलहाल हमें इस तरहकी हर चीजसे दूर रहना है, जो उस भविष्यके निर्माणमें नयी कठिनाई पैदा करें जिसके लिये आज हम मेहनत कर रहे हैं।

जहाँ तक हमारा अपने देशवासियोंके सहयोगका सम्बन्ध है, हमें उनका अधिकाधिक सहयोग पानेके लिये अपनी पूरी ताकत लगानी चाहिये।

लेकिन सहयोगके माने यह नहीं हो सकते, न हैं और न होंगे कि हम जिन आधार भूत सिद्धान्तोंपर खड़े हैं, जिन सिद्धान्तोंपर राष्ट्रको खड़ा रहना चाहिये, हम उन्हींका परित्याग कर दें, क्योंकि किसी रचनाके लिये यह सहयोग पाना नहीं है, बल्कि जिसने हमारे जीवनको अर्थ दिया है, उसका परित्याग करना है।

इस सहयोगके अलावा, इस हालतमें भी हम इङ्गलैण्डका सहयोग चाहते हैं। हम अनुभव करते हैं कि इङ्गलैण्डने अगर सहयोग देना अस्वीकार किया तो वह भारतके लिये भले ही हानिकर हो, निश्चय ही कुछ हदतक नुकसानदेह होगा, किन्तु भारतसे भी अधिक खुद इङ्गलैण्डके लिये नुकसानदेह होगा, और कुछ हदतक सारी दुनियाके लिये।

एक महायुद्धसे छुट्टी पानेके बाद, आजकल हम ऐसे जमानेमें रह रहे हैं, जब कि लोग आनेवाले युद्धोंके बारेमें अस्पष्ट मगर जोरदार बातचीत करते हैं। ऐसे अवसर पर नव भारतका जन्म हो रहा है। निर्भय, दृढ़, नव भारतका फिर अभ्युदय हो रहा है। विश्वकी अशान्तिके बीचमें ही नव भारतका नवाभ्युदय, शायद श्रेयस्कर है।

लेकिन इस मौकेपर हमारी दृष्टि साफ होनी चाहिये, हमारे सामने विधान बनानेका महान् कार्य है। हमें वर्तमानके महान् दायित्वको भी सम्भालना है और भविष्यके कठिन दायित्व को भी निभाना है। ऐसे मौकेपर हमें इस या उस दलके छोटे-मोटे फायदेमें अपने आपको नहीं भुला बैठना है।

कुछ लोगोंने मेरा ध्यान इस बातकी ओर खींचा कि प्रस्तावमें 'रिपब्लिक' शब्दका होना, भारतीय रियासतोंके शासकको शायद कुछ खफा कर दे। मुमकिन है, यह शब्द उन्हें

नाखुश करे। लेकिन मैं स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि मैं व्यक्तिगत तौरसे कहीं भी राज्यतन्त्रको पसन्द नहीं करता और आजकी दुनियामें राज्यतन्त्र तेजीसे मिटता जा रहा है। लेकिन इस मामलेमें मेरे व्यक्तिगत विश्वासका सवाल नहीं उठता।

रियासतोंके सम्बन्धमें आजसे नहीं वर्षोंसे हमारी यह सर्वोपरि राय रही है कि आनेवाली स्वाधीनतामें रियासतोंकी जनताको भी हिस्सेदार होना चाहिये। यह कैसे हो सकता है कि विभिन्न रियासतोंकी प्रजाओंमें स्वाधीनताकी मात्रा और रूपमें भारतकी जनताके मुकाबिले विभिन्नता हो? रियासतें भी युनियनका भाग होंगी।

हम चाहे भावी विधानमें उल्लेख कर दें या आपसमें सहमत हो जायँ कि स्वाधीनताका रूप देशी रियासतों और भारतमें समान होना चाहिये, लेकिन मैं व्यक्तिगत तौरसे यह पसन्द करता हूँ कि भावी रियासती सरकारोंकी रचना और रूप भी एक सी हो। मैं मानता हूँ कि यह इस तरहका प्रश्न है कि जिसपर देशी रियासतोंसे बातचीत की जायगी और जिनके सहयोगसे इस प्रश्नको हल किया जायगा। न तो मैं चाहता हूँ और मेरा अनुमान है कि यह परिषद् भी नहीं चाहेगी कि देशी रियासतोंकी इच्छाके खिलाफ कोई चीज उनपर लादी जाय। अगर किसी खास रियासतकी प्रजा किसी खास तरहका शासन चाहती है तो, फिर वह शासन चाहे राजतन्त्रीय क्यों न हो, यह वहाँकी प्रजाकी मर्जीपर है कि वह वही शासन तन्त्र अपनावें।

परिषद् जानती है, बहुतसे सदस्य उपस्थित नहीं हैं, बहुतसे सदस्य जिन्हें यहाँ आनेका अधिकार है, यहाँ नहीं आये। हमें इसका दुःख है क्योंकि हम भारतके अधिकाधिक भागों, और

अधिकाधिक दलोंके प्रतिनिधियोंसे मिलना चाहते हैं। हमने एक महान् कार्यका उत्तरदायित्व ग्रहण किया है, और इस कार्यमें हम सबका सहयोग चाहते हैं, क्योंकि भारतके जिस भविष्यकी हमने कल्पना की है, वह किसी धार्मिक, प्रान्तीय या अन्य प्रकारके दलका भविष्य नहीं है। बल्कि इसमें भारतकी सम्पूर्ण ४० करोड़ जनता है। इसलिये हमें कुछ खाली बेंचोंको देखकर दुःख होता है, हमारे जो साथी यहाँ उपस्थित हो सकते थे, उनकी अनुपस्थिति पर हमें खेद है।

इस समय हमारे ऊपर एक पवित्र कर्तव्यका भार है, वह यह कि अनुपस्थित साथियोंका हमेशा स्मरण रखना, हमेशा यह याद रखना कि हम यहाँपर किसी एक पार्टीके लिये कार्य करनेके लिये नहीं हैं, बल्कि हमेशा सारे भारतका खयाल रखना और हर काम भारतके चालीस करोड़ देशवासियोंको मद्दे नजर रख कर करना।

और मैं सोचता हूँ कि अब वह समय आ गया है जब कि हम इस परिषद्के कायमें, जहाँतक हमसे हो सके, अपने दलगत और व्यक्तिगत भेद भावसे ऊपर उठकर रहें और हमारे सामने जो समस्याएँ उपस्थित हों, उनपर विस्तृत दृष्टिसे, सहिष्णुता पूर्वक, उत्तम ढङ्गसे विचार करें ताकि जो कुछ भी हम रचना करें भारतके अनुकूल हो, और दुनिया इस बातको मान ले कि इस महान् अवसरपर हमने वैसा ही कार्य किया, जैसा हमें करना चाहिये था।

और एक व्यक्ति है जो अनुपस्थित है, गोकि जैसे वह मेरे दिलोदिमागमें है, वैसे ही बहुतोंके दिलोदिमागमें होगा, वह व्यक्ति हमारी जनताका महान् नेता, हमारे राष्ट्रका पिता, इस परिषद्का निर्माता, और जो बीत चुका और जो बीतनेवाला है

उसका सिरजनहार है। वह हमारे बीचमें नहीं है, क्योंकि अपने आदर्शकी प्राप्तिमें वह भारतके एक सुदूर कोनेमें कार्यरत है। लेकिन मुझे जरा भी शक नहीं है कि उनकी आत्मा हमारे साथ है, और हमारे कार्यको आशीर्वाद दे रही है।

हम भारतके लिये एक विधान बनाने जा रहे हैं, और यह प्रत्यक्ष है कि हम भारतमें जो करने जा रहे हैं, बाकी दुनिया पर उसका काफी असर होगा। आज भी जबकि हम स्वाधीनता के दरवाजेपर ही हैं, भारत संसारके मामलोंमें महत्वपूर्ण भाग लेने लग गया है, दिनों दिन इसमे वृद्धि होगी, इसलिये भारत का विधान बनानेवाले विस्तृत अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोणको सामने रखें यह जरूरी है। हमारा सारी दुनियासे बन्धुत्वका नाता है। हम सब देशोंके साथ मित्रता चाहते हैं, भूतकालमें सङ्घर्षका लम्बा इतिहास रहनेके बावजूद भी हम इङ्गलैण्डके साथ भी मित्रता चाहते हैं।

—::❀::—

ब्रिटिश सरकार और लीगको चेतावनी

काशीके टाउनहालकी सभामें लगभग एक लाख मनुष्यों की उपस्थितमें पंडित नेहरूजीने भारत माताकी जय ध्वनिके साथ कहा :—

विधान सम्मेलनमें हम जिस विधानका निश्चय करेंगे वही स्वतंत्र भारतका विधान होगा, उसे ब्रिटेन मानें या न मानें। अँग्रेज सरकार यह सोच रही है कि विधान सम्मेलनका निर्णय उसके लिये मान्य नहीं है। पर हमने विधान सम्मेलनमें इसलिये प्रवेश नहीं किया है कि हम अपने निर्णय एक चाँदीकी तश्तरीमें सजाकर अंग्रेज सरकारके पास ले जाकर नाचते फिरें कि वह उसे स्वीकार करे। हमने अब लन्दनकी ओर देखना भी छोड़ दिया है। हम जानते हैं कि हमारे भीतर कुछ आपसी मतभेद हैं, पर हम स्वयं उनका फैसला कर लेंगे। हम किसी बाहरी हस्तक्षेपको सहन नहीं कर सकते, और न करेंगे।

पं० नेहरूने कहा कि भारतके सम्बन्ध अब हम ब्रिटेनसे इसी पर निर्भर रहेंगे कि वह इस समय कैसा व्यवहार करता है। हम सब देशोंसे मैत्री रखना चाहते हैं, और ब्रिटेनसे भी हमारी मैत्री उसी हालतमें रहेगी यदि वह हमारी स्वतन्त्रतामें बाधा न पहुँचायेगा। ब्रिटेनका व्यवहार यदि खराब रहा तो वह अच्छे फलकी आशा नहीं कर सकता। हम स्वतन्त्रताके पथपर इतना

आगे बढ़ चुके हैं कि अब हमारे लिये पीछे कदम हटाना सम्भव नहीं है।

संसारकी दृष्टिमें भारतकी मर्यादा बढ़ी है। संयुक्त राष्ट्रोंके सङ्घमें भारतने अफ्रीकाके विरुद्ध महान् सफलता प्राप्त की है। भारत कई राष्ट्रोंसे अपने सम्बन्ध स्थापित कर रहा है और अपने राजदूत वहाँ भेजे हैं। इन सबसे यही मालूम होता है कि संसार भारतके राष्ट्रोंमें उच्च स्थान प्राप्त करेगा।

पंडित नेहरूने आगे कहा कि कांग्रेसने एक काफी अरसे से ब्रिटिश सरकारसे लड़ाई लड़ी है पर किसी अवसर पर भी उसने ब्रिटिश जनताके विरुद्ध घृणाका प्रचार नहीं किया। हमारी लड़ाई शासकोंके विरुद्ध है।

मुस्लिम लीग कह रही है कि उसका प्रत्यक्ष आन्दोलन कांग्रेस और ब्रिटिश सरकारके विरुद्ध है पर वास्तवमें उसके द्वारा सम्प्रदायोंके बीच घृणा फैली है और बङ्गाल, बिहार तथा बम्बईमें निरपराध मनुष्योंकी हत्याएँ हुई हैं। मैं पूछता हूँ कि ऐसे प्रत्यक्ष आन्दोलनसे मुस्लिम लीगी पाकिस्तानके लक्ष्य तक कैसे पहुँचेंगे? लीग वालोंने कुछ भी नहीं प्राप्त किया, उन्होंने केवल उन लोगोंमें घृणाके भावोंका प्रचार किया जो अनेक शताब्दियोंसे शान्तिपूर्वक रहते थे। पंडित नेहरूने आगे कहा—

पाकिस्तानसे समस्या ठीक तरह हल नहीं हो सकती, क्योंकि करोड़ों हिन्दू और मुसलमान पाकिस्तान और हिन्दुस्तानमें बिना नागरिक अधिकारोंके रहेंगे। और साम्प्रदायिक समस्या ज्योंकी त्यों बनी रहेगी। जनताका तबादला एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमें करना हास्यजनक है।

पं० नेहरूने अन्तमें मि० चर्चिलके उस भाषणकी ओर संकेत

किया जो उन्होंने हालमें पार्लियामेंटमें दिया था और जिसमें उन्होंने यह कहा था कि ब्रिटिश फौजोंसे एक सम्प्रदायके लिये दूसरे सम्प्रदायको न दबाया जाय। नेहरूजीने कहा कि कांग्रेसने पहले अनेक अवसरों पर यह कहा है कि हमें भारतमें ब्रिटिश फौजोंकी जरूरत नहीं है। कांग्रेस तो यह चाहती है कि वे शीघ्रसे शीघ्र यहांसे चली जाय, क्योंकि उनके जाने पर भारतकी बहुतेरी कठिनाइयाँ स्वयं ही दूर हो जायँगी।

छात्र और स्वाधीनता-संग्राम

भारतमें हम सङ्घर्ष और संग्रामके बीच जीवन-यापन करते हैं, हो सकता है कि बाहरी व्यक्तिकी नजरमें यह सङ्घर्ष और संग्राम उतना प्रत्यक्ष न हो। जब देश स्वतन्त्रतासे वंचित कर दिया जाता है, तब उसके सामने दो ही रास्ते रह जाते हैं, एक रास्ता स्थितिको स्वीकार कर लेना और दूसरा अपनी स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिये सङ्घर्ष और संग्राम करना। इसके बीचका कोई मार्ग नहीं है, और जो देश दासताको स्वीकार कर लेता है उसमें आत्मा या आत्मबल नहीं रहता। सङ्घर्ष और संग्रामके रास्ते बहुतसे हो सकते हैं, लेकिन मुख्य बात यह है कि जनताकी मनोभावना दासताके विरुद्ध विद्रोहशील होनी चाहिये, यह विद्रोह कैसा रूप ग्रहण करेगा, या कौनसे तरीके इस्तेमाल किये जायँगे, यह परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

इसलिये आप भारतमें आज कुछ विचित्र-सी स्थिति देखते हैं कि हममेंसे कुछ केन्द्रीय सरकारसे सम्बन्धित हैं, कुछ प्रान्तीय सरकारें चला रहे हैं, लेकिन फिर भी हम वर्तमान सरकारके खिलाफ हैं। क्योंकि हमें स्वाधीनताका संग्राम जारी रखना है।

मैं नहीं जानता, आनेवाले कुछ महीनोंमें क्या होगा, मैं नहीं जानता, स्वाधीनता प्राप्त करने या उसपर जोर डालनेके लिये देश कौन-सा कदम आगे बढ़ावेगा, मगर एक बात निश्चित है कि फिलहाल हम स्वाधीनताके संग्राममें रत हैं।

आपका स्वाधीनताका आदर्श शायद रास्तेमें जुलूस निकाल कर नारे लगाने तक सीमित है, यह किसी मौकेपर हो सकता है,

और भी इसी तरहकी चीजें किन्हीं मौकोंपर मौजू हो सकती हैं, किन्तु याद रखिये, जब एक राष्ट्र सङ्घर्ष करता है, जब दो शक्तियाँ आपसमें गुंथ जाती हैं, तब सिर्फ नारे ही नहीं लगाये जाते। मैं पहले कह चुका हूँ, सङ्घर्षके बहुतसे तरीके हैं और मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि आज भारतमें स्वाधीनता संग्राम उतने ही जोरोंसे चल रहा है जितने जोरोंसे पहले चल रहा था। आपको इस वास्तविकताको अच्छी तरह समझ लेना है, आप किसी भावी समयकी प्रतीक्षामें न बैठे रहें कि जब संग्रामके लिये आह्वान होगा तब आप रास्तों खेतों या मिलोंमें प्रदर्शन करेंगे। आजके संग्रामका रूप विभिन्न हो सकता है, कलसे वह अपना रूप बदल सकता है। हम अन्य तरीकेसे काम कर रहे हैं, इसकी वजह यह है कि हमारा देश बहुत आगे बढ़ गया है।

अक्सर कहा जाता है कि हम स्वाधीनताकी सीमापर हैं, दरअस्ल हम स्वाधीनताकी सीमा पर हैं। लेकिन यह याद रखिये, आपने अक्सर उस किलेकी दीवालके पास युद्ध किया है, जिसपर आप अधिकार करना चाहते हैं, वही दीवाल फिर आपके सामने आ सकती है और आपको प्राणपणसे जूझना पड़ सकता है। आपको सिर्फ एक बात याद रखनी चाहिये आप संग्रामका अर्थ सिर्फ सार्वजनिक प्रदर्शन या इसी तरहके ढंगमें न लेवें।

अगर आप देशका काम करते हैं, अगर आप अपना संगठन करते हैं, तो यह भी संग्रामका एक भाग है, अगर आप अन्याय का स्वीकार करनेसे इन्कार करते हैं तो यह भी संग्रामका एक भाग है। संग्रामका शेष रूप जो भी हो, लेकिन संग्रामका शेष आपके सामने आयेगा, जब आप जी लगाकर लड़

लगे। स्वाधीनताका संग्राम आज भी जारी है, गोकि आज मैं भारत सरकार में हूँ, लेकिन फिर भी मैं संग्रामको उसी प्रकार चला रहा हूँ, जिस प्रकार जीवनमें पहले कभी चलाता रहा था।

आज भारतकी जो स्थिति है, उसीके अनुसार संग्रामके विभिन्न रूप और तरीके हैं। आप देखते हैं प्रतिक्रियाशील शक्तियाँ विदेशी शक्तियोंके साथ मिलकर, स्वाधीनताका रास्ता रोकना चाहती हैं। उनकी इस चेष्टाको व्यर्थ करना संग्रामका ही एक भाग है। इसलिये आपको पूरी तस्वीर सामने रखना चाहिये और आपको संगठित, अनुशासित ढंगसे उसके लिये पूरी तैयारी करनी चाहिये।

पण्डितजीने कहा, संसारमें सबसे महत्वपूर्ण परिवर्तन यह होने जा रहा है कि एशियाका पुनर्जन्म हो रहा है। एशियावासियों को इस समय सब तरहके दुख-दर्द, दिक्कतें और सङ्घर्ष, संग्रामोंका सामना करना पड़ रहा है, किन्तु इन सबके बावजूद भी जो एक चीज बिलकुल साफ दिखलायी पड़ती है, वह यह है कि महा-देशोंके प्राचीन पिता एशिया महादेशका पुनर्जन्म हो रहा है। मैं भारतसे बाहरके देशोंसे आये हुए मित्रोंको सिर्फ एशियाकी स्वाधी-नताकी ही नहीं बल्कि एशियाकी एकताका सन्देश देना चाहता हूँ। किन्तु यह एकता, किसी महादेश, देश या जातिके खिलाफ नहीं है, अगर आवश्यकता पड़ जाय तो यह एकता अपनी रक्षाके लिये अवश्य है, किन्तु हमारी एकताका वास्तविक उद्देश्य, मित्रता-पूर्वक शान्तिसे रहना और दूसरोंके सामने यह मिसाल पेश करना कि हम प्राचीन संस्कृतिके साथ प्रगतिका कैसा सुन्दर समन्वय कर सकते हैं।

एशियाके देशोंकी सांस्कृतिक एकताका उल्लेख करते हुए पण्डितजीने कहा, भारत भाग्यवश, पूर्वीय और पश्चिमीय रूपके

बीचमें अवस्थित है। चाहे आप रक्षाकी दृष्टिकोणसे या व्यापार वाणिज्य अथवा सांस्कृतिक दृष्टिकोणसे देखिये, भारत मुख्य स्थान ग्रहण करता है। इसलिये यह बिलकुल वाजिब है कि एशियाके छात्र आन्दोलनके विकासमें हम प्रमुख भाग लें। मैं यह शुभ अवसर पानेके लिये आपको बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि आप एशियाकी वह एकता स्थापित करनेमें समर्थ होंगे, जो हम चाहते हैं।

छात्रोंके अनुशासन हीन होनेके सम्बन्धमें आखिरमें पंडितजी ने कहा, अगर आधारभूत सिद्धान्तोंके सम्बन्धमें मतभेद हो तो कोई बात नहीं, क्योंकि भारत जैसे महादेशमें विभिन्नतामें ही एकता होनी चाहिये, लेकिन मैं देखता हूँ कि झगड़ोंकी तहमें मूलभूत सिद्धान्त नहीं, बल्कि व्यक्तिगत स्वार्थ रहते हैं।

कितनी ही बार मुझसे कहा गया है कि अगर मैं हुक्म दू तो छात्र एक सेनाकी तरह अनुशासन पूर्वक मार्च करनेके लिये तैय्यार हैं। लेकिन मैं आपको याद दिला देना चाहता हूँ कि किसी भी सेनाकी सफलताके लिये सबसे अनिवार्य शर्त है—सेनाके सैनिकोंकी एकता और अनुशासन! मुझे दुख है कि मैं छात्रोंमें इन दोनोंका अभाव देखता हूँ। एक महान् उत्तरदायित्व आपके कन्धोंपर आनेवाला है, क्या आप उस उत्तरदायित्वको निभानेके लिये तैयार हैं?

परिमाणु शक्ति और भारत

पूनामें National Physical Laboratory की नींव डालते हुए पंडित जवाहरलाल नेहरूने कहा—

परिमाणु शक्तिकी छानबीनमें फिलहाल हमें दूसरे देशोंका अनुसरण भले ही करना पड़े, किन्तु यह अनुसरण परिमाणु बम बनानेमें न होगा। लेकिन इस मामलेमें हम किसीसे पीछे नहीं रहना चाहते, क्योंकि यह बहुत ही महत्वपूर्ण है, भावी दुनियाकी रूप-रेखा निश्चित करनेमें यह परिमाणु शक्ति विस्तृत और प्रधान भाग लेगी। परिमाणु शक्ति द्वारा रचनात्मक कार्य किये जा सकते हैं, यानी इसे विध्वंशात्मक कार्योंमें न लगाकर, रचनात्मक कार्योंमें लगाया जा सकता है। इसके द्वारा उद्योग धंधोंका चाहे जहाँ तक विकास हो सकता है।

परिमाणु शक्ति गृह उद्योगोंमें भी सहायक होगी, अगर आपके हाथमें परिमाणु शक्ति हो तो छोटे-छोटे उद्योग भी आप सफलता और सुन्दरता पूर्वक चला सकते हैं। हमें परिमाणु शक्तिकी बड़े पैमानेपर छानबीन करनेका प्रयत्न करना चाहिये।

पण्डितजीने आशा की कि नेशनल फिजीकल लेबोरेटरी शीघ्र ही कार्य करने लग जायगी और उसके साथ ही अन्य अनेक अन्वेषण शालाएँ भी काम करेंगी और देशके स्त्री-पुरुष दिलसे इस कार्यको करेंगे ताकि देश और संसारकी सच्चा सेवा कर सकें।

पिछले महीनोंमें भारतके विभिन्न भागोंमें जो बहुत-सी अन्वेषण शालाएँ खोलनेकी योजनाएँ बनायी गयी हैं, उनमेंसे बहुतोंको मैंने पढ़ा है और बहुतोंकी गतिविधिपर नजर रखी है। कुछ योजनाओंकी मैंने जाँच-पड़ताल भी की है, जिनमें नदी, नद, नहर आदिकी योजनाएँ मुख्य थीं! कुछ योजनाएँ तो टेनेसीवेली योजनासे भी बढ़कर है, मेरे मस्तिष्कमें इन योजनाओंके पूर्ण होनेपर भारतकी जो उन्नत अवस्था होगी, उसकी तस्वीरें घूम रही हैं। आजकी हलचलमें मेरी दृष्टिमें सबसे महत्वपूर्ण कार्य इस तरहकी योजनाओंका प्रारम्भ करना है क्योंकि यही वृहत्तर भारतके भावी विकासकी नींव है।

भारतकी द्रुततर प्रगतिमें धनकी कमीके कारण उतनी रुकावट नहीं पैदा हुई हैं, जितनी योग्य व्यक्तियोंके अभावके कारण। हम धनके अभावकी बहुत ज्यादा शिकायत करते हैं, किन्तु आदमी जब कोई काम करने पर उतारू हो जाता है तब धनकी कमी नहीं रहती, युद्धके लिये क्या धनकी कमी पड़ी? सिर्फ रचनात्मक कार्यक्रमके लिये ही धनकी कमीकी बातें कही जाती हैं। मेरा विचार है कि जिन योजनाओंसे भारतका विकास होता हो, उनके लिये धनकी कमी हर्गिज नहीं होनी चाहिये।

हमें शिक्षित व्यक्तियोंको वैज्ञानिक कार्योंकी समुचित शिक्षा देना चाहिये, मेरे सामने ऐसे उदाहरण भी हैं कि विश्व-विद्यालयोंसे ऊँची डिग्रियाँ प्राप्त व्यक्तियोंको जीवन निर्वाहके लिये जब उपयुक्त कार्य और स्थान नहीं मिला तो उन्हें अन्य कार्य और स्थान स्वीकार करना पड़ा। कुछ लोग सुरक्षित विभागोंमें काम करना पसन्द करते हैं जहाँ कार्यकालमें स्थायित्व होता है वस्तुतः समृद्धिकी भावना ही उन्हें इस दिशामें ले जाती है और

इस प्रकार देश, देशवासियोंकी निपुणतासे वञ्चित हो जाता है और देशकी निपुणता, कुर्सियोंपर बैठकर बिलकुल गैर जरूरी कार्य करनेमें नष्ट हो जाती है।

व्यक्तियोंको कार्यके उपयुक्त बनानेके लिये बहुत कुछ करना है, लेकिन जिन्हें हम कार्यकी शिक्षा दे रहे हैं, उन्हें कार्य-शिक्षा के समय भी काम करनेका मौका देना चाहिये।

भारतमें हमारे देश और देशवासियोंके सम्बन्धमें प्रामाणिक आँकड़ों और सूचनाओंका काफी अभाव है। लेकिन जब तक इस तरहके आँकड़े एकत्र न कर लिये जायँ, तब तक हम कार्य आरम्भ न करें यह नहीं हो सकता। क्योंकि हमें कुछ करना है, हमें कुछ करना चाहिये और जो अत्यन्त अनिवार्य तथा महत्व-पूर्ण है उसे ही करना चाहिये। इसलिये हमें अन्वेषण-शालाओं को खोलना चाहिये। हम जो भी काम करें, हमें बड़े पैमानेपर चालक शक्ति चाहिये, हमें अपने देशकी चालक शक्ति को बढ़ाना होगा। इस समय हमारे पास चालक-शक्ति बहुत कम है, पर हमारे देशमें चालक-शक्ति प्राप्त करनेके विस्तृत और बड़े-बड़े स्रोत हैं, यह विश्वास-पूर्वक कहा जा सकता है कि भारत इस मामलेमें संसारके समस्त देशोंसे समृद्ध है, असलियत यह है कि सब चीजें हमारे पास हैं, उन्हें प्राप्त कर, कार्यमें लगानेका सवाल है।

यह सब होनेके साथ-साथ भारतका रूप भी तेजीसे बदल जायगा। विज्ञानने पहले भी समाजके रूपमें काफी परिवर्तन किया है, समाजके बिना जाने ही विज्ञानने उसका रूप काफी परिवर्तित कर दिया है और कुछ हद तक समाजने जान बूझकर निश्चयपूर्वक अपना रूप बदला है।

मैं मानता हूँ कि भारतमें फिलहाल हमें बहुत-सी दिक्कतोंका

सामना करना है, लेकिन मैं यह नहीं मानता कि हम उन दिक्कतों से जल्दीसे छुटकारा नहीं पा सकते। मेरा खयाल है, हम भारतमें तेजीसे इस ओर बढ़ सकते हैं। मैं दिक्कतोंकी चर्चा करता हूँ तो मेरा मतलब सिर्फ टेकनिकल दिक्कतोंसे ही नहीं होता, बल्कि उन अनेक तरहकी दिक्कतोंसे भी होता है, जिन्हें वैज्ञानिक नहीं सोचते किन्तु जिनके बारेमें मुझे काफी सोचना पड़ता है। सबसे विचारणीय यह बात है कि देशमें हम जो कुछ करते हैं, उसकी देशकी जनतापर क्या प्रतिक्रिया होती है। जब तक जनताकी सद्भावना, कमसे कम हम जो कुछ करते हैं उसके प्रति आंशिक सहानुभूति न होगी, हम अधिक आगे न बढ़ सकेंगे। जनता हमें ब्रेककी तरह रोक देगी। इसलिये यह बहुत जरूरी है कि हम जो कुछ भी करते हैं, वह देशकी जनताको बतलायें और समझायें।

बहुतसे लोग हैं जो सामाजिक आचार-विचार और रहन-सहनके सम्बन्धमें सीमित हैं और पुराने दृष्टिकोणको अपनाये हुए हैं। विज्ञानने पहले भी कुछ हद तक मनुष्योंको देवताओंके त्राससे मुक्त किया है, इस मामलेमें अभी भी बहुत कुछ करना बाकी है, विज्ञान इस मामलेमें हमारी सहायता करे यह हम जरूर चाहेंगे। लेकिन देवी देवताओंके भयसे भी भयङ्कर, और एक भय है, वह भय, स्वयम् आदमीका अपना ही भय है। इस मामलेमें भी विज्ञान और वैज्ञानिक दृष्टिकोण सहायक हो सकता है।

कभी-कभी मैं सोचता हूँ, खासकर विकसित भारतकी भावी मनोरम तस्वीर जब अपने सामने खींचता हूँ, कि काश मैं जरा अधिक जवान होता। मेरे सामने भारतकी वह तस्वीर रहती है जब कि उसके युवा और युवतियाँ आनेवाले महान्

भारतको गढ़ रहे हैं, जिसका हम ख्वाब देखते रहे हैं। फिर भी राष्ट्र-गठनके कार्यमें भाग लेना काफी गौरवजनक है, बहुतों को इससे काफी सन्तोष मिला है। इस महान् कार्यमें थोड़ी बहुत सहायता कर सकनेका आनन्द मुझे आन्दोलित कर देता है।

अन्वेषणशालाके मुहूर्तमें शामिल होनेके लिये आये हुए श्रमिक और सर्वसाधारणको सम्बोधित करते हुए पण्डितजीने कहा; इस अन्वेषणशालाका लक्ष भारतकी दरिद्रता दूर करना है, इसलिये उनकी सहानुभूति और सहयोग वाँछनीय है।

छः दिसम्बरकी घोषणा और कांग्रेस

६ दिसम्बरको ब्रिटिश सरकारने अपनी नयी घोषणा द्वारा भारतकी स्वाधीनताके कार्यमें और स्वाधीन भारतके विधान निर्माणमें एक नयी रुकावट पैदा कर दी। ब्रिटिश सरकारने ग्रूप सम्बन्धी कांग्रेसकी व्याख्या ही अस्वीकार नहीं की, बल्कि संघ न्यायालय द्वारा उसका निर्णय हो यह भी स्वीकार नहीं किया और अपनी तरफसे एक नयी बात जोड़ दी कि बी० या० सी० विभाग प्रान्तीय या ग्रूप सम्बन्धी विधानका निर्माण या और कोई निर्णय बहुमतसे कर सकते हैं, साथ ही ऐसा निर्णय किसी अनिच्छुक भागपर नहीं लादा जा सकता, यह कहकर इस गुत्थी को और भी उलझा दिया।

कांग्रेसके सामने एक नयी समस्या पैदा हो गयी। उसके नेताओंने गम्भीर विचार विमर्श और महात्मा गांधीसे सलाह लेनेके बाद, प्रान्त या प्रान्तके किसी भागके आत्म-निर्णयके सिद्धान्तको अक्षुण्ण रखते हुए विभागोंके कार्य निर्वाहके सम्बन्धमें ब्रिटिश सरकारने ६ दिसम्बरको जो वक्तव्य दिय, उसे स्वीकार करनेके लिये अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सामने एक प्रस्ताव रखा। अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीके सामने कांग्रेस कार्य कारिणीका प्रस्ताव रखते हुए पंडित जवाहर लाल नेहरूने कहा; कांग्रेसको यह प्रस्ताव स्वीकार कर लेना चाहिये यह सीधा और स्पष्ट प्रस्ताव है।

हमारे सामने मुख्य प्रश्न यह कि किस प्रकार विधान परिषद्को जीवित रखा जाय और उसके द्वारा देशकी अधिकाधिक

भलाई की जा सके। ६ दिसम्बरका वक्तव्य मानकर हम लीग के लिये विधान परिषद्में आकर अपना दृष्टिकोण पेश करनेके लिये दरवाजा खुला रखते हैं। अगर हम ६ दिसम्बरका वक्तव्य स्वीकार नहीं करते तो, ब्रिटिश सरकारको मौका मिल जाता है कि वह १६ मईके वक्तव्यको वापिस ले ले या बदल दे, जिसका परिणाम यह हो सकता है कि विधान परिषद्का रूप बिलकुल ही बदल जाय, पहले भी विधान परिषद्के बीचमें रोड़े अटकाये गये हैं, हमने उन दिक्कतोंको दूर कर लिया। अब भी हमें वैसी हो दिक्कतोंको दूर करना है, ताकि विधान परिषद्के महान् हथियारको कुण्ठित करनेका प्रयत्न असफल हो जाय और हम इसका उपयोग अपने देशके लिये कर सकें।

मैंने मेरठमें, मध्यकालीन सरकारमें जो संकट आनेवाला उसका जिक्र किया था, मैंने कहा था कि ब्रिटिश सरकारका रुख मध्यकालीन सरकारके कार्योंपर बुरा असर डाल रहा है। जो कुछ उस समय कहा गया था, और जो भय प्रकट किया गया था वह अब सामने आ रहा है। उस समय तक ब्रिटिश सरकार हमारा काम रोकनेमें सफल होनेकी घोषणा नहीं कर सकी थी, लेकिन अब ब्रिटिश सरकार यह दावा कर सकती है और उसपर जोर दे सकती है। ब्रिटिश सरकारके कार्योंने झंझट पैदाकर दिये हैं, एक गम्भीर स्थिति उत्पन्न कर दी गयी है। और बड़ी सावधानीसे तैयार किया गया जो प्रस्ताव हाउसके सामने है, वह साफ सीधा और उस स्थितिका माकूल जवाब देनेवाला है।

हाउसको निर्णय करना है कि ६ दिसम्बरका वक्तव्य स्वीकार किया जाय या नहीं। इस प्रश्नने बहुतोंके सरमें दर्द पैदाकर दिया है। हमारी यह आदत नहीं है कि जो चीज हमारे ऊपर लादी जाय उसे हम मंजूर कर लें। हमारी इच्छा होती है क वक्तव्यमें

जो चुनौती है उसे हम स्वीकार करें और अपनी पूरी ताक़तसे उसका मुँहतोड़ जवाब दें। लेकिन हमारी भावुकताके विजयी होनेमें जो खतरा है, हमने उसे महसूस कर लिया है।

इस समय बहुत-सी शक्तियाँ हमारे खिलाफ खड़ी हो गयी हैं, ऐसे संगीन मौकेपर हमें खूब सावधानीके साथ आगे बढ़ना है ताकि हम उन शक्तियोंका मुकाबिला कर सकें और उनपर हावी हो सकें। बस, यही एक खयाल है, जिसके कारण कार्यकारिणीने यह प्रस्ताव आपके सामने रखा है।

यह प्रस्ताव ६ दिसम्बरका वक्तव्य स्वीकार करता है। कुछ लोग महसूस कर सकते हैं कि यह एक तरहसे अपनी कमजोरी स्वीकार करना है लेकिन मैं इसे स्वीकार नहीं करता। विधान परिषदके अस्तित्वमें आनेके साथ साथ हमारे युद्धने एक नया रूप ग्रहण कर लिया है। अब हमारा लक्ष्य होना चाहिये कि विधान परिषद न तो स्थगित हो और न उसका कार्य बन्द होने पाये। परिषदने अभी तक अपने पूर्णरूपमें कार्य करना आरम्भ नहीं किया है, लेकिन मुझे आशा है कि दो सप्ताह बाद जब इसकी बैठक फिर आरम्भ होगी तो वह अपने पूर्णरूपमें कार्य करने लगेगी। परिषदके सम्बन्धमें महत्वपूर्ण नुक्ता यह है कि चाहे वह सर्वाधिकारिणी हो या न हो, परिषदको ब्रिटिश सरकार भङ्ग नहीं कर सकती, सिर्फ शक्तिका उपयोग करके ही ब्रिटिश सरकार उसे जबरन भङ्ग कर सकती है। जब ब्रिटिश सरकार इस प्रकार ताकतसे उसे भङ्ग करना चाहेगी तब हमारे लिये वह मौका आयेगा जब हम निर्णय करेंगे कि उसका मुकाबिला कैसे किया जाय?

मुख्य बात स्मरण रखनेकी यह है कि ९ दिसम्बरसे विधान परिषद कार्य करने लगी, और यद्यपि यह विधान परिषद हमारे

आदर्शोंके अनुरूप नहीं है, फिर भी हमारी स्वाधीनता प्राप्त करने के हथियारके रूपमें व्यवहृत की जा सकती है। इसलिये यह बहुत आवश्यक हो गया है कि परिषद्को स्थगित करने या बन्द करनके प्रयत्नोंको रोका जाय। विधान परिषद्में जीवन है और यह हमें स्वाधीनताके पथपर बहुत दूर तक ले जा सकती है।

हमारे विरोधियोंके इसे बन्द करनेके प्रयत्न असफल हो गये। इसलिये अब उन्होंने इसके रास्तेमें रुकावटें डालनेका प्रकारान्तर ग्रहण किया है, इसीका फल है कि ६ दिसम्बरका वक्तव्य प्रकाशित किया गया। सन् १९१९ से ही हम हमेशा अपनी ताकतके भरोसे ही रहे हैं और भारतकी जनताकी ओर ही देखा है, हमने कभी अपना लक्ष्य प्राप्त करनेमें ब्रिटेन की ओर नहीं ताका, न आज ताकेंगे। लेकिन हमारे संग्रामके इस सङ्गीन मौके पर हम अपने दुश्मनोंकी संख्या बढ़ाना नहीं चाहते।

लीग चाहती थी कि विधान परिषदका कार्य जारी न रहे और देश आठ-नौ महीने पहलेकी अवस्थाको फिर पहुँच जाय। अगर लीगकी यह इच्छा पूरी हुई तो जैसा हम वाजिब समझेंगे, उस स्थितिका सामना करनेके लिये निर्णय करेंगे। लेकिन फिल-हाल हमारी तमाम ताकत, शक्ति और दृढ़तापूर्वक विधान परि-षदका कार्य बढ़ानेमें लगनी चाहिये। मुमकिन है कि हमें बिल-कुल भिन्न मोर्चोंपर जूझना पड़े, हमें उसके लिये भी तैयार रहना चाहिये। इस प्रस्तावको पास कर हम दुनियाको दिखलायेंगे कि हमने ऐसा इसलिये किया कि कोई यह न कहे कि हमने किसीके लिये दरवाजा बन्द कर कार्य किया। यह जाहिर करने के लिये कि हम दरवाजा खुला रखना चाहते है, हमने बहुत-सी

बातें की हैं, और बहुतसे निर्णयोंको स्थगित कर दिया है, जिनके सम्बन्धमें हम चाहते थे कि अविलम्ब फैसला हो जाय। हम नहीं चाहते कि किसीको यह कहनेका मौका मिले कि हमने ब्रिटिश योजना भंग की।

आसामके निर्वाचित प्रतिनिधियोंने आसामको विभाग. और ग्रूपमें न शामिल होनेका आदेश दिया है, अगर आसाम चाहे तो इस नुक्तेपर लड़ सकता है। लेकिन मैं यह याद दिला देना चाहता हूँ कि एक या दो व्यक्तियोंके बहादुराना कार्योंसे ही युद्ध नहीं जीता जाता, बल्कि युद्धमें हजारोंके सहयोग तथा सब शक्तियोंके संग्रह और उचित उपयोग द्वारा ही विजय प्राप्त होती है। इस समय हमारा वर्तमान लक्ष्य होना चाहिये कि हम अपने विरोधियोंको परास्त कर दें। ऐसा मौका आ सकता है, जब आसामकी युद्ध करनेकी इच्छा पूरी हो, लेकिन वह युद्ध आसाम अकेला नहीं लड़ेगा, बल्कि सारा भारत उसके पीछे होगा।

मेरठमें मैंने कहा था, मैं नहीं जानता, कब तक मैं और मेरे साथी मध्यकालीन सरकारमें रहेंगे। मैं अब भी नहीं जानता हम कितने काल तक वहाँ रहेंगे। लोग स्वाधीनताके अन्तिम संग्रामकी चर्चा कर रहे हैं। लेकिन मैं सोचता हूँ कि स्वाधीनताका संग्राम अभी भी चालू है। मुमकिन है इस संग्रामको निकट भविष्यमें हमें और भी जोरदार करना पड़े, लेकिन वर्तमान समयका तकाजा है कि हम अपनी वाणी संयत रखें और नया कार्य करनेके पहिले ठण्डे दिलसे निर्णय करें।

—::०::—

भारतका भावी विधान

पण्डित जवाहरलाल नेहरूने भावी विधान सम्बन्धी प्रस्तावके सम्बन्धमें बहसका जवाब देते हुए कहा—"जो लोग विधान सभामें शामिल होना चाहते थे, उन्हें काफी मौका दिया जा चुका है। बदकिस्मतीसे उन्होंने अभी तक शामिल होनेका कोई निर्णय नहीं किया। मुझे इसका खेद है। अब तो मैं सिर्फ इतना ही कह सकता हूँ कि भविष्यमें वे जब भी आना चाहें, हम उनका स्वागत करेंगे। वे आना चाहें तो आ सकते हैं, मगर अब हम साफ किये देते हैं कि भविष्यमें किसीके आने अथवा न आनेका इन्तजार नहीं किया जायगा और गाड़ी रुकेगी नहीं। हमने काफी इन्तजार किया, ६ सप्ताहके लिए नहीं, कुछने सालों तक और देशने कई पीढ़ियों तक इन्तजार किया। आखिरकार हम कब तक इन्तजार करें? यदि हममेंसे कुछ खुशहाल लोग इन्तजार कर सकते हों तो करें, लेकिन प्रश्न यह है कि देश के भूखें-नंगे लोग कब तक इन्तजार करें।"

रियासतोंकी सर्वोच्च सत्ताके प्रश्नका जिक्र करते हुए नेहरूजी ने कहा—"इस प्रस्तावमें सर्वोच्च-सत्ता प्रजामें निहित होनेका प्रतिपादन है। किन्तु कुछ रियासतोंके नरेश इसमें सहमत नहीं हैं। यह आक्षेप आश्चर्यजनक है। कहना न होगा कि यदि कोई नरेश अथवा कोई मन्त्री अथवा कोई और व्यक्ति ऐसा एतराज

वस्तुतः गम्भीरतासे उठाता है तो हमें समूची रियासती प्रणाली तथा नरेशों व मन्त्रियोंकी एक साथ निन्दा करनी पड़ेगी। किसी भी व्यक्तिका आज यह कहना निन्दनीय है कि उसे मनुष्यों पर राज्य करनेका दैवी अधिकार प्राप्त है, फिर चाहे वह कितना ही बड़ा क्यों न हो। किसी भी व्यक्तिके ऐसे मन्तव्यको सहन नहीं किया जा सकता। यह एक ऐसी चीज है जिसे यह हाउस कभी स्वीकृत न करेगा। मुझे आशा है कि यदि यह चीज हाउसके सामने पेश की गई तो वह उसे रद्द कर देगा।

"राजाके दैवी-अधिकारके सम्बन्धमें हमने काफी सुना है। हमने अतीत कालके इतिहासमें भी इसके बारेमें काफी पढ़ा है। हमारा यह खयाल था कि इसका खातमा हो चुका है और इसे चिरकालके लिये दफना दिया जा चुका है। लेकिन आज भारतमें यदि कोई इस प्रश्नको फिर उठाता है तो उससे प्रकट होता है कि भारतमें कुछ हिस्से और कुछ व्यक्ति ऐसे हैं जो वर्तमानका खयाल किये बिना अतीतमें सराबोर हैं। अतएव मैं उनसे एक मित्रके नाते निवेदन करूँगा कि यदि वे अपनी इज्जत चाहते हैं तो उन्हें उक्त खयाल अपने दिमागमें भी नहीं लाना चाहिये। इस सम्बन्ध में किसी किस्मका समझौता नहीं किया जा सकेगा।"

"यदि रियासतोंके प्रतिनिधि विधान-सभामें शामिल नहीं हैं तो इसमें हमारा कोई कसूर नहीं! यह कसूर उस योजनाका है, जिसके अनुसार हमें कार्य करना पड़ रहा है। अब हमें चुनाव करना है कि क्या कुछ व्यक्तियोंके यहाँ न आ सकनेके कारण हम अपना काम बन्द कर दें? रियासती प्रतिनिधियोंके यहाँ न आ सकनेके कारण इस प्रस्ताव पर ही नहीं, अपितु अन्य विषयों पर भी विचार करना बन्द कर देना खतरनाक होगा।

जहाँ तक हमारा ताल्लुक है, हम चाहते हैं कि वे जितनी जल्दी आना चाहें आ सकते हैं। यदि वे अपनी २ रियासतों के ठीक-ठीक प्रतिनिधि होकर आयेंगे तो हम उनका स्वागत करेंगे।"

"इस प्रस्तावमें हमने यह दावा किया है कि हमलोग सर्वतंत्र भारतके लिये प्रजातन्त्रके आधारपर विधान तैयार करेंगे। भारत के लिए हम और क्या चाह सकते हैं? कोई भी हालत क्यों न हो, हमलोग सिवा प्रजातन्त्री भारतके और किसी चाजकी कल्पना भी नहीं कर सकते।

"अब प्रश्न यह है कि उस प्रजातन्त्रका इङ्गलैंड, ब्रिटिश राष्ट्र समूह तथा अन्य देशोंके साथ कैसे सम्बन्ध रहेंगे? चिरकालसे हमलोग स्वाधीनता दिवसपर यह प्रतिज्ञा लेते आ रहे हैं कि भारत को ब्रिटेनके साथ सम्बन्ध विच्छेद कर लेना चाहिये, क्योंकि यह सम्बन्ध ब्रिटिश गुलामीका प्रतीक है। हमने कभी यह खयाल नहीं किया कि हम विश्वके दूसरे देशोंसे अलग-अलग रहें अथवा उन देशोंका विरोध करना शुरू कर दें जो अब तक हमपर शासन करते रहे हैं। आज हमलोग आजादीकी देहलीपर खड़े हैं। इस नाजुक घड़ीमें हम किसी भी देशके साथ संघर्ष मोल न लेंगे। हम सबके साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करेंगे हमलोग ब्रिटिश जनता व ब्रिटिश राष्ट्र समूहके साथ भी मैत्री स्थापित करना चाहते हैं।

"मैं अपना यह प्रस्ताव न केवल इस हाउस अपितु समूचे विश्व के सामने प्रस्तुत कर रहा हूँ। इस प्रस्ताव द्वारा हम यह साफ कर देना चाहते हैं कि हम सबके साथ मैत्री चाहते हैं, हम किसीके साथ बैर-विरोध नहीं करेंगे। हमने अतीत कालमें

काफी संघर्ष किया है और शायद हमें भविष्यमें भी कोई संघर्ष करना पड़े, लेकिन एक महात्माके नेतृत्व में हमलोगोंने सबके साथ और यहाँ तक कि अपने विरोधियोंके साथ भी मैत्री व सद्भावनापूर्ण व्यवहार करनेको सोचो है। आज इस विधान-सभामें हम लोग एक महान् आदर्शको लेकर उपस्थित हैं। इस प्रस्तावमें भी उसका जिक्र कर दिया गया है। मुझे आशा है कि हमारी आजादीसे एशियाके दूसरे देश भी आजाद हो जायेंगे। हमलोग एक तरह एशियाई देशोंकी आजादीके नेता हो चुके हैं।

—::·::—

भारतके स्वतन्त्र होने पर सन्देश

आधुनिक भारतके इतिहास में स्वर्णाक्षरोंसे लिखे जाने वाले १५ अगस्त, १९४७ के दिन भारतके अँग्रेजोंकी १५० वर्षोंकी गुलामीसे स्वतन्त्र होने पर भारतके प्रथम प्रधान मन्त्री पण्डित जवाहरलाल नेहरूने अपने सन्देशमें कहा :—

भारत लम्बी निद्रा तथा लड़ाईके बाद आज जाग्रत, वर्ग-शील तथा स्वतन्त्र होकर खड़ा हुआ है। भूतकालकी कुछ बातें अभी तक हमसे चिपकी हैं और हम जो प्रतिज्ञाएँ पिछले दिनों कर चुके हैं, उन्हें पूरी करनेके लिये हमे अभी बहुत कुछ करना है। हमारे लिये इतिहास फिर नये सिरेसे शुरू हो रहा है। अब हम भावी युगमें जिस प्रकार रहेंगे और आगे जो कार्य करेंगे, उसे भावी इतिहासकार लिखेंगे।

आजका अवसर हमारे लिये एशियाके लिये तथा समस्त संसारके लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है। आज एक नये नक्षत्रका उदय हो रहा है। एक नयी आशा साकार हो रही है और बहुत दिनोंका स्वप्न आज चरितार्थ हो रहा है। आज हमारी यही कामना है कि यह नक्षत्र कभी न डूबे और हमारी आशाएँ कभी खण्डित न हों।

यद्यपि हमारी स्वतन्त्रता बादलोंसे घिरी हुई है और हमारे बहुतसे भाई दुख तथा कष्ट में हैं। हमारे चारों ओर कठिन समस्याएँ उपस्थित हैं, फिर भी हम आजादीसे खुश हैं। परन्तु इस स्वतन्त्रताके साथ-साथ हमार ऊपर उत्तरदायित्व भी आय

हैं, जिनका वहन हमें स्वाधीन तथा अनुशासनशील राष्ट्रके सदृश करना है।

आजके दिन हमारा ध्यान सबसे पहिले इस स्वाधीनताके प्रतिष्ठाता, राष्ट्र-पिता महात्मा गांधीकी ओर जाता है, जिन्होंने भारतीय आत्माकी साकार प्रतिमाके रूपमें आजादीको मशाल सदा ऊँची रखी और हमारे चारों ओरके अन्धकारको दूर किया। हम बहुधा उनके अयोग्य अनुगामी रहे हैं, और उनके उपदेशोंसे उनके बताये हुए मार्गसे भटक गये हैं, परन्तु हम ही नहीं हमारी आगे आनेवाली सन्तान भी भारतके इस महान् पुत्रके सन्देशको भविष्यमें सदा हृदयंगम रखेगी। राष्ट्र-पिता गांधीजी द्वारा प्रज्वलितकी गयी स्वतन्त्रताकी मशाल हम कभी बुझने नहीं देंगे चाहे जितने भी तूफान क्यों न आवें।

इसके बाद हमारा ध्यान आजादीके उन अज्ञात सिपाहियों और सैनिकोंकी ओर जाता है, जिन्होंने बिना किसी प्रशंसा या पुरस्कारकी आशाके भारतकी आमरण सेवा की है और हँसते-हँसते माताके चरणों पर अपने प्राण न्योछावर किये हैं।

हमें अपने उन भाई-बहिनोंका भी ध्यान आता है, जो राजनीतिक सीमाओंके द्वारा हमसे अलग हो गये हैं, और दुर्भाग्यसे आज स्वाधीनतामें भाग नहीं ले सके हैं। वे हमारे हैं और चाहे जो भी हो हमारे बने रहेंगे और हम उनके सौभाग्य और दुर्भाग्यमें उनके सहभागी रहेंगे।

भविष्य हमारी ओर देख रहा है। हम सर्वसाधारणको, किसानों और मजदूरोंको, दरिद्रता, अज्ञान तथा रोगोंसे लड़नेके लिये, एक समृद्ध लोकतन्त्रवादी तथा प्रगतिशील राष्ट्रका निर्माण करनेके लिये, ऐसी सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक

संस्थाओंका निर्माण करनेके लिये जिससे प्रत्येक नर-नारीको सामाजिक न्याय मिल सके तथा जीवनमें पूर्णता मिल सके, सदा आगे बढ़ाएँगे और प्रत्येक दिशामें जीवनके स्तरको ऊँचा करेंगे। हमें कठिन परिश्रम करना है। जब तक अपनी प्रतिज्ञा हम पूरी न कर लें, जब तक भारतकी जनताको निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचा न दें, तब तक हमें विश्राम नहीं करना है।

हम एक महान् देशके नागरिक हैं। हमें तीव्र गतिसे आगे बढ़ना है और अपने उच्च आदर्शोंका पालन करना है। हम चाहे जिस धर्मके अनुयायी हों हम सब भारत माताकी सन्तान हैं और हम सबका समान अधिकार तथा उत्तरदायित्व है। हम साम्प्रदायिकता तथा सङ्कीर्णताको प्रोत्साहन नहीं दे सकते, क्योंकि जिस राष्ट्रके लोग सङ्कीर्ण विचार या सङ्कीर्ण मनोवृत्तिके होंगे वह राष्ट्र महान् राष्ट्र नहीं हो सकता।

हम संसारके सभी राष्ट्रोंके प्रति अपनी शुभकामना प्रकट करते हैं और शान्ति, स्वतन्त्रता तथा लोकतन्त्रवादको आगे बढ़ानेमें उनसे सहयोगकी प्रतिज्ञा करते हैं।

हम अपनी भारत माताको, चिरपुरातन और चिरनवीन मातृभूमिको अपनी श्रद्धाञ्जलि भेट करते है और उसकी निरन्तर सेवामें अपना जीवन लगा देनेकी नयी प्रतिज्ञा करते हैं।

आज इस स्वर्ण अवसर पर हम अपने उन भाइयोंको भी सन्देश पहुँचाना चाहते हैं जो संसारके अन्य दूर-देशोंमें बसे हुए हैं। आज समस्त भारतमें, समस्त एशियामें और वस्तुतः सारे संसारमें एक महत्वपूर्ण अवसर उपस्थित है। दीर्घकालके कष्ट-सहन तथा बलिदानके बाद भारत आज स्वतन्त्रता पा रहा

है। आज भारत में, नहीं समस्त पूर्वमें एक नया नक्षत्र उदय हो रहा है, संसारमें एक नयी आशाका जन्म हो रहा है।

आज स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके दिन भारतमाता विदेशोंमें रहने वाले अपने पुत्रोंको स्नेहपूर्ण शुभ कामनाएँ भेजती है। विदेशोंमें रहने वाला प्रत्येक भारतीय भारतका प्रतिनिधि है और उसे सदैव स्मरण रखना चाहिये कि देशका सम्मान उसके हाथ में है। उसके लिये यह गौरवपूर्ण अधिकार और उत्तरदायित्व है। भारत माताकी कोई भी सन्तान चाहे वह जहाँ हो—राष्ट्रीय आत्म-सम्मान अथवा अपनी स्वाधीनताके विरुद्ध कोई कार्य न करे। विदेशोंमें रहने वाले भारतके समस्त पुत्रों और पुत्रियोंका यही कर्तव्य है कि वे अपनी स्वाधीनताकी रक्षा करें और दूसरोंकी स्वाधीनताका आदर करें।

उपरोक्त सन्देशके अतिरिक्त नेहरूजीने इसी अवसर पर प्रथम प्रधान मन्त्रीकी हैसियतसे राष्ट्रके प्रति रेडियो पर बोलते हुए अपने प्रथम ब्राडकास्टमें समस्त देशवासियोंसे राष्ट्रोन्नतिकी योजनाओंमें सबसे सहयोगको अपील की। आपने कहा :—

यद्यपि मुझे पिछले कितने ही वर्षोंसे भारतकी सेवा तथा उसकी स्वतन्त्रताके लिये कार्य करनेका सौभाग्य प्राप्त है, किन्तु आज सरकारी रूपमें भारतीय जनताके सर्व प्रथम सेवककी हैसियतसे मैं आपकी सेवा तथा भलाईके लिये प्रतिज्ञाबद्ध होकर प्रथम बार बोल रहा हूँ। आप लोगोंकी इच्छा और आज्ञानुसार ही मैं इस पद पर आया हूँ और केवल तभी तक इस पद पर रहूँगा जब तक आप मुझमें अपना विश्वास रखेंगे।

विदेशी प्रभुताका अन्त हो गया है और स्वतन्त्रता प्राप्त हुई है। परन्तु स्वतन्त्रता अपने साथ नयी जिम्मेदारियाँ और दायित्व भी लायी है, जिसका भार हम उसी दशामें वहन कर

सकते हैं, जब हम स्वतन्त्र लोगोंकी भावना, अनुशासन और अपनी स्वतन्त्रताको अक्षुण्ण बनाये रखने ही नहीं बल्कि उसे विस्तृत करनेके लिये कटिबद्ध हों।

हमने बहुत कुछ प्राप्त कर लिया है और अभी इससे अधिक प्राप्त करना है। आइये, हम अपने नवीन कार्योंमें दृढ़प्रतिज्ञ होकर जुट जायँ और उन सिद्धान्तोंका पालन करते जायँ जो हमारे महान नेता महात्मा गांधीने हमें बताये हैं।

हमारी दीर्घकालीन दासता, विश्व-युद्ध और उसके परिणामोंने हमारे सामने अनेक गम्भीर समस्याएँ लाकर खड़ी कर दी हैं। आज हमारे देशकी जनताके पास भोजन, वस्त्र और अन्य आवश्यक वस्तुओंका अभाव है। वस्तुओंके दाम बे तरह बढ़े हुए हैं। हम उन्हें तत्काल ही हल नहीं कर सकते, किन्तु साथ ही उनके हल करनेमें देर भी नहीं कर सकते। अतः हमें ऐसी योजना बनानी है कि जनताके भार कम हो जायँ और उसका रहन-सहन ऊँचा हो जाय। हम किसीका अहित करना नहीं चाहते, किन्तु यह बात भी अच्छी तरह समझ लेनी चाहिये कि हमारा मुख्य ध्यान अपनी चिर-पीड़ित जनताके हितकी ओर पहले होगा और उसके हितके मार्गमें जो बाधाएँ आयेंगी, उन्हें हम अवश्य दूर करेंगे। हमें अभी भूमि सम्बन्धी पुरानी प्रणालीमें शीघ्र ही परिवर्तन करना होगा। हमारे सामने सन्तुलित उद्योगीकरणकी भी समस्या है, ताकि देशकी सम्पत्तिमें वृद्धि हो और चीजोंका वितरण समान रूपसे हो सके।

आज हमारे सामने सबसे मुख्य बात चीजोंका उत्पादन बढ़ानेकी है। उत्पादनको कम करनेका कोई भी प्रयत्न देशको और उससे भी अधिक मजदूरोंको हानि पहुँचाने वाला होगा। परन्तु केवल उत्पादन बढ़ाना ही पर्याप्त नहीं है, क्योंकि इससे इस

बातकी सम्भावना है कि सम्पत्ति कुछ थोड़ेसे लोगोंके हाथोंमें चली जाय। अत समस्याके हलके लिये समान वितरण अत्यन्त आवश्यक है।

भारत सरकारके सामने इस समय नदियोंका बाँध बनाकर सिंचाईका प्रबन्ध करने और बिजली पैदा करनेकी अनेक योजनाएँ हैं। इससे खाद्य वस्तुओंके उत्पादन और उद्योग-धन्धोंमें तथा सभी क्षेत्रोंमें उन्नति होगी।

इन सब में शान्त वातावरण और सबके सहयोगकी आवश्यकता है। इसलिये सब लड़ाई झगड़ा छोड़कर हमें इस काममें जुट जाना चाहिये। लड़ाई झगड़ेका भी समय हुआ करता है। आज लड़ाई झगड़ेका समय नहीं है। आज हमें सबके साथ मिल-जुलकर काम करना चाहिये।

मैं कुछ शब्द अपने सरकारी अफसरों मुल्की और फौजी लोगोंसे भी कहना चाहता हूँ। पुराने मतभेदों और भेदभावों का अन्त हो गया है और आज हम सब स्वतन्त्र भारतकी सन्तान हैं। हमें अपने देशका स्वतन्त्रता पर गर्व है, इसी प्रकार हमें भारत माताकी एक साथ मिलकर सेवा करनेमें गर्वका अनुभव करना चाहिये। समस्त अफसरों और अन्य कर्मचारियोंको भारतके प्रति भक्ति प्रदर्शित करनी है। सभी सरकारी कर्मचारियोंको आगे आनेवाले कठिन समयमें बड़ा महत्वपूर्ण कार्य करना है और प्रत्येक बड़ेसे बड़े तथा छोटेसे छोटे सरकारी कर्मचारीको हम देशके प्रति वफादार रहते हुए केवल राष्ट्रके हितके ख्यालसे अपने कर्तव्यके पालन करनेके लिये अमंत्रित करते हैं। जय हिन्द !!

—::❀::—

एशियाकी प्रगतिमें भारतका कार्य

पण्डित जवाहरलाल नेहरूने एशियाके समस्त देशोंके संगठन और समान हितके कार्यों पर विचार करनेके लिए अन्त एशियाई सम्मेलन ३१ मार्च, १९४७ में निमंत्रित किया था, जो एशियाके इतिहास में अभूतपूर्व घटना थी। इस सम्मेलनका उद्घाटन करते हुए नेहरूजीने कहा था :—

संसार में स्थायी शान्तिके नामपर संयुक्त राष्ट्रों द्वारा प्रयत्न किया जा रहा है, जिसमें यूरोपके राष्ट्रोंकी ओर ही मुख्य ध्यान दिया जाता है, परन्तु संसार में स्थायी शान्ति तब तक असम्भव है, जब तक एशिया में शान्ति न हो। यदि हम संसारमें शान्ति चाहते हैं, तो गुटबन्दीसे दूर रहकर हमें संसारके और विशेषत: एशियाके देशोंका सङ्गठन करना होगा और संकुचित राष्ट्रीयतासे दूर रहना होगा। यद्यपि प्रत्येक देशके निजी मामलोंमें राष्ट्रीयताके लिए स्थान है, किन्तु अन्तर्राष्ट्रीय विकासके मामलोंमें राष्ट्रीयताके लिए कोई स्थान नहीं है। राष्ट्रीयताका प्रत्येक देशके जीवनमें एक विशिष्ट स्थान है और प्रत्येक देशके व्यक्तिगत मामलोंमें राष्ट्रीयताको प्रोत्साहन देना सर्वथा उचित है परन्तु किसी देशकी राष्ट्रीयताको इतना उग्ररूप नहीं धारण करना चाहिए कि अन्तर्राष्ट्रीय विकासमें वह रोड़े अटका सके।

इस समय हम प्राचीन युगको समाप्तकर नवीन युगके द्वार पर खड़े हैं। एशियाके दीर्घकालीन स्थिरताके उपरान्त सहसा अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंमें महत्वपूर्ण स्थान प्राप्तकर लिया है। एशियाके इस महाद्वीपने, जिसमें मिश्र इत्यादि सभी देश

शामिल हैं मानवताके विकासमें अपना प्रमुख योग दिया है। यह एशिया ही है जहाँ सभ्यताका जन्म हुआ था और जहाँके निवासियोंने मानव जीवनके अत्यन्त साहसपूर्ण कार्य किए हैं। यहीं मानव मणिने अनवरतरूपसे सत्य का अनुसन्धान किया था और मानवताकी आत्मा आकाश-दीपकी भांति इतने वेगसे प्रज्वलित हुई थी कि उसने सम्पूर्ण संसारको प्रकाशमय कर दिया था। परन्तु कालान्तरमें वही एशिया, जहाँसे सभ्यता और संस्कृतिकी प्रचंड धाराएँ समस्त दिशाओंमें प्रवाहित हुई थीं, क्रमशः परिवर्तन-शून्य होने लगा और उसका समस्त विकास रुक गया। इसका परिणाम स्वभावतः यह हुआ कि अन्य महादेशों और विशेषतः यूरोपके लोग शक्ति-सम्पन्न होकर रंग-मञ्च पर आ धमके और उन्होंने विश्वके समस्त देशोंपर अपना प्रभुत्व स्थापितकर लिया और यह महादेश एशिया, यूरोपकी साम्राज्यवादी शक्तियोंके लिये अखाड़ा बन गया। यही नहीं शनैः शनैः दशा यहाँतक पहुँची कि यूरोपीय देशोंने एशियाई देशोंका मनमाना शोषण किया और एशिया यूरोपका क्रीड़ा-स्थल बन गया। परन्तु अब समयने फिर पलटा खाया है और एशिया अपनी पूर्व स्थितिपर फिर पहुँचनेके लिये कटिबद्ध है। यूरोप और अमेरिकाके नियंन्त्रण और बन्धनसे मुक्त होकर वह अपने समस्त साधनोंका उपयोग अपने देशोंके निवासियोंके लिये चाहता है।

ऐसे महान अवसरपर हम लोग यहाँ एकत्र हुए हैं और निस्सन्देह भारतवासियोंके लिये यह महान् गौरवका विषय है कि उन्हें दूर देशोंसे आए हुए अपने सहयोगी एशियावासियों कर स्वागत करने और उनसे वर्तमान एवं भविष्यके सम्बन्धमें परामर्श करनेका अवसर मिला है।

यूरोप और अमेरिकाको आश्वासन देते हुए नेहरूजीने कहा कि किसी राष्ट्र-विशेषके विरुद्ध हमारी कोई योजना नहीं है। हमारी महान् योजनाका लक्ष्य विश्वमें सुख, शान्ति, उन्नति और समृद्धिका साम्राज्य स्थापित करना है। हमारा विचार अपने पैरोंपर खड़े होने तथा उन अन्य लोगोंको सहयोग प्रदान करनेका है, जो हमारा साथ देनेको तैयार हों।

एशियाई सम्मेलनके सम्बन्धमें नेहरूजीने कहा कि इस सम्मेलनमें न तो कोई नेता है और न कोई अनुयायी। समस्त एशियाई देशोंको समानरूपसे समान कार्यके लिये एक साथ कार्य करना है। भारत भी एशियाके विकासमें महत्वपूर्ण योग लेना चाहता है। यद्यपि भारत स्वतः अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर रहा है, किन्तु इस तथ्यके बावजूद वह एशियामें काम करनेवाली अन्य शक्तियोंके साथ कार्य करनेको कटिबद्ध है। और वह एशियाकी प्रगतिमें महत्वपूर्ण भाग लेगा।

विश्व इतिहासके इस सङ्कट-कालमें एशियाको अनिवार्य रूपसे महत्वपूर्ण कार्य करना है। अब एशियाई देशोंको कठपुतली बनाकर यूरोप तथा अमेरिका अपना कार्य नहीं सिद्ध कर सकते। एशियावासियोंको विश्वके मामलोंमें अपनी नीति स्वयं ही निर्धारित करनी है। हम एशियावासी स्वयं ही अपनी तकलीफोंसे पीड़ित हैं, किन्तु फिरभी सम्पूर्ण एशियाकी आत्मा एवं दृष्टिकोण शान्तिमय है और अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंके क्षेत्रमें आकर एशिया विश्व-शान्तिकी स्थापनाके सम्बन्धमें अपना गहरा प्रभाव अवश्य डालेगा, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

संसारमें स्थायी शान्ति तभी हो सकती है, जब समस्त संसारके सभी राष्ट्र स्वतन्त्र हो जायँ और सभी प्राणियोंको स्वतन्त्रता एवं व्यक्तिगत सुरक्षा प्राप्त हो। अतः शान्ति तथा

स्वतन्त्रताके प्रश्नपर विचार करते समय हमें सभी लोगोंके राजनीतिक एवं आर्थिक पहलुओं पर भी ध्यान देना होगा। एशियाके देश बहुत पिछड़े हुए हैं और उनके जीवनका मान अन्य महादेशोंके लोगोंके समान नहीं है। इन असमानताओंके प्रश्नका हमें तत्काल हल करना होगा। हमें सभी मनुष्योंके लिये समान आदर्श रखकर अपने राजनीतिक सामाजिक और आर्थिक ढांचेको खड़ा करना होगा, ताकि वे उन समस्त भारोंसे मुक्त हो जायँ उनसे जिनका व्यक्तित्व दबा हुआ है।

अपने भाषणके अन्तमें नेहरूजीने कहा—इस समय एशियामें हम सर्वत्र कष्टों और मुसीबतोंका सामना कर रहे हैं। भारतमें भी झगड़े-फसादका वातावरण कायम है। परन्तु इससे हमें हतोत्साह नहीं होना चाहिये। महान् संक्रान्ति-कालमें ऐसी घटनाओंका होना स्वाभाविक है। एशियाके लोगोंकी नसोंमें अब नवस्फूर्ति संचारित हो गयी है। जनता जाग्रत अवस्थामें है और अपना वैध अधिकार माँग रही है। समस्त एशियामें परिस्थितियां अत्यन्त गंभीर हैं, किन्तु हमें उनसे भयभीत नहीं होना चाहिये बल्कि उनका स्वागत करना चाहिये, क्योंकि उन्हींके सहारे हमें नवएशियाका निर्माण करना है।

एशियाई सम्मेलनमें आये हुए प्रतिनिधियोंको दी गयी दावतमें भाषण करते हुए नेहरूजीने कहा कि एशियाई सम्मेलनका बहुत बड़ा महत्व है। एशिया बहुत बड़ा महाद्वीप है और यद्यपि उसके विभिन्न भाग एक दूसरेसे बहुत भिन्नता रखते हैं, किन्तु फिरभी इनमें एक ऐसा समानभाव है जिसने सबको एक दूसरेके साथ बाँध रखा है, जिसका प्रमाण यह है कि एक साधारण निमंत्रणपर एशियाई देशोंके इतने अधिक प्रतिनिधि यहाँ आकर एकत्र हो गये।

दूसरी महत्वपूर्ण बात यह है कि इस सम्मेलनसे भारतमें बड़ा उत्साह पैदा हुआ है। सम्मेलनमें राजनीतिक मामलोंको अलग रखकर केवल आर्थिक और मजदूरोंके मामलोंपर विचार हुआ है। इस सम्मेलनके फल-स्वरूप एशियाई सम्बन्ध सम्मेलन नामक एक संस्था स्थापित हुई है और मुझे आशा है कि यह संस्था बराबर उन्नति करेगी।

भारतके सम्बन्धमें नेहरूजीने कहा कि भारत और एशियाके अन्य देश इस समय सभी तरहकी कठिनाइयोंसे गुजर रहे हैं, परन्तु सभी जगह महान् रचनात्मक शक्तियां काम कर रही हैं। भारतको पंजाब तथा अन्यस्थानोंके भयानक उपद्रवोंके कारण वहाँसे आये हुए ३० लाख शरणार्थियोंका फिरसे बसाने और उनके लिये सभी व्यवस्थाएँ करनेका काम करना पड़ा है और लगभग इतनी ही संख्यामें भारतसे मुसलमानोंको पाकिस्तान भेजनेका प्रबन्ध करना पड़ा है। यह कार्य ऐसा था, जिसमें भारतकी सरकारको बहुत शक्ति और साधन खर्च करने पड़े हैं। यदि इन शक्तियों और साधनोंका ह्रास इस काममें न होता तो भारत अपनी नयी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके बाद जनताके हितके बहुत रचनात्मक कार्य कर सकता था। परन्तु इस कठिनायीके होते हुए भी हमें देशका उत्पादन और उसकी समृद्धि बढ़ानेकी योजनाएँ पूरी करनी हैं। इस तरहसे भारतको अनेक समस्याएँ हल करनी हैं। कुछ समस्याएँ तो ऐसी हैं जिन्हें कई पीढ़ी पहिलेही हल करलेना चाहिये था। परन्तु हमें उन समस्याओंका हल कर लेना है। हमारा विश्वास है कि भारत वर्तमान सभी बाधाओं और कठिनाइयोंको दूरकर अपना पूर्व गौरव-पूर्णपद प्राप्त करेगा और साथ ही एशियाके अन्य देशोंके साथ सहयोग करते हुए एशियाके उत्थानमें पूरा भाग लेगा।

एशियाने प्राचीन समयमें अनेक महत्वपूर्ण कार्य किये हैं। इधर पिछले ३०० वर्षोंसे उसने कोई उल्लेखनीय कार्य नहीं किया था। परन्तु अब उसकी यह निष्क्रिय दशा समाप्त हो रही है और अब फिर वह शक्तिशाली ढंगसे कार्यक्षेत्रमें आगे बढ़नेको तैयार है। एशियाके सभी बड़े और छोटे देश अँगड़ाई ले रहे हैं और उस स्थिति पर पहुँच रहे हैं जब कि पश्चिमके देश एशियाको अलग रखकर कोई भी समस्या हल नहीं कर सकेंगे।

पाकिस्तानके झगड़े
और उनका हल

देशके साम्प्रदायिक उपद्रवों और भारत तथा पाकिस्तानके बीच झगड़ों और उनके हलके सम्बन्धमें नेहरूजीने अपने कई भाषणोंमें कहा कि साम्प्रदायिक झगड़ोंके सम्बन्धमें जिन्होंने भारत और पाकिस्तानके अलग होने पर भी विकट रूप अभी तक बना रखा है, पक्षपात रहित होकर बुद्धि-विवेकके साथ विचार करनेकी आवश्यकता है। भारत और पाकिस्तानके झगड़ोंको बल प्रयोग द्वारा हल नहीं किया जा सकता जो कोई भी ऐसा करेगा वह और भी उलझनें तथा कठिनाइयाँ पैदा करेगा।

देशका राजनीतिक बँटवारा करनेसे ये वास्तविक बातें नहीं बदल सकती, जो दोनों राज्योंमें अब भी समान हैं। भारत और पाकिस्तानका एक ही इतिहास है। इन दोनोंका आर्थिक सम्बन्ध भी समान है, जो इस समय भले ही भङ्ग हो गया हो, पर उसे फिर शीघ्र ही स्थापित करना होगा। जो क्षणिक जोश में नहीं बह गया है वह सहजमें ही यह समझ लेगा कि अन्तमें दोनोंको फिर एक होना है। मुझे इसका पूरा निश्चय है कि दोनोंमें एकता होगी और यह एकता बल-प्रयोग द्वारा नहीं बल्कि संसारके घटना-क्रमसे होगी और दोनोंको पारस्परिक स्वार्थोंका ध्यान करना होगा। इसलिये एक दूसरेकी आलोचना या दोषा-रोपण बन्द होना चाहिये। दोनोंमें सद्भाव पैदा करनेके लिये ईमानदारीसे प्रयत्न होना चाहिये। इस समय अवश्य दोनों

देशोंमें तनातनीके सम्बन्ध हैं, पर इससे यह स्थिति नहीं बदल जाती कि हम दोनों एक दूसरेके पड़ोसी हैं और दोनोंकी स्थिति ऐसी है कि एक दूसरेसे अलग नहीं रह सकते। अब दो ही उपाय हैं, या दोनों आपसमें मिल जायँ और या युद्ध करें। यदि युद्ध भी हो, तो भी वह सदाके लिये नहीं हो सकता और उसके बाद फिर दोनोंको मिलकर एक होना होगा। सम्भव है कि एक देश दूसरे पर हमला करें और बल-प्रयोगसे उस पर कब्जा भी कर ले, पर वह दोनों देशोंको मिलना नहीं होगा। वर्तमान संसारकी गति ऐसी है कि बड़ी-बड़ी समस्याएँ बल-प्रयोगके द्वारा हल नहीं हो सकतीं। भारत और पाकिस्तानकी समस्याएँ शान्ति-पूर्ण उपायोंसे हल होनी चाहिये, नहीं तो समस्यायें और भी जटिल तथा गम्भीर होती जायँगी।

अब समय आ गया है कि कोई भी ऐसा शब्द न कहे, जिससे दोनों देशोंमें दुर्भाव पैदा हो। ऐसा भी अवसर आ जाता है जब कड़े शब्दोंमें उत्तर देना पड़ता है, पर हमें अपनेको रोककर बातें कहनी चाहिये और संयमसे काम लेना चाहिये, क्योंकि अन्तमें बुद्धिके साथ विचार करनेसे ही सहायता मिलती है। गत दो वर्षोंमें भारतमें बहुत अप्रिय घटनाएँ हुई हैं, मगर पिछले चार-पाँच महीनोंमें तो भयानक काण्ड हुए हैं। बहुत रक्तपात हुआ और देशने अकथ कष्ट उठाये। पर इससे हमारे विवेक पर छाया नहीं पड़नी चाहिये। भारतीय जनताको पक्षपात-रहित होकर सोचना चाहिये कि उसने क्या किया है और क्या करना चाहिये था। जो लोग जोशमें आकर काम करते हैं, उन्हें अन्त तक पछताना पड़ता है। लोगोंका कर्तव्य है कि वे अपनी गलतियाँ समझें। किसी राष्ट्रका शत्रुके दमनोंसे नहीं बल्कि अपने ही कुकर्मोंसे नाश होता है।

प्रत्येक व्यक्तिको चाहे वह हिन्दू हो या मुसलमान इस देश में रहनेका अधिकार है और इस राज्यका कर्तव्य तथा प्रयत्न होगा कि उसकी तथा उसके हितोंकी रक्षा करे। जो मुसलमान इस देशको वास्तवमें अपना देश समझते हैं और बाहरसे किसी की सहायताके लिये नहीं ताकते, उनका हम भारतमें रहनेका स्वागत करते हैं, किन्तु साथ ही जो लोग देशके प्रति वफादारी नहीं रखते, उनके लिये इस देशमें कोई जगह नहीं है और सरकार उन्हें यहाँसे बाहर जानेमें पूरी सुविधा देगी।

यों मुसलमानोंने भी भारतके स्वाधीनता-संग्राममें गौरवपूर्ण भाग लिया है। मैं डाक्टर अन्सारी, हकीम अजमल खाँ, जैसे मुसलमानोंके साथ रह चुका हूँ काम कर चुका हूँ। उन्होंने देशके लिये बहुत काम किया। परन्तु मुस्लिम लीगने बराबर घृणाका प्रचार किया है। इसके विपरीत कांग्रेसने सदा दो राष्ट्रके सिद्धान्तको माननेसे इनकार किया है और उसमें उसे जनताका समर्थन भी प्राप्त रहा है। मुस्लिम जनताको ठंडे दिलसे लीगकी कार्रवाइयों पर गौर करना चाहिये और साथ ही कांग्रेसकी कार्रवाइयों पर भी और यह देखना चाहिये कि आम जनताका हित किसमें है। कांग्रेस बिना किसी साम्प्रदायिक भेदभावके सबका हित चाहती है। किसी भी सम्प्रदायका विशेष हित या पक्षपात करना उसका सिद्धान्त कभी नहीं रहा। कांग्रेस न तो हिन्दू राजकी समर्थक है और न मुस्लिम राजकी। हिन्दू राज स्थापित करनेकी जो लोग बात करते हैं वे मुस्लिम लीगकी ही इच्छाकी पूर्ति करते हैं। मुस्लिम लीग यही तो चाहती है कि इस प्रकारकी साम्प्रदायिकता-पूर्ण बात करने वाले कुछ लोग हो जायँ और फिर वह इसका लाभ भारत, कांग्रेस और हिंदुओं के विरुद्ध करनेमें वह उठावे। इसमें मुस्लिम लीगकी ही विजय

है। यह ऐसी विजय है जिसकी तुलनामें पाकिस्तानका प्राप्त करना बहुत कम महत्व रखता है। जिन सिद्धान्तोंका अतीतमें आप जोरोंसे विरोध करते आये हैं उन्हें न तो आपको स्वीकार करना चाहिये और न उनका अनुसरण ही करना चाहिये।

साम्प्रदायिकताकी वृद्धि और तज्जन्य बर्बरताओंके कारण भारतकी प्रतिष्ठाको बड़ी हानि पहुँच रही है। संसारके राष्ट्रोंमें भारतको जो प्रतिष्ठा और सम्मान प्राप्त होने लगा था वह तेजीके साथ गायब होता जा रहा है। विदेशोंमें रहने वाले भारतीय प्रतिनिधियोंको यह सुननेको मिलने लगा है कि भारत की प्रतिष्ठा घट रही है। साम्प्रदायिक दंगोंमें होने वाले नृशंस अत्याचारोंकी कहानियाँ विदेशोंमें प्रचारित हो रही हैं, और वहाँके लोग उस सभ्यता और संस्कृतिके अस्तित्वमें सन्देह करने लगे हैं जिसके लिये भारत सदैव प्रसिद्ध रहा है। संयुक्त राष्ट्र सङ्गठनमें भारतके प्रतिनिधियोंने सभी उच्च सिद्धान्तोंका पूर्ण समथन प्राप्त करके यूरोप तथा एशियाके अन्य देशोंके साथ नया सम्बन्ध स्थापित करनेमें सफलता प्राप्तकी थी। एशियाके लोग भारतकी ओर अपने समर्थक और नेताके रूपमें देखने लगे थे। किन्तु अभी हालमें हमारे देशमें साम्प्रदायिक दंगोंके रूपमें जो कुछ घटित हुआ है, उससे हममें उनका विश्वास विचलित हो उठा है। अभी कुछ ही समय पूर्व एशियाके लोग दिल्लीमें एशियाई सम्मेलनमें उपस्थित हुए थे और उस अवसर पर भारत तथा अन्य देशोंके बीच मित्रताके नये सम्बंध स्थापित हुए थे। सम्मेलनमें इंडोनेशियाकी तरह ऐसे अनेक देशोंके प्रतिनिधि थे जहाँ मुस्लिम राज्य है, परन्तु फिर भी उन प्रतिनिधियोंको या भारतीयोंको एक दूसरेके प्रति कोई सन्देह नहीं हुआ। उन लोगोंने भारतके प्रति पूर्ण मैत्री और विश्वासका

भाव प्रकट किया और भारतीयोंने भी उनके प्रति भी वैसा ही भाव प्रदर्शित किया। इसका कारण स्पष्ट था। विदेशी प्रतिनिधियोंको विश्वास था कि भारतीयोंमें अन्य लोगोंके प्रति कोई दुर्भाव नहीं है। हमें अपनी वही परम्परा कायम रखनी है और संसारको यह दिखा देना है कि भारतीय लोग अपने आदर्श और सिद्धान्तोंसे विचलित नहीं हैं।

हमने भारतकी समृद्धि तथा प्रत्येक व्यक्तिके जीवनको वास्तवमें रहने लायक बनानेके लिये अपने सामने बड़ी-बड़ी योजनाएँ रखी थीं। कांग्रेसके लोग यह कभी नहीं चाहते कि विदेशी प्रभुताका स्थान अराजकता और अशान्ति ले ले। भारत गरीब देश है। हमारे लिये प्रत्येक व्यक्तिके लिये अच्छा भोजन और रहनेके मकानकी व्यवस्था करना ही बहुत बड़ा काम है। हमने भारतके उद्योगीकरणकी योजना बनायी थी, सिंचाईकी नयी-नयी योजना बनाई थी। इन योजनाओंके पूरा होने पर जनताके रहन-सहनका मान ऊँचा हो जाता। परन्तु साम्प्रदायिक दंगोंके कारण ये योजनाएँ कार्यान्वित न हो सकी। सरकारकी शक्तियाँ तथा साधन जो भारतको अधिक सम्पन्न बनानेमें प्रयुक्त होते, लोगोंको एक दूसरेकी हत्या करनेसे रोकनेमें व्यय हो रहे हैं।

इतिहासमें इसके पहले भारत ऐसे भारी सङ्कटोंके बीच होकर कभी नहीं गुजरा था। स्थितिकी गम्भीरता इसी बातसे नहीं स्पष्ट होती कि लोगोंकी हत्याएँकी गई हैं और मकान जला दिये गये हैं बल्कि इससे प्रकट होता है कि भारतका भविष्य ही खतरेमें पड़ गया है। नयी प्राप्त हुई इस स्वाधीनताका क्या अर्थ होगा जब कि शान्ति और सुरक्षा ही नहीं है। अतीतमें मैं अपने हृदयमें बड़ा गर्व रखकर भारतके उच्चतम शिखर पर पहुँचनेका स्वप्न देखा करता था। लेकिन मेरा सिर लज्जासे झुक

जाता है जब कि मैं देखता हूँ कि मेरे ही देशवासी अमानुषिक काण्ड कर रहे हैं। अंग्रेजोंसे लड़ाई हमने लड़ी वह गौरवपूर्ण तरीकेसे और सफलताके साथ लड़ी गयी, किन्तु स्वाधीनता मिलनेके बाद हमारे देशके लोग आपसमें बड़े ही लज्जित तथा असम्मान जनक ढङ्गसे लड़ने लगे और एक दूसरेका गला काटने लगे। यह हमारे लिये, हमारे सम्मानित देशके लिये बड़े कलंक की बात है। हम चाहते हैं कि देशकी ख्यातिमें इससे बट्टा न लगे। हमें साम्प्रदायिकताके विषको देशसे दूर करना होगा। हम जानते हैं कि अपने भाइयोंके प्रति किये गये जघन्य कृत्योंसे हमारे देशवासियोंके दिल भरे हैं, किन्तु यह स्मरण रखना चाहिये कि बदलेकी भावनासे अग्नि और प्रज्वलित होगी हम एक दूसरेका गला काटने पर उद्यत रहेंगे, देशमें शांति कभी नहीं होगी और हम अपने कष्टोंको और अधिक बढ़ाते जायँगे।

इसलिये हमें साम्प्रदायिकतासे अपना दिल हटाना है और अपना ध्यान राष्ट्र-निर्माणके कार्योंमें लगाना है। यही हमारी समस्याओंका एकमात्र हल है। स्वतंत्र लोगोंकी हैसियतसे हमारी जिम्मेदारियाँ जो बढ़ गई हैं उन्हें पूरी करना है। हमारी सरकार जनताकी सरकार है, उसका एकमात्र ध्येय पीड़ित जनताके कष्टोंको दूर करना है और अन्य देशोंके स्वतंत्र मनुष्योंकी भाँति उन्हें रखना तथा सुखी बनाना है। यह ऐसा भारी काम है, जिसे पूरा करनेके लिये सरकारके साथ पूरा सहयोग करना है। पिछले २७ वर्षोंसे हमारा ध्येय देशमें स्वतंत्र और लोकतंत्रात्मक राज्यकी स्थापना करना रहा है। हमारा यह ध्येय बहुत हद तक पूरा हो गया है। परन्तु इस ध्येयकी प्राप्तिके साथ-साथ नयी समस्याएँ उठ खड़ी हुई हैं। मैंने यह आशा की थी

कि १५ अगस्तके बाद नये युगका प्रादुर्भाव होगा, पर देशकी अभागी घटनाओंके कारण हम अपनेको ऐसे दलदलमें घिरा हुआ पाते हैं कि यदि हमने उसे पार न किया, तो हमें लौटकर फिर उसी स्थानमें जा पड़ना होगा जहाँ हम पहिले थे। हमें पूरी शान्ति रखना है और आर्थिक कठिनाइयोंके दूर करने, चीजोंका उत्पादन बढ़ाने और इस सबसे ऊपर आगे आने वाले खतरोंसे अपने देशको बचाना है। शांति अकेली पुलिस और फौज कायम नहीं रख सकती। अमन-आमान कायम रखनेके लिये सरकारके साथ जनताका सहयोग आवश्यक है। विदेशोंमें आपकी सरकारकी ख्याति है। जिसने थोड़े समयमें और जिस प्रभावशाली ढंगसे आपकी सरकारने देशमें शांति स्थापितकी है और अन्य बड़ी-बड़ी उलझनदार समस्याएँ हलकी हैं, उन्हें देखकर अन्य देशोंके पर्यवेक्षक चकित रह गये हैं। इतनी अधिक संख्यामें आये हुए शरणार्थियोंकी व्यवस्था जो हमनेकी है और निष्क्रमणार्थियोंको सुरक्षित रूपसे भेजनेका हमने जो प्रबंध किया है, उसकी सराहना विदेशोंमें सहायता सम्बंधी कामका अनुभव रखने वालोंने मुक्त कण्ठसे की है। ऐसी स्थितिमें अपने देशवासियोंसे मेरा अनुरोध है कि साम्प्रदायिकता से वे ऊपर उठें और किसी सम्प्रदायका विशेष ख्याल न कर समस्त देशके हितकी दृष्टिसे सब बातें सोचें और उसी दृष्टिसे आचरण करें। यही साम्प्रदायिक समस्याका हल है और इसी मार्गका अनुसरण कर हम अपनी नयी प्राप्त हुई स्वतंत्रताकी रक्षा कर सकेंगे।

इस सम्बंधमें पहिला काम है हर प्रकारसे उपद्रवका अंत करना। दूसरी बात उपद्रव-ग्रस्त लोगोंको बचाना और जबर-दस्ती ले जायी गयी स्त्रियोंको उनके घर पहुँचाना है। मेरी तो

यही धारणा है कि वर्तमान उपद्रव थोड़े ही दिनोंमें समाप्त हो जायँगे। कुछ भी हो आतंकित होनेकी बिलकुल आवश्यकता नहीं है। आतङ्कित व्यक्ति बेकार नागरिक होता है और वह दूसरोंके लिये भी भय स्वरूप हो जाता है। उपद्रवियोंने जो कुछ किया है, वह राजनीतिक उद्देश्योंसे किया गया है। मैं इस सम्बंधमें और अधिक न कहकर केवल इतना ही कहूँगा कि यदि राजनीतिका खेल इस तरहसे खेला जायगा, तो वह विशुद्ध राजनीति न रहकर जङ्गली लोगोंके युद्धके समान हो जायगा, जो मनुष्योंकी बस्तीको रेगिस्तान बना देता है। यदि मनुष्यमें लेशमात्र भी समझ है, तो उसे सोचना चाहिये कि उसका राजनीतिक उद्देश्य चाहे जो भी हो उसकी पूर्तिका यह जङ्गली तरीका नहीं है। लोग अपने राजनीतिक उद्देश्यकी पूर्तिके लिये सङ्घर्ष अवश्य करें पर मनुष्यकी भांति और मानवोचित सम्मान एवं प्रतिष्ठाके साथ।

जहाँ तक भारतका सम्बंध है हम कोई ऐसी बात नहीं करने देंगे, जो हमें पाशविकताकी ओर ले जाय। हम मनुष्यता और सभ्यताके स्तरसे नीचे नहीं गिरेंगे यद्यपि हमारे साथ ऐसे व्यवहार किये गये हैं, जिन्हें सुनकर संसारके निष्पक्ष लोग आश्चर्य-चकित हो जाते हैं। परन्तु हमें अपने देशवासियोंको ऐसे जघन्य कृत्योंसे बचाना है। हम किसी ऐसे राज्यकी कल्पना नहीं कर सकते जो किसी एक सम्प्रदायका हो। किसी भी व्यक्तिका केवल इसलिये विशेष अधिकार नहीं होना चाहिये कि वह किसी विशेष सम्प्रदायका है। हम अपने देशमें लोकतंत्र राज्य चाहते हैं। ज्यों ही हमें वर्तमान कठिनाइयोंसे मुक्ति मिलेगी हम लोकतन्त्रवादी राज्यकी तरह काम करने लगेंगे।

—::※::—

काश्मीरका प्रश्न

पण्डित जवाहरलाल नेहरूने भारतीय विधान परिषद्में काश्मीरके संबंधमें एक वक्तव्य देते हुए कहा कि :—मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि काश्मीरके संबंधमें भारत सरकारने जो कार्रवाईकी है वह बिलकुल सीधी और बिना किसी छल-कपट के रही है और मैं संसारके सम्मुख उसका औचित्य सिद्ध कर कर सकता हूँ। हमारे पास यह सिद्ध करनेके लिए पर्याप्त प्रमाण है कि काश्मीर और जम्मू प्रान्त—दोनों पर जो आक्रमण किया गया था वह पाकिस्तान सरकारके उच्च अधिकारियों द्वारा जानबूझ कर संगठित किया गया था। उन्होंने कबायलियोंको एकत्रित होनेमें सहायता पहुँचाई, उन्होंने उन्हें युद्धकी सामग्री दी, उन्होंने लारियाँ, पेट्रोल और अफसर दिये। वे अभी तक ऐसा करते जा रहे हैं। वस्तुतः उनके उच्च अधिकारियोंने खुले आम इसकी घोषणाकी है।

इससे इस निष्कर्ष पर पहुँचे बिना नहीं रहा जा सकता कि पाकिस्तानके अधिकारियों द्वारा काश्मीर पर किया गया आक्रमण सुचारु रूपसे आयोजित और संगठित था और उनका उद्देश्य बलपूर्वक राज्य पर अधिकार कर लेने और उसके बाद यह घोषणा कर देनेका था कि काश्मीर पाकिस्तानमें सम्मिलित हो गया है। यह कार्य काश्मीरके प्रति ही नहीं बल्कि भारतीय संघ के प्रति भी शत्रुतापूर्ण था।

पाकिस्तानकी सरकारने हमारी सेनाओं और आक्रमणकारियोंको एक साथ काश्मीरसे हटा लेनेका प्रस्ताव रखा

है। यह एक विचित्र प्रस्ताव है और इसके केवल यही अर्थ हो सकते हैं कि आक्रमणकारी वहाँ पर पाकिस्तान सरकारके ही कहनेसे मौजूद हैं।

हम लुटेरोंके साथ इस प्रकारका व्यवहार नहीं कर सकते जिन्होंने काश्मीरके बहुतसे लोगोंको मार डाला और काश्मीर को बर्बाद कर देनेका प्रयत्न किया। वे कोई राज्य नहीं है—चाहे उनके पीछे किसी राज्यका हाथ ही क्यों न हो।

मुझे इस बातकी प्रसन्नता है कि मुझे इस सभाको उन घटनाओंके समझानेका अवसर मिला जिनके कारण काश्मीरके मामलेमें हमें फौजी हस्तक्षेप करना पड़ा तथा उस राज्यमें जो गम्भीर समस्यायें उठ खड़ी हुई हैं उनके सम्बन्धमें भारत सरकारका क्या रुख है।

सभाको यह बात मालूम है कि इस वर्ष १५ अगस्तको शाही संरक्षता समाप्त हो जानेके पश्चात काश्मीर किसी भी उपनिवेशमें सम्मिलित नहीं हुआ। राज्यके निर्णयमें हम लोगोंको बड़ी दिलचस्पी थी। काश्मीरकी सीमायें तीन देशों से मिली हुई हैं—सोवियट रूस, चीन और अफगानिस्तान। अपनी भौगोलिक स्थितिके कारण काश्मीर भारतकी सुरक्षा और उसके अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्कसे बहुत अधिक सम्बन्धित है। आर्थिक दृष्टि से भी काश्मीर भारतके साथ बहुत अधिक सम्बन्धित है। मध्य एशियासे भारतमें जो काफिले व्यापार करने आते हैं वे काश्मीर राज्यसे ही होकर आते हैं।

फिर भी हमने काश्मीरके ऊपर भारतीय सङ्घमें सम्मिलित होनेके लिए जरा भी दबाव नहीं डाला क्योंकि हम यह अनुभव करते थे कि काश्मीर बड़ी विकट स्थितिमें है। हम ऊपरसे सम्मिलन नहीं चाहते थे बल्कि हम चाहते थे कि हमारा सम्बन्ध

वहाँकी जनताकी इच्छाके अनुकूल हो। वास्तवमें हमने शीघ्र निर्णयको प्रोत्साहन नहीं दिया। यथास्थित समझौते के सम्बन्धमें भी हमने कोई जल्दी नहींकी बल्कि मामला विचाराधीन था। १५ अगस्तके बादही काश्मीरने पाकिस्तानके साथ यथास्थित समझौता कर लिया था।

बादमें हमें मालूम हुआ कि पाकिस्तानके अधिकारियों की ओरसे काश्मीर पर दबाव डाला जा रहा है और जनता की आवश्यकताकी चीजें भी काश्मीर नहीं जाने दी जातीं—जैसे कि अनाज, नमक, चीनी और पेट्रोल। इस प्रकार काश्मीर को आर्थिक दृष्टिसे दबा देनेका प्रयत्न किया जा रहा था ताकि वह पाकिस्तानमें शामिल हो जाय। दबाव गंभीर था क्योंकि काश्मीर इन चीजोंको यातायात की कठिनाइयोंके कारण भारतसे प्राप्त नहीं कर सकता था।

सितम्बरके महीनेमे समाचार मिला पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त के कबायलियोंका जमाव हो रहा है और वे काश्मीरकी सीमा पर भेजे जा रहे है। अक्टूबरके आरम्भमें घटना-चक्रने गम्भीर रूप धारण किया। आक्रमणकारियोंके सशस्त्र गिरोह पश्चिमी पंजाबके आस-पासके गांवोंसे चलकर जम्मू प्रान्त में घुस गए और उन्होंने वहाके निवासियोंकी भारी संख्यामें हत्याएँ, लूटमार और गांवों और कस्बोंको जलाना आरम्भ किया। इन क्षेत्रोंके शरणार्थियोंका जम्मू में ताँता लग गया।

जम्मू प्रान्तके सीमावर्ती क्षेत्रके निवासियोंने, जो प्रधानतः हिन्दू और राजपूत है, बदलेकी कार्रवाई शुरूकी और उन्होंने उस क्षेत्रमें रहनेवाले मुसलमानोंको निकाल बाहर किया। सीमा पर होनेवाले इस संघर्षमें दोनों तरफके लोगोंने बहुत भारी संख्यामें गावोंको नष्ट कर दिया अथवा जला दिया।

पश्चिमी पञ्जाबकी तरफसे आनेवाले आक्रमणकारियोंकी संख्या बढ़ गयी और वे समूचे जम्मू प्रान्तमें फैल गए। काश्मीर राज्यकी सेना, जिसे अनेक स्थानों पर आक्रमणकारियोंका सामना करना पड़ा, शीघ्र ही छोटी-छोटी टुकड़ियोंमें खंडित हो गयी और उत्तरोत्तर लड़ाकू सेनाके रूपमें उसका कोई अस्तित्व ही नहीं रह गया। आक्रमणकारी सुसङ्गठित कुशल अफसरोंसे युक्त तथा आधुनिक शस्त्रास्त्रोंसे सुसज्जित थे। वे जम्मू प्रान्तके काफी बड़े भागको, विशेषतः पूंचके क्षेत्रमें, अपने अधिकारमें कर लेनेमें सफल हुए। पूँच नगर, मीरपुर, कोटली तथा कुछ अन्य स्थानोंमें रक्षक दलोंने आक्रमणकारियों से लोहा लिया, और आक्रमणकारी उन पर अधिकार नहीं कर सके।

प्रायः इसी समय राज्यके अधिकारियोंने हमसे शस्त्रास्त्र तथा गोला बारूद भेजनेके लिए अनुरोध किया। हमने उनके इस अनुरोधको स्वीकार कर लिया। किन्तु वस्तुतः घटना-चक्र के और भी गम्भीर रूप धारण कर लेने तक कोई रसद-काश्मीर को नहीं भेजी गई इस स्थितिमें भी काश्मीरके भारतीय यूनियन में शामिल होनेकी कोई बात नहीं चलायी गयी।

इसी बीच काश्मीर राज्यको लोकप्रिय संस्था काश्मीर नेशनल कानफरेन्सके नेता शेख मोहम्मद अब्दुल्ला जेलसे रिहा कर दिए गए थे। हमने उनसे तथा महाराज काश्मीरके प्रतिनिधियोंसे काश्मीरमें उत्पन्न हुई परिस्थतियों पर विचार-विनिमय किया और इन दोनोंसे हमने यह स्पष्ट कर दिया कि यद्यपि हम इसका स्वागत करेंगे कि काश्मीर राज्य भारतीय यूनियनमें शामिल हो, किन्तु इस सम्बन्धमें कोई जल्दबाजी करना या कोई दबाव डालना नहीं चाहते, बल्कि वस्तुतः हम

इस बातकी प्रतीक्षा करेंगे कि भारतीय यूनियनमें शामिल होने का निर्णय काश्मीरकी जनता करे। स्वयं शेख अब्दुल्लाकी भी यही राय थी।

२४ अक्टूबरको हमने सुना कि सशस्त्र आक्रमणकारियोंके बड़े-बड़े दल जिनमें सीमाप्रान्तके कबायली तथा सेनाके अवकाशप्राप्त अफसर एवं सैनिक भी शामिल हैं। मुजफ्फराबाद के भीतर घुस गए हैं और वे श्रीनगर पर धावा बोल रहे हैं।

इन आक्रमणकारियोंने पाकिस्तान प्रदेशको पार किया था और वे ब्रेनगन, मशीनगन, तोप, आग उगलने वाले टैंक आदि से सुसज्जित थे और उनको यातायात के लिए गाड़ियाँ भी प्राप्त हुई थीं। वे श्रीनगरकी घाटीमें. लूटपाट, आगजनी और हत्याएँ करते हुए तेजीके साथ बढ़ रहे थे। हमने २५ और २६ अक्टूबरकी रक्षा कमेटीकी बैठकमें काश्मीरकी इस परिस्थिति पर मनोयोग पूर्वक विचार किया। २६ अक्टूबरके सवेरे स्थिति यह थी कि आक्रमणकारी श्रीगनरकी ओर बढ़ रहे थे और काश्मीरमें कोई ऐसा फौजी दल नहीं था जो आक्रमणकारियों का बढ़ाव रोक देनेमें समर्थ हो।

इस स्थितिमें महाराज काश्मीर तथा शेख अब्दुल्ला दोनों ने यह अनुरोध किया कि भारतीय यूनियनमें शामिल होने के लिये काश्मीरकी प्रार्थना स्वीकार कर ली जाय और यह कि भारतीय यूनियन सशस्त्र हस्तक्षेप करे। इस सम्बन्धमें तात्कालिक निर्णयकी आवश्यकता थी। और वस्तुतः अब यह सर्वथा स्पष्ट हो गया है कि अगर हमने निर्णय करनेमें २४ घन्टेका भी विलम्ब किया होता तो श्रीनगरका पतन हो गया होता और उसे भी मुजफ्फराबाद, बारामूला, तथा अन्य स्थानों का सा भाग्य हुआ होता।

यह साफ जाहिर था कि हम किसी भी हालतमें इन पाशविक तथा गैर जिम्मेदार आक्रमणकारियोंके हाथों काश्मीरकी तबाहीको मंजूर नहीं कर सकते थे। ऐसा करना अधम कोटकी धर्मान्धताके सामने आत्मसमर्पण करनेके बराबर हुआ होता। उस स्थितिमें काश्मीरके मामलेमें दखल देना कोई आसान काम नहीं था और वह खतरोंसे भरा हुआ था। फिर भी हमने इस खतरे का सामना करनेका निर्णय किया। क्योंकि इसके अलावा अगर हमने किसी दूसरे उपाय से काम लिया होता तो इसका मतलब होता काश्मीरकी बरबादी और भारतके लिये खतरा।

फिर भी भारतीय यूनियनमें शामिल होनेके लिये काश्मीर के अनुरोधको स्वीकार करते हुए हमने महाराजसे यह स्पष्ट कर दिया कि उनकी सरकार भविष्यमें अनिवार्यतः लोकमत के अनुसार संचालित होनी चाहिये और यह अस्थायी सरकार शेख अब्दुल्लाके नेतृत्वमें कायमकी जाय। इसके अलावा हमने यह भी स्पष्ट कर दिया कि काश्मीरमें अमन-कानून कायम होते ही यूनियनमें काश्मीरके शामिल होनेका निर्णय लोकमतके अनुसार किया जाय।

—:*:—

स्वतंत्र भारत और देशकी एकता

नेहरूजीने देशके स्वतन्त्र होनेके साथही उसका विभाजन भी हो जानेके बाद उसकी फिर एकताके सम्बन्धमें अपने विचार प्रकट करते हुए कहा कि यह सत्य है कि भारतमें ब्रिटिश शासन के अन्तसे साम्राज्यवादका अंत हो गया। इस परिवर्तनका यह फल होगा कि मिश्र, फिलस्तीन, अफगानिस्तान तथा अन्य देश, जो कि ब्रिटेन तथा भारतके रास्तेमें पड़ते हैं और जिसके कारण ब्रिटिश अत्याचारका शिकार उन्हें भी होना पड़ता था, साम्राज्यशाही पंजेसे मुक्त हो जायँगे।

यह सही है कि भारतने स्वतंत्रता प्राप्त कर ली है लेकिन इसकी कीमत हमें चुकानी पड़ी है। इस ढङ्गसे सोचने पर कहा जा सकता है कि हमारा स्वप्न पूर्ण रूपसे प्रतिफलित हुआ है। फिर भी हमने एक बहुत बड़े लक्ष्यको प्राप्त किया है, इसलिये हमें खुशी मनानी चाहिये इसमें कोई शक नहीं कि सभी लोग इस विभाजनसे दुखी हैं और पूछते हैं कि १५ अगस्तके बाद क्या होगा। आखिरकार भूतकालमें हमने काफी कष्ट सहे हैं। हमने अपने शत्रुओं अथवा अपनी कमजोरियों से डरना नहीं सीखा है। जिन लोगोंने विभाजन प्रतिपादित किया, उन्होंने सबसे बुरा काम यह किया कि विभिन्न सम्प्रदायों के बीच हिंसा और घृणा फैला दी। उन्होंने बहुत-सी ऐसी चीजें की जिनकी निन्दाकी जानी चाहिए। हम उन्हें दोष नहीं दे सकते। लेकिन मैं सोचता हूँ कि इसकी जिम्मेदारी उन्हीं लोगों पर है, जिन्होंने विभाजन का नारा लगाया और लोगोंमें

कटुता फैलायी। इसके अत्यन्त खतरनाक नतीजे हो सकते हैं, क्योंकि राजनीतिक मतभेद खत्म हो सकते हैं, पर साम्प्रदायिक कटुता मुश्किलसे मिटती है। हमें आशा है कि हम इसे विजय करने में समर्थ होंगे।

भारतके प्रस्तावित विभाजनके सम्बन्धमें एक महत्वपूर्ण बात हमारे सामने आई और वह यह कि हम स्वतन्त्रताके साथ एकता भी चाहते हैं लेकिन प्रश्न यह है कि यह एकता किस प्रकार की होनी चाहिये—जब कि लोगोंके हृदयोंमें इतनी कटुता विद्यमान है तो भला किस प्रकारकी एकता प्राप्त की जा सकती है। 'भारत एक होना चाहिये'—इस आशयके केवल प्रस्तावोंके पास कर देनेसे तो भारत एक हो नहीं सकता। हमें यहाँ मानव-समूहसे भुगतना है। केवल प्रस्तावोंके पास कर देनेसे लोगोंके हृदयोंमें परिवर्तन नहीं हो सकता। जनताके लिए हम गत ३० वर्षोंसे स्वतन्त्रता प्राप्त करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। महात्मा गांधीने राजनीतिमें जब प्रवेश किया, तब उनका लक्ष्य ही यह था कि लोगोंका मानसिक दृष्टिकोण बदल जाय और वे अपने दिमागसे भय निकाल दें तथा अपनेमें आत्म-निर्भरताकी भावना पैदा करें। यह हमारे लिए दुर्भाग्य की बात है कि कुछ लोगोंने अपने कार्यक्रममें घृणाके प्रचार को प्रमुख स्थान दिया।

अब प्रश्न यह है कि क्या होना चाहिये था? एक तरीका यह हो सकता था कि तलवारके जोरसे इसका मुकाबला किया जाय। इसका मतलब होता कि देशकी प्रगति रुक जाती। इससे हम अपने क्रोध अथवा कटुताकी प्यास भले ही बुझा लेते, किन्तु इससे देशका सर्वनाश हो जाता। इसका मतलब होता कि देशका आगामी बीस अथवा तीस सालके लिए गृह-

युद्धका शिकार हो जाना और बढ़ती हुई घृणाको रोकाना और भी मुश्किल हो जाता।

मैं इस बातको मानता हूँ कि भारतका विभाजन करना देशकी जनताके प्रति पाप करना है और इसके फलस्वरूप हमसे अलग होने वाले व्यक्तियोंकी ही हानि अधिक है, किन्तु यदि हम अपने साथ रखनेके लिए उन पर कोई जबर्दस्ती करते, तो इससे आपसी लड़ाई ही बढ़ती, जैसी कि गत १४ सालसे चीनमें हो रही है। इसलिए हम इसी नतीजे पर पहुँचे कि देशको एक करनेका एकमात्र उपाय यही है कि जो लोग हमसे अलग होना चाहते हैं, उन्हें अलग हो जाने दिया जाय। हम, ऐसी आशा करते हैं कि अलग होने वाले प्रदेशों तथा शेष भारतके बीच सौहार्दका सम्बन्ध स्थापित होगा। पाकिस्तानके लिए इसके सिवा दूसरा रास्ता है ही नहीं कि वह भारतके साथ निकट सम्बन्ध स्थापित करे। मैं नहीं कह सकता कि भविष्य में क्या होगा, लेकिन यह मेरा दृढ़ विश्वास है कि जो लोग हमसे आकर मिलना चाहते हैं, उन्हें अपनी इच्छानुसार कार्य करने की आजादी दी जाय और मिलनेका अवसर दिया जाय। इसमें सन्देह नहीं कि कुछ ही वर्षों बाद विभाजित हुए अंगको फिर आकर मिलना होगा, क्योंकि इसीमें उनका कल्याण संसारकी भावी राजनीतिक परिस्थितियों में होगा।

भारतकी वैदेशिक नीतिका जहाँ तक सम्बन्ध है, गत कुछ वर्षोंसे से ही भारतने अन्तर्राष्ट्रीय रङ्ग मञ्चमें अपना महत्वपूर्ण पार्ट अदा किया है। पूर्ण स्वतन्त्र होने पर हमारी अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति और भी मजबूत हो जायगी। हिन्देशियाके मामलेमें भारतने आवाज उठाई और संसारको इस ओर ध्यान देना ही पड़ा। जब मैंने हिंदेशियाके बारेमें वक्तव्य दिया तो उस

समय मैंने थोड़ा-सा इस ओर भी इशारा किया था कि भारतको कैसा कदम उठाना चाहिए। हमारा नया सिद्धान्त यह होना चाहिये कि किसी भी यूरोपियन अथवा अन्य विदेशी फौज को एशियाई भूमि पर बरदास्त नहीं किया जा सकता, उनको यहाँ अपना राजनीतिक प्रभुत्व कायम रखने नहीं दिया जा सकता। लगभग १०० वर्ष पहले यूरोपियन कौमोंने दक्षिण अमेरिकाके देशों पर अपना शासन स्थापित करने की कोशिश की थी। उस समय संयुक्तराष्ट्र अमेरिकाके राष्ट्रपति मनरोने अपना प्रसिद्ध सिद्धान्त प्रति-पादित किया कि कोई भी यूरोपियन कौम न तो अपनी फौज ही अमेरिकन भूमि पर रख सकता है और न उस पर आक्रमण ही कर सकती है। इसी प्रकारका सिद्धांत हमें भी प्रतिपादित करना होगा और हम ऐसा करके रहेंगे। हिन्दैशियाके बारेमें कुछ लोगोंने व्यर्थ प्रश्न छेड़ दिया कि गलती किसकी ओरसे हुई। मैं तो केवल यही पूछना चाहता हूँ कि डचोंको हिन्दैशिय में अपनी फौजें रखनेका क्या अधिकार है? इसका एकमात्र कारण यही हो सकता है कि डच जाति शस्त्र-बलसे हिन्दैशिया पर कब्जा जमाये रखना चाहती है।

इस समय हमारे कार्यक्रमका प्रमुख अंग उत्पादनका बढ़ाना होना चाहिये। जब तक राष्ट्रीय सम्पत्तिमें वृद्धि नहीं होती, तब तक जनताकी हालतमें सुधार नहीं हो सकता। ब्रिटेनने तो अब तक भारतमें एक "पुलिस-राज्य" कायम कर रखा था, जिसका मुख्य उद्देश्य यह था कि लोगोंसे कर वसूल किये जायँ और देशमें शांति एवं व्यवस्था कायम रखी जाय। हमारा लक्ष्य "पुलिस-राज्य" कायम करना नहीं है, बल्कि जनताके रहन-सहनको ऊँचा उठाना है। जो लोग इस समय हड़तालोंकी बात करते हैं, वे इस सङ्कटके समय देश

की पीठमें छुरा भोंकनेका प्रयत्न कर रहे हैं। उत्पादनके पश्चात हमें समान वितरण पर ध्यान देना होगा। उत्पन्न राष्ट्रीय सम्पत्ति का सब में समान रूपसे बटवारा होना चाहिये। केवल कुछ हाथोंमें इसका केन्द्रीकरण नहीं होना चाहिये। हमें राष्ट्र निर्माणकी ओर भी ध्यान देना है। हमारे सामने सिंचाई, खाद्य उत्पदनमें वृद्धि, बिजली आदिकी अनेक योजनाएँ हैं। दूसरी ओर हमारे पास वैज्ञानिकों एव यन्त्रविदों का भी भारी अभाव है।

गोबधको रोकनेका जहाँ तक सवाल है, हिन्दू महासभा कानूनके द्वारा गो वध रुकवानेका आन्दोलन कर रही है। मेरी भी यही इच्छा है कि गो-वध बन्द हो जाय। लेकिन कानून बननेसे ही समस्याका हल नहीं हो जायगा। भारतमें पशु-धन का अत्यन्त अभाव हो गया है। अमेरिका और ब्रिटेन यद्यपि मांसाहारी देश हैं, पर वे अपनी गायोंके साथ अच्छा व्यवहार करते हैं। इसलिये हमको राष्ट्र-निर्माणका कार्य पहले करना चाहिये और गौण कार्योंमें सलग्न होकर अपनी शक्तियोंको क्षीण नहीं करना चाहिये।

विद्यार्थियों और अध्यापकोंका उत्तरदायित्व

प्रयाग विश्व-विद्यालयकी हीरक जयन्ती सम्बंधी कनवोकेशनमें भाषण करते हुए पण्डित जवाहरलाल नेहरूने कहा—'विश्वविद्यालयोंका काम शिक्षा देना है। उनका कार्य क्षेत्र बड़ा ही विस्तृत है। विद्याका कोई भी मार्ग हम पकड़ सकते हैं और उससे हमें लाभ भी होगा, किन्तु उसके लिये एक निश्चित आधारका रहना बड़ा आवश्यक है। विश्वविद्यालयोंका कर्तव्य है कि वे इस बातको महसूस करके उस पर जोर दें। विचार और कार्यके ऊँचे मान से ही व्यक्ति और राष्ट्रकी उन्नति होती है। यह बात आजके संक्रान्ति-कालमें, जब कि हमने पुरानी बातोंके मूल्यको छोड़कर नवीन मूल्योंको अपनाया है, आवश्यक हो जाती है।

हमें स्वतंत्रता न्यूनतम हिंसासे प्राप्त हुई अवश्य, किन्तु उसके बाद हमारे देशको खून और आँसूकी नदियोंसे होकर गुजरना पड़ा। हम पागल बनकर एक दूसरे पर अत्याचार करने लगे। सभ्यताके सारे बंधन ढीले पड़ गये। चारों ओर आतङ्क, घृणा और नृशंसता व्याप्त हो गयी। ऐसा लगने लगा कि चारों ओर अँधेरा छा गया है। परन्तु इस अँधकारमें भी एक प्रकाश है, जो देशको शक्ति, उत्साह और आशाका मार्ग प्रदर्शित कर रहा है। यह प्रकाश हैं महात्मा गांधी, जिन्होंने वर्तमान

सङ्कट-कालमें साहस और धैर्यके साथ सही रास्ता दिखाकर देशकी सबसे बड़ी सेवाकी है।

लेकिन अंधकारका पूर्णतया लोप नहीं हुआ है। हमारे सामने प्रश्न यह है कि क्या हम स्वतंत्रता प्राप्त होने पर भी इस अंधकारमें डूब जायँगे ? इस प्रश्नका उत्तर इस समय हमारे विश्वविद्यालयोंके विद्यार्थियों और छात्राओंको, विशेषतः स्नातकों और स्नातिकाओंको देना है। मेरी उनसे अपील है कि वे भारतके भाग्य-निर्माणके इस महत्वपूर्ण समयमें इस मौलिक प्रश्न पर गम्भीरता पूर्वक विचार करें। देशमें इस समय फैली हुई सङ्कीर्णता, असहिष्णुता, निर्दयता और असावधानी को देखकर मुझे चिंता होने लगती है। विगत महायुद्धने, जिसमेंसे होकर हम अभी गुजर रहे हैं। शांति और स्वतंत्रताकी स्थापना नहीं की है। यद्यपि उसने नाजीवाद और फैसिज्मका विनाश किया है, किन्तु इनका अभी समूल नाश नहीं हुआ है। इसकी स्पष्ट झलक साम्प्रदायिकता और विशेषतः मुस्लिम साम्प्रदायिकतामें दिखाई देती है। मैं इन विचार पद्धतियोंको, जो द्वेष और हिंसा पर आधारित हैं, नितांत अनिष्टकारी समझता हूँ। चाहे इनसे अल्पकालके लिये प्रतिष्ठा मिल जाय, किन्तु वास्तवमें ये सिद्धान्त इन पर आचरण करने वालोंकी आत्मा, उनके विचार और आचरणको समूल नष्ट कर देते हैं। हमें महायुद्धके परिणामोंसे शिक्षा लेनी चाहिये। परंतु खेद है कि भारतमें इन्हीं विचार पद्धतियोंकी प्रगति हो रही है। इन्हें राष्ट्रीयता, धर्म या संस्कृतिका नाम दिया जाता है, किंतु यह इन सभी बातोंके विरुद्ध है। राष्ट्रीयताका नाम देकर फैसिज्म का अनुसरण किया जा रहा है और इसका स्पष्ट परिणाम भी हमारे सामने है। विगत कुछ महीनोंमें इसका वास्तविक रूप

प्रकट हो चुका है। हमने यद्यपि एक सम्प्रदायकी विद्वेषपूर्ण सङ्कीर्ण और हिंसायुक्त नीतिका विरोध किया किन्तु धर्मान्धता में डूबे हुओं पर उसका कोई असर नहीं पड़ा और उस सम्प्रदायने भारतके कुछ हिस्सोंमें राज्य प्राप्त कर लिया। इतना ही नहीं उस सम्प्रदायने दूसरे सम्प्रदाय वालोंके साथ जिस प्रकारके पाशविक व्यवहार किये, उसकी प्रतिक्रिया दूसरे सम्प्रदाय वालों पर भी पड़ी। इसका परिणाम स्पष्टतया दिखाई दे रहा है। वही साम्प्रदायिकताने दूसरे सम्प्रदायके लोगों पर भी अपना प्रभाव डाला और वही व्यवहार इस सम्प्रदायके लोग भी करने लगे हैं। हमारे यहाँ भी साम्प्रदायिक राज्यकी आवाज उठायी जाने लगी है।

इस भावनाका हमें जोरोंसे विरोध करना है और अपने यहाँ उसे नहीं बढ़ने देना है। इस काममें हमें अपने विद्यार्थी समुदायसे बहुत मदद मिल सकती है यदि वे इसमें संलग्न हो जायँ। देशका वर्तमान और भविष्य विद्यार्थियों पर निर्भर है। उन्हें अपनेकी नयी प्राप्त स्वाधीनताकी रक्षा करनी है, अपने देशको दुनियाके दूसरे मुल्कोंकी बराबरीमें खड़ा करना है, अपने घरकी खराबियोंको दूर करना है, और अपनेको अपने पूर्वजोंकी कीर्तिको कायम रखना है। आज हमारे देशके विद्यार्थियोंको अपनी शिक्षा सार्थक करनेकी आवश्यकता है। देशमें फैलने वाली सङ्कुचित भावनाओंको नष्ट करना है। हमें अपने दृष्टिकोणको व्यापक बनाना है। हमारे पूर्वजोंका दृष्टिकोण जब तक व्यापक था, तब तक उन्होंने आश्चर्यजनक प्रगति की, किन्तु उनका दृष्टिकोण सङ्कुचित होते ही उनकी राजनीतिक और सांस्कृतिक अवनति आरम्भ हो गई। फिर भी भारतमें अद्भुत शक्ति है, केवल उस शक्तिका उचित दिशामें उपयोग करनेकी

आवश्यकता है और मुझे आशा है कि हमारा विद्यार्थी समुदाय उस कार्यमें अग्रभाग लेगा।

हमारे विश्वविद्यालयों पर भारी उत्तरदायित्व है। उनका काम मानवता, सहिष्णुता, विवेक और सत्यकी शिक्षा देना है। यदि हमारे देशके विश्वविद्यालय अपने इस कर्तव्यका पालन करें और अपने विद्यार्थियोंमें उपरोक्त गुण उत्पन्न करें, तो हमारे देशका कल्याण हो सकता है। पर यदि इसके विपरीत हमारे विद्याके ये मन्दिर ही यदि सङ्कीर्णता, कट्टरता और क्षुद्र स्वार्थोंके घर बन गये, तो राष्ट्रकी उन्नति कठिन है। अतः विश्वविद्यालयों और अध्यापकों पर बड़ा भारी दायित्व है। वास्तवमें ये ही हमारे राष्ट्र-निर्माता हैं। उन्हें विद्यार्थियोंको उत्तम नागरिक तैयार कर राष्ट्रके लिये प्रस्तुत करना है, अभी तक हमारे देशके विश्व-विद्यालय भी विदेशी सरकारके प्रभावमें थे, प्रभावमें न भी सही, मगर सरकारकी कृपा बनी रहे, इसका ख्याल उन्हें रखना ही पड़ता था। राष्ट्र हित और सरकारी हितका मुकाबिला होने पर सरकारी हितको ही तरजीह देनी पड़ती थी, क्योंकि सरकारी सहायताके बिना विश्व वद्यालयोंका काम चल ही नहीं सकता। परन्तु अब तो अपनी सरकार है, वह सरकार जो चाहती है कि हमारे देशके युवक स्वतंत्र देशोंके से युवक हों। इसलिये अध्यापकों और विश्वविद्यालयोंका उत्तरदायित्व बहुत बढ़ गया है और उन्हें अपने इस दायित्वका पालन करना है।

हम भारतमें ऐसा असाम्प्रदायिक प्रजातंत्र स्थापित करना चाहते हैं, जिसमें सभीको समान अधिकार और धार्मिक स्वतंत्रता रहेगी और जिसमें साम्प्रदायिकता, सङ्कीर्णता, कट्टरता या शोषणके लिये कोई स्थान नहीं रहेगा अतः साम्प्रदायिक

भेदभावोंका त्याग कर हमें संयुक्त राष्ट्र निर्माण करनेका प्रयत्न करना चाहिये।

हमारा देश इस समय बड़े सङ्कटसे होकर गुजर रहा है। हमारा सङ्कटकाल अभी समाप्त नहीं हुआ है, अतः हमारे विश्व-विद्यालयोंका कर्तव्य है कि वे विद्यार्थियोंमें अनुशासन, दृढ़ता और साहसकी वृद्धि करें और उन्हें इस योग्य बनावें कि भारत माताके शरीर और आत्मामें जो घाव हो गये हैं, उन्हें भर दें।'

औद्योगिक शान्तिके लिये अपील

भारतके प्रधान मंत्री पण्डित जवाहरलाल नेहरूने भारतीय औद्योगिक सम्मेलनमें भाषण करते हुए कहा :—कि उत्पादनकी शिथिलता रुकनी चाहिये। देशकी वर्तमान सङ्कट पूर्ण परिस्थिति में यह जरूरी है कि कमसे कम कुछ समयके लिये औद्योगिक शांति हो जाय, अर्थात् मिलोंमें हड़तालें न हों और उत्पादन बढ़ाया जाय।

इधर कुछ समयसे भारतको सब तरहके भयानक सङ्कटोंसे गुजरना पड़ा है और हमें भारी समस्याओंका सामना करना पड़ा है। दूसरी ओर देशकी आर्थिक स्थिति भी बिगड़ रही है। चीजोंके ठीक-ठीक वितरणकी बात कही जाती है, परन्तु समान वितरणके लिये चीजें भी तो हों। सभी श्रेणियोंके लोगोंको सभी चीजें मिल जायँ, इसके लिये चीजोंका उत्पादन बढ़ाना सर्व प्रथम आवश्यक है। उत्पादनका बढ़ना कई बातों पर निर्भर करता है। सबसे पहिले उत्पादन बढ़ानेकी भावना होनी चाहिये, परन्तु हम देखते हैं कि इस भावनाका अभाव है। दूसरी बात यह भी है कि युद्ध समाप्त होने पर एक प्रकारकी थकावट आ जाती है। कठिन परिश्रम करनेकी प्रवृत्ति लोगोंमें नहीं रह जाती। इसके अतिरिक्त युद्धके बाद श्रम जीवियोंकी मनोवृत्ति भी कुछ बदल जाती है। मजदूरोंको यह ख्याल होने लगता है कि हमारी गाढ़ी कमाईसे मालिकोंने खूब लाभ उठाया है, किन्तु जितना परिश्रम हमने किया है, उसका एवज हमें नहीं मिल रहा है, हमारे साथ अच्छा व्यवहार तक नहीं होता।

उधर मालिकोंको यह ख्याल होता है कि उनके सामने चीजोंके न मिलने तथा अन्य प्रकारके सङ्कट उपस्थित हैं और उस पर भी मजदूर लोग ठीक तरहसे काम नहीं कर रहे हैं। वे सदा हड़तालोंकी धमकी देते हैं और अक्सर हड़ताल कर भी देते हैं, जिससे उत्पादन घटता है। इस तरह मालिकों और मजदूरोंमें केवल अविश्वास ही नहीं बढ़ता बल्कि कटुता भी आती है और उनमें बैर-भाव आ जाता है।

मजदूरोंमें ऐसे लोगोंकी संख्या अधिकतर होती है, जो राष्ट्रको कठिनाइयोंसे लाभ उठाना चाहते हैं। वे हड़तालें कराते हैं, काम रुकवाते हैं और हर तरहसे उत्पादन घटाकर अनुचित लाभ उठाना चाहते हैं। नतीजा यह होता है कि उत्पादन घटता है और साथ ही मजदूरोंके प्रति जनताकी सहानुभूति जाती रहती है। मजदूरों और जनताके स्वार्थोंके बीच दीवार खड़ी हो जाती है, जो दोनोंके लिये और विशेषतः मजदूरोंके लिये हितकर नहीं है।

वास्तविक कठिनायी ईमानदार मनुष्योंको होती है, क्योंकि जो लोग ईमानदार नहीं होते और अपने मतको जल्दी ही बदल सकते हैं, वे सहजमें ही अपने मतभेद दूर कर लेते हैं। उनका कोई सिद्धांत नहीं होता, इसलिये घटनाओंके दबावमें पड़कर वे सहज ही समझौता कर लेते हैं। परंतु ईमानदार और अपने मत पर दृढ़ रहने वालोंको समझौता करनेमें कठिनायी होती है। मान लीजिये कि हममेंसे अधिकांश मनुष्य ईमानदार हैं और ऐसे हैं कि विभिन्न विषयों पर दृढ़ मत रखते हैं, उन्हें दूसरोंका मत स्वीकार करनेमें कठिनायी होती है। जहाँ पर यह बहुत बड़ी समस्या है और भारतके सामने इस समय सब तरहके सङ्कट उपस्थित हैं। अन्तिम सङ्कट यही है कि

राष्ट्रकी उत्पादन शक्ति घटती जा रही है और इस सङ्कटका प्रभाव हमारी राजनीतिक, आर्थिक तथा अन्य स्थितियों पर पड़ रहा है। इस प्रकार हमारी शक्ति ऐसी निर्जीव होती जा रही है कि हम वर्तमान सङ्कटोंका सामना करनेमें अपनेको असमर्थ पा रहे हैं। इसलिये श्रम जीवियोंको उत्पादन बढ़ाना चाहिये। हमें उत्पादन बढ़ाकर अपना राष्ट्रीय धन बढ़ाना चाहिये। तभी हम जनताके जीवन-यापनका मान बढ़ा सकते हैं। जहाँ अधिक असामञ्जस्य हो वहाँ स्थिति दुरुस्त करनेकी आवश्यकता है।

यह तभी होगा जब उद्योग-धन्धोंमें औद्योगिक क्षेत्रोंमें शांति रहेगी, जब मजदूरों और मालिकोंमें सद्भाव और सहयोग रहेगा। कमसे कम कुछ समय तक औद्योगिक क्षेत्रोंमें शान्ति रखना, झगड़े न खड़े करना आवश्यक है ताकि हमें कुछ साँस लेनेका अवसर मिले। सम्मेलनमें औद्योगिक शांतिके लिये तीन वर्षका समय रखा है। मेरी दिलचस्पी समयसे नहीं है, परन्तु यह अवश्य होना चाहिये कि राष्ट्र निर्माणकारी कार्योंको बढ़ानेका पूरा अवसर मिले और इस बीचमें कोई हड़ताल आदि न हो। परन्तु ऐसा होना तब तक सम्भव नहीं है जब तक कोई ऐसी व्यवस्था न हो जिसमें कि झगड़ोंका सन्तोष-जनक रूपसे हल हो। जब दो दलोंमें झगड़ा रहता है तो किसी भी दलको पूरा सन्तोष होना सम्भव नहीं होता। मेरी समझमें यह तो हो ही सकता है कि दोनों दल कुछ त्याग कर समझौता कर लें और यह निश्चय कर लें कि समझौतेकी अवधिमें किसी भी दलकी ओरसे झगड़ेको कोई बात नहीं की जायगी और पूरी शक्तिके साथ उत्पादन बढ़ाया जायगा। जनताको इस समय सभी चीजोंकी बहुत अधिक आवश्यकता है, इस-लिये सभी चीजोंका उत्पादन बढ़ानेका पूरा सहयोग होना

चाहिये। मेरी समझमें मनुष्य या भारत सरकारकी बुद्धिसे परे यह बात नहीं होनी चाहिये कि इस प्रकारकी योजना बनायी जाय और ऐसी व्यवस्थाकी जाय कि उद्योग धन्धोंमें कोई हड़ताल न हो।

यह एक बड़े आश्चर्यकी बात है कि जहाँ कहीं भी ऐसी योजनायें हैं वहाँ दोनोंही ओर उनका विरोध होता है। व्यापार मंडल (एसोशियेटेड चेम्बर आफ कामर्स) के अध्यक्षने यह बार-बार अपने श्रोताओंके सामने कहा कि सरकार किसी तरह का हस्तक्षेप न करे। उनका ख्याल कि यदि सरकार अलग रहे तो उद्योग-धन्धोंकी उन्नति होगी। यह सुनकर उस समय मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ।

दूसरी ओर मजदूरोंका विचार पंचायती फैसलेके बारेमें यह है कि यदि उस फैसलेसे वे प्रसन्न न हुए तब वे चाहे जो करनेके लिये स्वतन्त्र हैं। मैं यह मनोवृत्ति समझ सकता हूँ, पर यदि पंचायती फैसलेको हम इसी दृष्टिसे देखते रहे तो फिर कोई फैसला होना असम्भव है। पर यदि कोई ऐसी निष्पक्ष व्यवस्था हो, और मेरा खयाल है कि ऐसी व्यवस्था हो सकती है, तो वह अन्य स्वार्थोंकी अपेक्षा अधिकतर मजदूरोंके ओर ही झुकेगी। तब हम समय-समय पर उत्पन्न होनेवाली कठिनाइयाँ हलकर सकते हैं।

हमारी सरकार एक लोकप्रिय सरकार समझी जाती है, और यह अधिकांश जनताकी इच्छायें प्रकट करती है, यदि यह ठीक है और सरकार किसी उपायसे काम करती है, तो विरोधी लोग किस तरह बातें करेगें? या तो उनका बहुमत है, या उनका अल्पमत है। यदि उनका बहुमत है तो वे बहुमत ही से आसानी से सरकारका अन्त कर सकते हैं। यदि उनका अल्पमत है तो

उनके कार्यका यह मतलब है कि वे अल्पमत का दमन करना चाहते हैं, और फिर संघर्ष प्रारम्भ हो जायगा। यदि आप झगड़ा शुरू करेंगे तो दूसरी तरफसेभी झगड़ा शुरू किया जा सकता है। इसलिये यह अच्छा नहीं है, और इसलिये अन्तमें जनताको ही क्षति पहुँचती है। यदि एक दिनके लिये भी हड़ताल हुई तो उस दिनके उत्पादनको क्षति पहुँचेगी, इतना ही नहीं, छोटे-छोटे झगड़े भी हो जायंगे। मान लीजिये कि कोई मजदूर हड़तालमें न शरीक हो, तब दूसरे लोग उसे हड़ताल में जबदस्ती घसीटनेका प्रयत्न करेंगे, और झगड़ा शुरू होगा इसके बाद पुलिसने किसीको गिरफ्तार किया, और फिर बुरी गुत्थियाँ उलझने लगेंगी।

उत्पादन कार्य रोकनेके बदले मजदूर लोग अन्य शान्तिपूर्ण उपायोंसे अपनी इच्छायें प्रकट कर सकते है, जैसे वे शान्तिपूर्ण सभायें और प्रदर्शन कर सकते हैं।

लाक्षणिक हड़ताल करनेवालोंको चाहिये कि वे अधिक व्यापक दृष्टिसे पुनः अपने निर्णय पर विचार करें, जैसे मान लो, कोई चुनाव होनेवाला हो, और कुछ लोगोंका विचार हो कि यदि वे एक रूपसे कार्य करें तो सफल मनोरथ होंगे। पर हम सबको सोचना यह है कि हम मामूली चुनावोंका ध्यान करके कार्य करें, या व्यापक रूपसे स्थायी कार्य करनेकी ओर ध्यान दें। यदि हमें पहली दृष्टिसे काम करना है तो फिर हम बड़े-बड़े कार्योंकी बातें करना छोड़ दें, पर मुझे विश्वास है कि देशमें इतनी काफी दृढ़ता और समझदारी है कि वह छोटी-छोटी कठिनाइयोंको पार कर बड़े-बड़े कार्योंको देखेगा।

—::o::—

भारतीय संघ विधानको रूप-रेखा

पण्डित जवाहरलाल नेहरूने भारतका भावी शासन-विधान कैसा होगा, उसकी रूप-रेखाके सम्बन्धमें विधान सम्मेलनमें सङ्घ शासन समितिकी रिपोर्ट पेश करते हुए कहा :—

इस रिपोर्टमें भावी सङ्घ शासनके सिद्धान्त हैं और यह ग्यारह भागोंमें विभाजित हैं—सङ्घ राज्य तथा उसका अधिकार, नागरिकता, मूलभूत अधिकार जिनमें राज्यके सैद्धांतिक आदेश भी निहित होंगे—राज नियम, प्रवर्तक, सङ्घ और इकाइयोंके बीच नियम बनानेके अधिकारोंका वितरण, अर्थ तथा ऋण लेने की शक्ति, अपरोक्ष शासित प्रदेश, विधानमें संशोधन, संक्रान्ति-कालकी तथा फुटकर व्यवस्थायें।

मसविदेकी भूमिकामें कहा गया है कि हम भारतीय, एक दूसरेका हित सम्पादन करनेके निमित्त, अपने निर्वाचित प्रतिनिधियोंके द्वारा यह विधान बनाते तथा स्वीकार करते हैं।

सङ्घ एक स्वतंत्र तथा लोकतंत्रात्मक राज्य होगा जो 'इंडिया' कहलायेगा। सङ्घ शासनके अन्तर्गत जो प्रदेश रहेंगे उनमें वर्तमान सङ्घ वाले प्रान्त रहेंगे और सङ्घमें शामिल होनेवाली देशी राज्योंके लिये गुञ्जाइश रक्खी गयी है। इस सम्बन्धमें यह समझा दिया गया है कि ऐसी कुछ रियासतें हो सकती हैं जो

सङ्घमें न हों किन्तु जो कुछ बातोंमें सङ्घके अधिकारको स्वीकार करें और उसके लिये कोई समझौता या सन्धि करें अतः सङ्घकी पार्लमेंटको यह अधिकार होगा कि वह समय-समय पर ऐसे प्रदेशोंको सङ्घमें ऐसी शर्तों पर मिला लें जिन्हें वह उचित समझती हो। राजनियम प्रवर्तक वाले भागमें सात अध्याय हैं जो सङ्घके प्रधानके सम्बन्धमें हैं। यह प्रधान निर्वाचित राष्ट्र-पति होगा।

सङ्घ पार्लमेंटमें दो सभायें होंगी—कौंसिल आफ स्टेट तथा लोक परिषद्। राष्ट्रपतिके व्यवस्थापिका सम्बन्धी अधिकार तथा सङ्घका अन्य अधिकारी, सङ्घका आडीटर जनरल (आय व्यय निरीक्षक) नौकरियाँ तथा चुनाव।

राष्ट्रपतिका चुनाव पार्लमेंटकी दोनों सभाओंके सदस्य, सब इकाइयोंके धारा सभाओंके सदस्य अथवा जहाँ दो सभाकी प्रणाली होगी वहाँ लोक परिषद्के सदस्य करेंगे। इकाइयोंके प्रतिनिधित्वमें समानता रखनेकी दृष्टिसे इकाइयोंके वोट उनकी जन-संख्याके अनुपातसे रहेंगे।

राष्ट्रपति अपने पद पर पाँच वर्ष तक रहेंगे और केवल एक ही बार पुनः राष्ट्रपतिके पद पर चुने जा सकेंगे। विधान की उपेक्षा करने पर राष्ट्रपतिको अभियोग लगाकर हटाया जा सकता है।

जब राष्ट्रपतिको विधानकी उपेक्षा करने पर हटाना होगा तो सङ्घकी दोमेंसे किसी भी पार्लमेंटको अभियोग लगाना होगा किन्तु इस प्रकारका अभियोग उस समय तक नहीं लगाया जा सकता जब तक कि उस सभाके कुल सदस्योंका दो तिहाई भाग उसका समर्थन न करे।

उपाध्यक्षकी भी व्यवस्था रक्खी गई है। राष्ट्रपतिके कार्यों की सूची इस प्रकार है—राष्ट्रपतिको क्षमा दान करनेका अधिकार होगा। किसी भी न्यायालय द्वारा दी गई सजाको राष्ट्रपति रद्द कर सकता है। किन्तु इस प्रकारका अधिकार कानूनके आधार पर अन्य अधिकारियोंको भी दिया जा सकता है।

सङ्घ सरकारके सब नियम मनवाने वाले कार्य राष्ट्रपतिके नामसे हुआ करेंगे। राष्ट्रपतिको उनके कार्योंमें सहायता देने तथा उन्हें परामर्शके लिये मंत्रियोंकी एक कौंसिल होगी, जिसका प्रधान मन्त्री होगा।

सङ्घके नियम बनानेका अधिकार पार्लमेंटकी दो सभाओं को होगा जिसमें राष्ट्रपति तथा राष्ट्र एसेम्बली भी होगी जिसमें दोनों सभायें—कौंसिल आफ स्टेट तथा लोक परिषद् रहेंगी।

कौंसिल आफ स्टेटमें १० सदस्योंको विश्व-विद्यालयों तथा वैधानिक संस्थाओंके परामर्शसे राष्ट्रपति नामजद करेंगे।

लोक परिषद्में जनताके तथा इकाइयोंके प्रतिनिधि होंगे। कौंसिल आफ स्टेट एक स्थायी सभा होगी जिसे भंग न किया जा सकेगा किन्तु उसके एक तिहाई सदस्य प्रति दूसरे वर्ष अवकाश प्राप्त करते रहेंगे।

लोक परिषद् शीघ्र न भंगकी गई तो चार वर्ष तक रहेगी किन्तु आवश्कतानुसार राष्ट्रपति उसकी अवधि एक वर्ष बढ़ा सकते हैं उससे अधिक नहीं।

वर्तमान जन-गणनाके अनुसार कौंसिल आफ स्टेटमें २०० सदस्य रहेंगे और लोक परिषद्के सदस्योंकी संख्या ३०० से ४०० तक होगी।

व्यर्थ बिलोंको छोड़कर दोनों सभाओंको नियम बनानेके बराबर-बराबर अधिकार रहेंगे और यदि कोई गत्यावरोध होगा तो वह दोनों सभाओंकी सम्मिलित बैठकमें हल कर लिया जायगा।

पार्लमेंटकी छुट्टियोंके समय राष्ट्रपतिको आर्डिनेन्स जारी करनेका अधिकार होगा। किन्तु ऐसे प्रत्येक आर्डिनेन्सको सङ्घ पार्लमेंटके सामने पेश करना होगा और पार्लमेंटके फिरसे बैठनेके पश्चात् केवल ६ सप्ताह तक वह जारी रहेगी।

विज्ञानका महत्व

पण्डित जवाहरलाल नेहरूने भारतीय विज्ञान' कांग्रेसमें अध्यक्ष पदसे भाषण देते हुए कहा—एकमात्र विज्ञानसे ही संसारकी रक्षा हो सकती है और भारतवर्षमें शीघ्र ही वैज्ञानिक युगका प्रादुर्भाव होगा। नव भारतकी समस्याएँ वैज्ञानिक तरीके से औद्योगिक उन्नति करने पर ही हल हो सकती है। विज्ञानके द्वारा जीवनके विभिन्न क्षेत्रोंमें योजनाके अनुसार उन्नतिकी जाती है और लोगोंका विकास वैज्ञानिक ढङ्गसे होता है। विज्ञानसे केवल सत्यका ही रहस्योद्घाटन नहीं होता। विज्ञानसे जब समाजकी उन्नति होती है तो इनका महत्व अपेक्षाकृत बढ़ जाता है।

एक भूखे व्यक्ति अथवा भूखी महिलाकी आँखोंमें सत्यका क्या मूल्य है? भूखा व्यक्ति भोजन चाहता है। भारत भूखा देश है। जिन लाखों भारतीयोंको भर पेट भोजन नहीं मिलता उनके सामने सत्य तथा ईश्वर और जीवन सम्बन्धी अच्छी चीजोंकी चर्चा केवल एक मजाक है।

हमें अपने देशमें वस्त्र भोजन, गृह-शिक्षा स्वास्थ्य आदि जीवनके आवश्यक अंगों पर ध्यान देना है। हमें देशके लाखों व्यक्तियोंकी कठिनाइयोंको दूर करना है। भौतिक कठिनाइयोंके दूर होने पर ही हम ईश्वरके विषयमें सोच सकते हैं। फलतः विज्ञानको भारतके ४० करोड़ निवासियोंकी समस्याएँ हल करनी हैं। विज्ञान कांग्रेसको इस दिशामें लगनके साथ कार्य करना चाहिये। सरकारी कार्य पर ही भरोसा करना उचित नहीं है।

अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति और मानव समाजकी उन्नतिके लिये हम भारतीय सदैव विदेशी वैज्ञानिकोंसे सहयोग करनेको प्रस्तुत हैं।

शोषण और विकासके लिये विज्ञानका प्रयोग सर्वथा अवांछनीय है। आशा है भारत भविष्यमें होने वाले युद्धोंमें शामिल न होगा। भविष्यमें और भी भयानक युद्ध होंगे क्योंकि शोषणकी भावना अभी नहीं मिटी है।

अणु शक्तिके लिये भारतीय वैज्ञानिक मानव समाजकी उन्नतिके लिये इसका अनुसन्धान विदेशी वैज्ञानिकोंकी सहायतासे करेंगे, किन्तु हमारा उद्देश्य मानव-जातिका विनाश नहीं है। कुछ लोग शोषण और साम्राज्य-लिप्साके चक्करमें वैज्ञानिक साधनोंको निजी सम्पत्ति बनाकर अपना स्वार्थ सिद्ध करना चाहते हैं। हम भारतमें ऐसी बात नहीं होने देंगे। मुझे स्वयं राजनीतिसे प्रेम नहीं है किन्तु देशकी स्वाधीनताके लिये मुझे इस क्षेत्रमें आना पड़ा है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोणसे आत्म-निर्भर और स्वतन्त्र भारतके निर्माणमें सहयोग देना हमारा प्रथम कर्तव्य है। विज्ञान द्वारा हम देशी या विदेशी मामले हल कर सकते हैं।

बरमाको स्वतन्त्रता

जिस प्रकार भूतकालमें उसी प्रकार भविष्यमें भी भारत की जनता बर्माकी जनताके साथ कन्धासे कन्धा भिड़ाकर खड़ी होगी और चाहे हमें सौभाग्य अथवा दुर्भाग्यमें भाग लेना पड़े हम उसे साथ-साथ ही भोगेंगे। आजका दिन बड़ा महान् तथा पवित्र दिन है—न केवल बर्माके लिये बल्कि भारत और समस्त एशियाके लिये। भारतमें हमलोग विशेष रूपसे प्रभावित हुए हैं क्योंकि बर्माके साथ हमलोग न मालूम कितने वर्षोंसे एक साथ बँधे रहे हैं। हमारी प्राचीन पुस्तकोंमें बर्माको 'स्वर्ण-भूमि' कहा गया है। किन्तु उसके बाद बर्माको हमने एक सन्देश भेजा और वह सन्देश भारतके महान पुत्र गौतम बुद्धका था जिसने हमें दो सहस्त्र वर्षसे बल्कि उससे भी अधिक समयसे—एक साथ बाँध रक्खा है। अन्य बातोंके अलावा वह सन्देश शान्ति और धर्मका था और शायद उस शांति और धर्मके सन्देशकी आवश्यकता आज अन्य सब बातोंकी अपेक्षा बहुत अधिक है।

भूतकालमें हम राजनीतिक सूत्रोंसे भी बँधे थे किन्तु भारत और बर्माके बीच जो वास्तविक सम्बन्ध था वह आध्यात्मिक था जिसे राजनीतिक परिवर्तन भी नहीं तोड़ सकते। इसलिये आज हम बर्माकी स्वाधीनताका स्वागत करते हैं। पहिले भी हमने साथ-साथ अनेक मञ्जिल तय की थी। हमने एक दूसरेके सुख-दुखमें एक साथ हिस्सा बँटाया है, और अब स्वतंत्रताके प्रभावमें हमें अनेक कठिनाइयोंको पार करना है क्योंकि स्वतंत्रता और वस्तुतः किसी भी नई वस्तुके पैदा होने पर कष्ट होता ही है। कष्टके बाद स्वतंत्रता और अच्छाईका जन्म हुआ है। हमें आशा है बर्मा अपनी जनताकी भलाईके लिये रचनात्मक कार्य करेगा।

भारतीय पत्रोंका भविष्य

प्रयागमें अखिल भारतीय सम्पादक सम्मेलनके पाँचवें अधिवेशनका उद्घाटन करते हुए पण्डित जवाहरलाल नेहरूने कहा—पत्रकार कलाकी उन्नतिके लिये ऐसी सम्वाद समितियों का सङ्गठन आवश्यक है जो हिन्दुस्तानी भाषामें समाचार भेजें। इस समय जितनी भी सम्वाद समितियाँ हैं वे सब अंग्रेजीमें खबरें भेजती हैं। फलत: हमारे व्याख्यानों और वक्तव्योंकी शुद्ध रिपोर्टें देशी भाषाके समाचार-पत्रोंमें ठीक प्रकाशित नहीं हो पातीं क्योंकि हम हिन्दी उर्दूमें बोलते हैं। सम्वाद समितियाँ अँग्रेजीमें उनका अनुवाद करके भेजती हैं और उस अनुवादका फिरसे हिन्दी-उर्दू अनुवाद किया जाता है। इस प्रणालीको समाप्त करना आवश्यक है। देशी भाषाओंमें प्रकाशित होनेवाले पत्रोंका भविष्य बहुतही आशाजनक और सुन्दर है।

भारतीय समाचार-पत्रोंको गाँवोंकी ओर विशेष ध्यान देना चाहिये। समाचारोंको दबाना सर्वथा अनुचित है। विदेशोंके समाचार प्राप्त करनेके लिये अपनी सम्वाद-समितियाँ होनी चाहिये। मुख्य राजनैतिक केन्द्रों जैसे लन्दन, मास्को, वाशिंगटन और पेरिससे समाचार प्राप्त करनेके लिये अपना स्वतन्त्र प्रबन्ध करना चाहिये। एशियाई देशोंसे सम्पर्क स्थापित करके अपनी सम्वाद-समितियों द्वारा समाचार प्राप्त करना चाहिये ताकि अपने पड़ोसी देशोंको सही खबरें मिल सकें। राजनैतिक खबरों के अतिरिक्त समाजिक, आर्थिक, साहित्यिक और स्वास्थ्य

सम्बन्धी खबरोंके प्रकाशनकी ओर भी ध्यान देनेकी आवश्यकता है।

सम्पादकोंको किसी भी दलके समाचारोंको न दबाना चाहिये। समाचारोंको दबानेका परिणाम यह होता है कि जब समाचार पुनः प्रकट होता है तब उसमें या तो अतिशयोक्ति की सम्भावना रहती है या वह वास्तविक घटनासे बिल्कुल विपरीत चित्र प्रस्तुत करता है। समाचार-पत्रोंको खबरें प्रकाशित करनेकी पूर्ण सुविधा मिलनी चाहिये। भारतीय समाचार पत्रोंका भविष्य बहुत उज्ज्वल है, अतः टेली प्रिन्टरसे भी हिन्दुस्तानीमें खबरें भेजी जायँ। हिन्दी-उर्दूके अखबारोंको अँग्रेजीमें प्राप्त खबरोंका अनुवाद करना पड़ता है। जो भाषण हिन्दुस्तानीमें होते हैं उसके अँग्रेजी अनुवादका वे अनुवाद करते हैं। इससे देशी भाषाके पत्रोंमें गलत खबरें छप जाती हैं। इस प्रकार वक्ताके विचारोंकी हत्याकी जाती है। भारतकी वर्तमान समाचार समितियाँ ठीक ढङ्ग से सङ्गठित नहीं है।

श्रमजीवी पत्रकारोंके वेतन आदिकी शिकायतोंके सम्बन्धमें भारतके समाचार पत्रोंको कुछ अवश्य करना चाहिये। भरपेट भोजन मिले बिना पत्रकार-पत्रोंका स्तर ऊँचा नहीं उठा सकते। वेतन, ग्रेड, सुरक्षा आदि प्रश्नोंको हल करना आवश्यक है।

समाचार पत्र सामाजिक तथा आर्थिक पहलुओं पर जितना ध्यान देना चाहिये नहीं देते। समाचार पत्रोंमें निकलनेवाले विज्ञापनोंके सम्बन्धमें आपने कहा कि इनमें से कुछको पढ़कर मुझे अत्यन्त दुख हुआ है। आपने सम्पादकोंसे अपीलकी कि वे विज्ञापनोंकी कड़ी जाँच करें और पैसेकी दृष्टिसे भी ऐसे विज्ञापनोंको न छपने दें जो समाजके लिये घातक हो।

महात्मा गान्धीका महा प्रयाण

महात्मा गांधीकी हत्या पर राष्ट्र-पिताके प्रति अपनी श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते और देशवासियोंसे समस्त मतभेद भुलाकर विश्वबन्धु बापू द्वारा बताये हुए मार्ग पर चलनेकी अपील करते हुए भारतके प्रधान मंत्री पण्डित जवाहरलाल नेहरूने कहा :— महात्मा गांधीके प्रति सबसे बड़ा सम्मान प्रकट करना और उनके लिये सबसे बड़ी प्रार्थना यही है कि हम आज महान राष्ट्रीय सङ्कटके समय यह शपथ लें कि जिस कार्यके लिये गांधीजी जिये और जिसके लिये अन्तमें अपना प्राण त्याग किया उसकी पूर्तिके लिये अपना जीवन हम लगा दें।

आज हमारे जीवनका प्रकाश बुझ गया। चारों ओर अँधेरा छा रहा है। समझमें नहीं आता कि क्या कहूँ और कैसे कहूँ। मैंने अभी कहा है कि रोशनी गायब हो गयी है अँधेरा छा गया है। मगर यह कहना गलत है, क्योंकि पूज्य बापूने इस देशको जो प्रकाश दिखाया है, वह कोई साधारण प्रकाश नहीं था। पिछले इन तमाम वर्षोंमें यह देश उनकी प्रकाशसे ज्वाजल्यमान हो उठा था और आगामी अभी बहुत वर्षों तक उससे वह प्रकाशित होता रहेगा। आजसे हजार वर्ष बाद भी वह प्रकाश इस देशमें दिखाई देता रहेगा और उससे इस देशके असंख्य हृदयोंको सान्त्वना प्राप्त होती रहेगी। यह प्रकाश वर्तमान समयकी अपेक्षा किसी और बातका भी द्योतक है। यह प्रकाश सत्यका, अमर सत्यका प्रतीक है। यह हमें उचित मार्ग

का दिखाने वाला, गलतियोंसे उबारने वाला और इस प्राचीन देशको स्वतंत्रता प्राप्त कराने वाला है।

हमारे प्यारे नेता, हमारे बापू जिन्हें इस प्रिय नामसे हम पुकारा करते थे, हमारे राष्ट्र-पिता अब नहीं रहे। अब हम उनके पास सलाह लेनेके लिये कैसे दौड़ेंगे और कैसे सान्त्वना प्राप्त करेंगे। यह न केवल मेरे लिये बल्कि इस देशके करोड़ों लोगोंके लिये भयानक आघात-स्वरूप है। बापूके उठ जानेके समय आज मैं या अन्य कोई व्यक्ति आपको तसल्ली नहीं दे सकता।

यह दुखद घटना ऐसे समयमें हुई है, जब कि उन्हें अभी और भी बहुत-सा काम करना था। हम यह कभी सोच भी नहीं सकते थे कि अब उनकी आवश्यकता नहीं रह गई और उन्होंने अपना काम पूरा कर लिया था। लेकिन अब, खासकर ऐसे समयमें जब कि हमारे सामने इतनी अधिक कठिनाइयाँ उपस्थित हैं, उनका हमारे बीचमें न रहना अत्यधिक असहनीय है।

एक पागल आदमीने उनके जीवनका अन्त कर दिया, क्योंकि जिसने यह जघन्यकृत्य किया है उसे मैं पागल ही कह सकता हूँ। पिछले कुछ महीनों और वर्षोंमें इस देशमें काफी जहर फैला हुआ था और उस जहरका प्रभाव लोगोंके मस्तिष्क पर पड़ा है। हमें अपने सामने उपस्थित समस्त खतरोंका सामना पागलपनके साथ नहीं बल्कि ऐसे तरीकेसे करना चाहिये जिस तरहसे सामना करना हमें हमार प्रिय नेताने सिखाया है। अब हमें पहिली बात जो याद रखनी है यह है कि हम किसी व्यक्तिके लिये नाराजीके कारण कोई अनुचित बात न करें। हमें साहस और दृढ़तापूर्वक काम करना चाहिये, हमारे सामने

जो खतरा पैदा हुआ है, उसका दृढ़-सङ्कल्पके साथ सामना करना चाहिये। हमारे राष्ट्र-पुरुषने हमारे महान नेताने जो आदेश हमें दिये हैं उनको अमलमें लानेका हमें दृढ़ सङ्कल्प करना चाहिये। हमें सदा यह समझ रखना है कि उनकी आत्मा हमें अब भी देख रही है और हमें ऐसा कोई कार्य न करना चाहिये जिससे उनकी आत्माको रञ्ज पहुँचे। यदि हमने कोई ओछा व्यवहार किया या हिंसात्मक कार्य किया, तो उनकी आत्माके लिये इससे अधिक अरुचिकर बात कोई दूसरी नहीं हो सकती।

इसलिये हमें ऐसा कदापि नहीं करना चाहिये। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि हम कमजोर बनें, बल्कि हमें उन कठिनाइयोंका सामना बलपूर्वक और एक होकर करना चाहिये। हमें आपसमें एकता करनी चाहिये और बापूके इस निधनसे जो यह महान् क्षति हुई है उसका ध्यान रखते हुए अपने सभी छोटे-मोटे झगड़ों बाधाओं और कठिनाइयोंका अन्त कर देना चाहिये। यह महान् क्षति हमारे लिये यह संकेत है कि हम जीवनकी बड़ी बातोंको याद रखें और छोटी बातोंको भूल जायँ जिनका हमारे पास खजाना है। उन्होंने अपनी मृत्यु से हमें जीवनकी बड़ी बातोंके लिये, सत्यके लिये प्रेरणा दी है और यदि हमने उन पर ध्यान दिया तो इससे भारतका हित होगा।

देशका सूर्य अस्त हो गया !

नेहरूजीने भारतीय पार्लमेंटमें महात्मा गांधीके प्रति अत्यन्त मार्मिक शब्दोंमें श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए कहा—

हमारी शान चली गयी ! जो सूर्य हमारे देशको उष्णता तथा प्रकाश प्रदान करता था अस्त हो गया !! हम शीत तथा अन्धकारमें काँप रहे हैं। फिर भी हमें अपने अन्दर इस प्रकार का भाव नहीं लाना है। जब हम अपने हृदयोंको देखते हैं, तो अब भी उसमें वह प्रज्वलित अग्नि पाते हैं जिसे वे सुलगा गये हैं और यदि वह अग्नि बनी रही, तो हमारे देशमें अन्धकार नहीं होगा। उनका स्मरण कर, उनके मार्गका अनुसरण कर हम अपने प्रयत्नोंसे इस देशको फिर प्रकाश युक्त करेंगे। हमारी सरकारने यह दृढ़ निश्चय कर लिया है कि घृणा और हिन्साको निर्मूल किया जायगा।

महात्मा गांधीकी हत्याका यह काण्ड केवल एक पागल आदमीका काम नहीं है। वह हिंसा और घृणाके किसी ऐसे वातावरणका काम है जो इस देशमें पिछले कई महीनों और वर्षोंसे चल रही है और खासकर गत कुछ महीनोंसे। उस वातावरणसे हमलोग घिरे हुए हैं और यदि हमें वह काम पूरा करना है जिसे महात्मा गांधी हमारे सामने रख गये हैं, तो हमें उस वातावरणका सामना करना होगा, उसके विरुद्ध लड़ाई

लड़नी होगी, उसे दूर करना होगा और हिन्सा तथा घृणाको निर्मूल करना होगा। जहाँ तक इस सरकारका सम्बंध है, वह मुझे विश्वास है, कोई प्रयत्न उठा नहीं रखेगी, क्योंकि यदि हम इन बुराइयोंका मूलोच्छेदन नहीं करते, यदि अपनी कमज़ोरी या किसी अन्य कारणसे इस हिंसा और मौखिक रूपसे अथवा लेखनी द्वारा फैलती हुई इस घृणाको रोकनेके लिये प्रभावशाली उपाय नहीं करते, तो हम निस्सन्देह इस सरकारमें रहने योग्य नहीं हैं और न ही उस महान दिवंगत आत्माके अनुयायी होने योग्य तथा प्रशंसा करने योग्य हैं।

इस सभामें यह प्रथा रही है कि दिवंगत प्रमुख आत्माओं के प्रति सम्मान प्रकट किया जाता है। मुझे स्वयं अपने मनमें इस बातका पूरा निश्चय नहीं है कि यहाँ इस अवसर पर मेरे लिये या किसी अन्यके लिये कुछ अधिक कहना ठीक है, क्योंकि मुझे निजी तौर पर और भारत सरकारके प्रधानके नाते इस बातकी बड़ी लज्जा है कि हम अपनी सबसे बड़ी निधिकी रक्षा नहीं कर सके। हम पिछले महीनोंमें कितने ही बेगुनाह मनुष्यों, स्त्रियों और बच्चोंका रक्षा करनेमें असमर्थ रहे हैं यह बात हम सबके लिये बड़ी लज्जाकी है। यह महान व्यक्ति, जिसका हम सब अपरिचित सम्मान और प्रेम करते थे, केवल इसलिये जाता रहा कि हम उसकी रक्षाका पर्याप्त प्रबन्ध नहीं कर सके। यह मेरे लिये एक भारतीयके नाते बड़ी लज्जाकी बात है कि एक भारतीयने ही उस महान विभूति पर हाथ उठाया। एक

हिन्दूकी हैसियतसे भी मेरे लिये यह बड़ी शर्मकी बात है कि एक हिन्दूने यह कृत्य किया है और यह कृत्य इस युगके सबसे बड़े भारतीय और सबसे बड़े हिन्दूके साथ किया गया है।

लोगोंकी प्रशंसा हम कुछ चुने हुए शब्दोंमें करते है और उनकी महानताकी माप हमारे पास होती है, परन्तु गांधीजीकी प्रशंसा हम कैसे करेंगे और उनकी महानताकी माप कैसे करेंगे, क्योंकि वे उस साधारण मिट्टीके नहीं बने थे जिससे हम सब लोग बने हैं। वे आये और काफी लम्बे समय तक जीवित रहे तथा चले गये। उनके लिये हमारी प्रशंसाकी आवश्यकता नहीं है, क्योंकि उन्होंने अपने जीवनमें ही उससे कहीं अधिक प्रशंसा प्राप्तकी थी जितनी इतिहासमें किसी जीवित मनुष्यको मिली है या जितनी उनकी मृत्युके समयसे अब तकके समयमें मिली है। समस्त संसारने उनके प्रति सम्मान प्रकट किया है और हम सब उसमें अब और क्या जोड़ सकते हैं? हमलोग जो कि उनके बच्चे रहे हैं, और शायद उनके शरीरसे उत्पन्न बच्चोंसे भी अधिक निकटके बच्चे रहे हैं, उनकी कैसे प्रशंसा कर सकते हैं?

जो हमारी शान थी चली गयी और जो सूर्य हमारे जीवन को चमका रहा था अस्त होगया और हम अन्धकार तथा शीत में काँप रहे हैं। जो शान हमने उनके जीवनके समयमें देखी है उससे उन्होंने तथा अपने दैवी प्रकाशसे हममेंसे बहुतोंको प्रकाशित किया है। उस प्रकाशपूर्ण अग्निकी कुछ चिनगारियाँ

हमने ग्रहणकी हैं, उनसे हमें बल प्राप्त हुआ है और हम उनके ढङ्ग पर कुछ हद तक चले हैं। इसलिये यदि हम उनकी प्रशंसा करते हैं तो अपनी ही प्रशंसा करते हैं।

महापुरुषों और प्रमुख व्यक्तियोंकी स्मृतिमें कांसे और सङ्गमरमरकी मूर्तियाँ बनायी जाती हैं, परन्तु इस दैवी ज्योतिसे मनुष्यने अपने जीवनमें ही करोड़ों आदमियोंके हृदयोंमें अपनी स्मृति बना ली थी। उनका नाम न केवल राजमहलों और कुछ चुने हुए स्थानों तथा एसेम्बलियोंमें बल्कि घर-घर और साधारण झोपड़ों तक पहुँचा था। गान्धीजीने अपने जीवनके पिछले तीस वर्षोंमें इस देशका बहुत कुछ निर्माण किया था और सर्वोच्च श्रेणीका त्याग किया जिसकी समता संसारके किसी भी भागमें नहीं मिल सकती। यद्यपि उनके विनम्रशील मुख पर से मुस्कराहट कभी नहीं हटी और उन्होंने एक भी कड़ा शब्द किसीसे कभी नहीं कहा, फिर भी उन्होंने इस युगके अपने लोगों की त्रुटियोंके लिए कष्ट सहे और वे कष्ट केवल इसलिए सहे कि जो रास्ता उन्होंने दिखाया उससे हम हटे और अन्तमें उन्हींके एक बच्चेका हाथ उनकी ओर उठा।

महात्मा गान्धी प्राचीन भारतके और यदि मैं कहूँ तो भावी भारतके भी सबसे बड़े प्रतीक थे। प्राचीन और भावी भारतके बीच वर्तमानके खतरनाक किनारे पर हम खड़े हैं। यह खतरा उस समय और बढ़ जाता है जब विश्वासकी कमी हममें आती है, जब नैराश्य हमारे सामने आता है और जब हम देखते हैं

कि जो बड़ी-बड़ी बातें हम कर रहे थे वे अवास्तविक बन रही हैं और हमारा जीवन भिन्न दिशाकी ओर जा रहा है। फिर भी मेरा विश्वास है कि कदाचित यह समय शीघ्र ही व्यतीत हो जायगा। यह ईश्वरीय दूत अपने जीवन-कालमें जैसा महान रहा है अपनी मृत्युसे उससे भी अधिक महान हो गया है।

हम सदा उसके लिए शोक करेंगे, क्योंकि हम मनुष्य ही हैं और अपने प्रिय स्वामीको भूल नहीं सकते, पर मैं जानता हूँ कि वे यह नहीं चाहते थे कि हम उनके लिये शोक करें। उनकी आँखोंमें आँसू कभी उनके अत्यन्त प्रिय और निकटवर्तीके चले जाने पर भी नहीं आया, केवल उसके महान कार्य करनेकी दृढ़ता अवश्य आयी। अतः हम यदि उनके लिए केवल शोक मनायेंगे तो वे अप्रसन्न होंगे। हमारा उनके प्रति ठीक सम्मान यही होगा कि जिस कार्यको इतनी दूर तक लाकर वे बिना पूरा किए छोड़ गए हैं उसे पूरा करनेकी हम प्रतिज्ञा करें और उसे पूरा करनेमें अपना जीवन समर्पित कर दें।